अंक 1 : अक्टूबर, 2021
चौ-मासिक, बेंगलूरु

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी

लर्निंग कर्व

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

नागरिकता के लिए शिक्षा

सम्पादन समिति

प्रेमा रघुनाथ, मुख्य सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

शेफाली त्रिपाठी मेहता, सह-सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
shefali.mehta@azimpremjifoundation.org

चन्द्रिका मुरलीधर
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
chandrika@azimpremjifoundation.org

निमरत खण्डपुर
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
nimrat.kaur@azimpremjifoundation.org

सम्पादकीय कार्यालय
सम्पादक, अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
Phone : 080-6614 4900
Fax : 080-6614 4900
Email: publications@apu.edu.in
Website: www.azimpremjiuniversity.edu.in

शोभा लोकनाथन कवूरी
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
shobh.kavoori@azimpremjifoundation.org

सलाहकार
हृदय कान्त दीवान, सचिन मुले
एस. गिरिधर, उमाशंकर पेरिओडी
विनोद अब्राहम

प्रकाशन समन्वयक
शहनाज़ बेगम

हिन्दी अनुवाद
नलिनी रावल, रमणीक मोहन, सात्विका ओहरी

अनुवाद पुनरीक्षण :
भरत त्रिपाठी, लोकेश मालती प्रकाश (एकलव्य फ़ाउण्डेशन)

कॉपी एडिटर (हिन्दी)
कविता तिवारी, स्वाति भदौरिया एवं
पारुल सोनी, सीमा, अभिषेक दुबे (एकलव्य फ़ाउण्डेशन)

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

आवरण चित्र
अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली,उत्तरकाशी
चित्र सौजन्य : सौरभ सोम

डिज़ाइन
Banyan Tree
98458 64765

हिन्दी अंक लेआउट एवं मुद्रक
आदर्श प्रा.लि. भोपाल
+91-755-2555442

कृपया ध्यान दें :
इस अंक में प्रकाशित लेख मूलत: अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व (अँग्रेज़ी) अंक 9, अप्रैल, 2021 के लेखों के हिन्दी अनुवाद हैं। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

'' अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक-अध्यापकों, स्कूल प्रमुख, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर-सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोजमर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।''

सम्पादक की ओर से

वे कौन-सी बातें हैं जो एक अच्छे नागरिक का निर्माण करती हैं, विशेष रूप से एक ऐसे देश में, जिसकी सभ्यता भले ही अति प्राचीन हो, पर जो औपनिवेशिक शासन की राख से उठकर एक अमरपक्षी (फ़ीनिक्स) की तरह केवल सात दशक पहले ही फिर जी उठा हो?

सामान्य रूप से, सभी देश अच्छी नागरिकता की परिभाषा देते हुए यही कहते हैं कि अपने राष्ट्रध्वज, एवं उन सभी बातों के प्रति निष्ठा रखना जिनका प्रतिनिधित्व राष्ट्रध्वज करता है, राज्य के तंत्र के प्रति वफ़ादार होना, दुश्मन के हमले के खिलाफ़ देश की रक्षा करने के लिए तत्पर रहना और मानवीय होना – ये सभी बातें अच्छी नागरिकता की निशानी हैं। एक अच्छे भारतीय नागरिक के लिए भी यह सब करना आवश्यक है। वफ़ादारी और देशभक्ति की प्रतिबद्धता के बदले में, नागरिकों को समानता, न्याय, बन्धुत्व और स्वतंत्रता के अधिकार दिए जाते हैं।

लेकिन यदि हम न्याय, समानता, स्वतंत्रता और बन्धुत्व को प्राथमिकता न दें तो भारत में जाति, वर्ग, लिंग और धर्म के कई अन्तर्निहित विभाजन हमें फिर से अलग कर सकते हैं। आधुनिक नागरिकता के विचारों का प्रारम्भ 6 नवम्बर, 1949 को हुआ, जब बी आर अम्बेडकर की अध्यक्षता में भारतीयों के एक दूरदर्शी समूह ने हमें एक 'नए' देश का संविधान दिया। इससे हमें न्याय, समानता, स्वतंत्रता और बन्धुत्व के विचारों का उपहार मिला। ये चारों बहुत ही उदात्त आदर्श हैं जो एक ऐसे गतिशील समाज बनाने की क्षमता रखते हैं, जो शायद समय के साथ बदलता रहे, लेकिन हमेशा बेहतरी के लिए।

भारतीय स्वतंत्रता की घोषणा के साथ शायद ऐसा पहली बार हुआ कि हम, नागरिक के रूप में, स्पष्ट रूप से यह व्यक्त कर पाए कि एक सभ्य समाज को कैसा होना चाहिए और यह कैसा हो सकता है। यह बात विदेशी शासन से मिली स्वतंत्रता के प्रति हमारी पुष्टि थी। साथ ही इस तथ्य की स्वीकृति भी कि ये चार आदर्श एक राष्ट्र के रूप में हमारी प्रगति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले थे। नागरिकता के सिद्धान्त में यह शक्ति है कि वह सबकी बेहतरी के लिए लोगों को एकजुट कर सकता है।

नागरिकता की शिक्षा का आधार यह है कि कुछ अपरिहार्य व्यक्तिगत अधिकारों (जैसे कि धर्म का, निवास-स्थान का चयन) की रक्षा करने के साथ-साथ भविष्य की पीढ़ियों में इन महान आदर्शों को कैसे विकसित किया जाए, ताकि नवजात राष्ट्र प्रगति कर सके और वैसा बन सके जैसा भारतीय चाहते थे। दूसरों का सम्मान करना, उनकी पसन्द और जीवन के तौर-तरीक़ों का आदर करना, साथी नागरिकों के बारे में सोचना, साथ काम करना, प्रत्येक व्यक्ति को महत्त्व देना मुश्किल काम हैं। अतः ख़ुद को और दूसरों को, यह सिखाना और याद दिलाना ज़रूरी हो जाता है कि शिक्षा के अन्तर्निहित सिद्धान्त का सार इस एक मान्यता में दिया जा सकता है – दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करना जैसा हम स्वयं के साथ चाहते हैं।

यह स्पष्ट है कि नागरिकता जैसी एक सर्वव्यापी अवधारणा को वृहत स्तर पर नहीं सिखाया जा सकता। इसे परिवार के साथ शुरू करना होगा जो समाज की सबसे छोटी लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई है। फिर इसे मित्रों, अपरिचित व्यक्तियों तक और अन्त में समाज और देश में संकेन्द्रीय रूप से फैलाना होता है। यही कारण है कि स्कूलों को हमारे बच्चों पर प्रभाव डालने के लिए सबसे अच्छी जगह माना जाता है, विशेष रूप से प्राथमिक वर्षों में। हमारे बच्चे, जो कि जन्म से ही इस देश के नागरिक हैं, स्कूलों में यह सीख सकते हैं कि वे 'जो बदलाव देखना चाहते हैं, उसे चरितार्थ करने के लिए' उनका रवैया कैसा होना चाहिए। अपने आप को एक नागरिक कहना केवल

पासपोर्ट रखने या मतदान के अधिकार का दावा करने से कहीं बढ़ कर है।

जब हमने नागरिकता के लिए शिक्षा को इस अंक के विषय के रूप में चुना, तो हमें इस बात की पर्याप्त जानकारी नहीं थी कि हमारे बच्चों के दिमाग़ में इन सिद्धान्तों को बैठाने के लिए देश भर के व्यक्तियों, शिक्षकों और संगठनों ने कितनी गहराई से और कितने विस्तृत रूप से सोचा है। इस अंक के सभी लेख यह दर्शाते हैं कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निहित विचारों को बच्चों के दिमाग़ में बैठाने और उनका पोषण करने के लिए कक्षाओं के भीतर कितनी ईमानदारी के साथ प्रयास किए गए हैं। ये लेख कई दृष्टिकोण सामने लेकर आए हैं – फ़ोकस वाले लेख नागरिकता की अवधारणा को परिभाषित करने के साथ, उन पाठ्यपुस्तकों की जाँच करते हैं जो इस अवधारणा को आगे बढ़ाती हैं। *आवाज़ें* वाले भाग में शिक्षकों ने स्कूल में होने वाली उन घटनाओं का वर्णन किया है जिनमें समानता, बन्धुत्व, स्वतंत्रता और न्याय के आदर्शों का वास्तव में प्रदर्शन किया गया। ऐसे प्रयोग हुए हैं जिनके परिणामस्वरूप बच्चों को उनके अपने परिवेशों में अपनी आवाज़ें मिली हैं, और उम्मीद है कि इससे एक जानकार और सुविज्ञ वयस्क नागरिक वर्ग सामने आएगा। लेखकों ने इस बात का वर्णन भी किया है कि उनके संगठनों ने बच्चों और शिक्षकों के साथ किस प्रकार विविध तरीक़ों से काम किया है, जैसे कि रंगमंच, कार्यशालाएँ, कहानी सुनाना। इन गतिविधियों के माध्यम से ऐसी आदतें और सोचने के तरीक़े विकसित करने के अवसर पैदा किए गए जिनके नतीजे में सभी का भला चाहने वाला विचारशील और ज़िम्मेदार व्यवहार पनप सके।

हम आशा करते हैं कि इस अंक में प्रकट किए गए विचार उपयोगी होंगे और देश भर में कक्षाओं में उनका उपयोग किया जाएगा।

कृपया नीचे दी गई ईमेल आईडी पर अपना फ़ीडबैक भेजें।

प्रेमा रघुनाथ
मुख्य सम्पादक
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

अनुवाद : नलिनी रावल

इस अंक में

नागरिकता की विभिन्न संस्कृतियाँ : किसका शिक्षण हो? 01
अमन मदान

नागरिकता की शिक्षा : तरीक़ों पर सोच-विचार 06
अरविन्द सरदाना

नागरिकता के आदर्श 11
हृदय कान्त दीवान

पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से नागरिकता का निर्माण 17
रूपमंजरी हेगड़े

स्कूली कामकाज से लोकतंत्र के बारे में सीखना 24
अभिलाषा अवस्थी

अपनेपन की भावना से आती है ज़िम्मेदारी 29
अर्चना आर

विज्ञान की कक्षा में लोकतंत्र 33
चन्द्रिका मुरलीधर

नागरिकता-शिक्षा के माध्यम से वास्तविक जीवन की चुनौतियों का समाधान 36
नेहा यादव और अस्मिता तिवारी

आवाज़ें

समावेशन : एक मूल अधिकार 40
आदिवेप्पा कुरी

बच्चों को ज़िम्मेदारी सौंपना 42
अनिल एस अंगडिकि

विद्यालय में नागरिक : अभ्यास और चिन्तन 45
अनिल औष और संजय डेनियल

गतिविधियों के माध्यम से संवैधानिक मूल्यों को सीखना 47
अंकित शुक्ला

कक्षा में संविधान की प्रस्तावना 49
अस्मिता तिवारी

मंत्रिमण्डल के माध्यम से नागरिकता की शिक्षा 52
गुरुराजराव के

लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार 55
नन्दा शर्मा

इस अंक में

महामारी के काल में नागरिकता 59
प्रणीत गुडलडन और संकल्प कोरिपल्ली

दूसरों को सशक्त बनाना 61
प्रशान्त मिश्रा

बच्चों में नागरिकता के मूल्य विकसित करना 64
राधिका राजनारायणन

समाज को लौटाना 67
समीरा वास

स्कूल एक समावेशी स्थान के रूप में : मेरे अनुभव 69
सुहैल हमीद

रंगमंच के माध्यम से गांधीवादी मूल्यों की खोज 72
ऊषा प्रीसिला एम्ब्रोस

बच्चे विद्यालय की संस्कृति अपना लेते हैं 75
विजयाश्री पी एस

स्कूल : समाज का एक लघु रूप 77
पूजा विश्नोई

संवेदनशील बनाने के लिए कहानियों का उपयोग : PARI अनुभव 83
प्रीति डेविड

कनिष्ठ नागरिकों का निर्माण करना : पाँच सामान्य रास्ते 87
प्रिया कृष्णमूर्ति

कहानियों के माध्यम से सक्रिय नागरिकता का विकास करना 92
ऋचा पाण्डे

स्वयं परिवर्तन के वाहक बनें : सीखने का एक अभियान 99
रोनिता शर्मा और शिल्पी हांडा

नाटक के माध्यम से लोकतंत्र की खोज 106
संयुक्ता साहा और देविका बेदी

स्कूल में सक्रिय नागरिकता 110
सुमन जोशी

रचनात्मक कार्यशालाओं के माध्यम से नागरिकता 113
उमाशंकर पेरिओडी

नागरिकता की विभिन्न संस्कृतियाँ | किसका शिक्षण हो?

अमन मदान

नागरिकता से सम्बद्ध शिक्षा की विषयवस्तु और लक्ष्य क्या हों? यह कोई सादा-सरल सवाल नहीं है। इसका जवाब कई तरह से दिया जा सकता है। अलग-अलग सम्भव दृष्टिकोणों के बीच गम्भीर असहमतियाँ भी हो सकती हैं। और यह सवाल ख़तरनाक भी है। लेकिन अगर स्कूलों और शिक्षकों को अपने समयकाल में प्रासंगिक रहना है और अपने विद्यार्थियों को कुछ सार्थक, अर्थपूर्ण शिक्षा देनी है, तो उन्हें यह सवाल उठाना ही होगा।

पहली बात तो यह है कि क्या हम नागरिकता को देखने का वह संकुचित नज़रिया अपनाएँ, जिसका ध्यान इस पर केन्द्रित होगा कि राज्य के प्रति हमारा क्या व्यवहार हो - मिसाल के तौर पर, क्या बच्चे राज्य द्वारा कही गई बात का पालन करना सीखें? या फिर हम नागरिकता से सम्बद्ध एक अधिक व्यापक नज़रिया अपनाएँ, जिसके तहत इसका अर्थ केवल राज्य के प्रति हमारे व्यवहार तक सीमित न हो बल्कि सम्पूर्ण सार्वजनिक संसार के प्रति हमारे व्यवहार के बारे में हो? मिसाल के तौर पर – अपने स्थानीय आवासीय कल्याण संघ (रेज़िडेंट्स वेल्फ़ेयर असोसिएशन) में और सड़क पर हमारा व्यवहार कैसा हो; ग्लोबल वार्मिंग, साम्प्रदायिक सौहार्द आदि जैसे सार्वजनिक मुद्दों के सन्दर्भ में हमारा नज़रिया और व्यवहार कैसा हो? नागरिकता से जुड़ा यह परिप्रेक्ष्य केवल सरकार और शासन से सम्बद्ध परिप्रेक्ष्य की बनिस्बत बहुत बड़ा है। शिक्षा-क्षेत्र से जुड़े अधिकतर लोगों से अगर ज़ोर देकर पूछा जाए कि वे इनमें से नागरिकता के किस रूप को चुनेंगे, तो ज़्यादा इमकान इस बात का है कि वे अधिक व्यापक और बड़े दृष्टिकोण का चुनाव करेंगे। बच्चों को स्थानीय समुदाय का सक्रिय और ज़िम्मेदार सदस्य बनना तो सीखना ही चाहिए - और यह समुदाय केवल पंचायत या नगरपालिका तो नहीं है। यह चुनाव करना आसान है। मगर अन्य सन्दर्भों में चुनाव करना इतना आसान नहीं है।

यह लेख कुछ ऐसे परस्पर-विरोधी विचारों के बारे में है जिनसे मेरा सामना क़रीब दो दशक पहले मध्य भारत के एक तालुका में हुआ था (मदान 2003, 2005)। सार्वजनिक संसार में कैसा व्यवहार हो, इससे सम्बद्ध ये विचार अब भी परेशान करते हैं। मैं तब एकलव्य संस्था में काम करता था और होशंगाबाद, मध्य प्रदेश में रहता था जहाँ मेरा निवास तीन साल तक रहा। यहीं पर ठिकाना बनाते हुए हमने मानव जाति विज्ञान पर आधारित स्थानीय अध्ययन किया। होशंगाबाद और उसके निकट के तीन गाँवों का यह अध्ययन आचार-व्यवहार, धारणाओं, मान्यताओं, संस्कारों आदि के रूप में प्रतिबिम्बित नागरिकता की संस्कृतियों से सम्बद्ध था। हम यहाँ पुस्तकालय भी चलाते थे। देखने में आया कि सार्वजनिक क्षेत्र में जीवन के प्रति विभिन्न सम्भावित नज़रियों और रवैयों को लेकर गहरे विभाजन थे। इसी तरह, स्कूलों में नागरिकता की शिक्षा का मुद्दा भी अलग-अलग सम्भव पथों में विभाजित दिखाई देता है। वहाँ किस तरह की नागरिकता की शिक्षा दी जाए, इस बारे में हमें अलग-अलग सम्भावित पथों में से एक को चुनना होता है।

विवेकशील और समतावादी संविधान

नागरिकता को लेकर विभाजन रेखा के एक ओर बी.आर. अम्बेडकर की अगुवाई में समिति द्वारा लिखा गया भारतीय संविधान है। हमारा संविधान वह बुनियादी ढाँचा प्रदान करता है जिसका पालन उपनिवेशीय शासन के बाद के भारतीय राज्य ने किया। इतना ही नहीं, यह सार्वजनिक जीवन में किए जाने वाले व्यवहार से सम्बद्ध उस संस्कृति और आचार-संहिता की भी शानदार मिसाल है जिसका प्रतिनिधित्व हमारा आज़ादी का संघर्ष करता था। हमारे संविधान के मूल में मौजूद संस्कृति और मूल्यों ने बहुत से व्यक्तियों, ग़ैर-सरकारी संस्थाओं, सरकार और निजी कम्पनियों की गतिविधियों को प्रभावित किया है। उनके केन्द्र में यह विचार है कि सभी इन्सान एक समान हैं और हमें एक गहरे स्तर पर हर इन्सान को समान रूप से देखना चाहिए। समता का यह विचार पश्चिमी लोकतंत्रों के विकास से और उपनिषदों के कुछ हिस्सों, इस्लाम, सिख तथा बौद्ध धर्मों एवं अन्य सशक्त सांस्कृतिक प्रभावों से भी उपजा है। इस तहज़ीब का मानना है कि इस मुल्क के सभी लोग अन्ततः एक समान ही हैं। सामाजिक स्तर पर उन्हें प्रदान की गई पहचानों - जैसे कि उनका धर्म, जाति और लिंग – का असल में कुछ महत्त्व नहीं है।

> सरकार द्वारा किसी गाँव में खोला गया प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र सबके लिए होता है और यह मानकर चला जाता है कि यहाँ आने वाले किसी भी व्यक्ति के साथ उसकी सामाजिक पहचान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा। इस केन्द्र पर इलाज के लिए आए किसी भी इन्सान की जाति, धर्म और लिंग को कुछ भी महत्त्व नहीं दिया जाना

चाहिए। एक ही तरह का भेदभाव स्वीकृत होगा - कमज़ोर की मदद के लिए किया गया सकारात्मक भेदभाव। मिसाल के तौर पर, जब सरकार हैण्डपम्प लगाती है तो निर्देश दिए जाते हैं कि पहले ये उन मुहल्लों में लगाए जाएँ जहाँ अब से पहले एक भी हैण्डपम्प नहीं है। इसके अलावा यह निर्देश भी हो सकता है कि ये अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के मुहल्लों में लगाए जाएँ क्योंकि इनके पास कुओं और हैण्डपम्प के लिए आमतौर पर संसाधन नहीं होते। ज़ाहिर तौर पर यह अपवाद लग सकता है मगर फिर भी इसके पीछे की भावना यही है कि सब बराबर हों। समता का तक़ाज़ा यह है कि जिनके पास संसाधन नहीं हैं, उन्हें बाक़ियों के साथ बराबरी के स्तर पर लाया जाए।

बाज़ारों में हुई वृद्धि और दूर-दराज़ इलाक़ों तक भारतीय राज्य की पहुँच और पैठ की वजह से विवेकशीलता और समता की संस्कृति को कई जगह बहुत बढ़ावा मिला है, जिनमें होशंगाबाद भी शामिल है। यह मानते हुए कि विवेकशीलता और समता की इस संस्कृति के तहत सब एक समान हैं, सच यह भी है कि बाज़ार और भारतीय राज्य की पहुँच के चलते कई जगह व्यवहार में ग़ैर-बराबरी बढ़ रही है। लेकिन फ़िलहाल मैं इस सवाल को अलग रख रहा हूँ। असल बात यह है कि ऐसे क्षेत्र में, जहाँ जाति और लिंग से सम्बद्ध ग़ैर-बराबरी बहुत गहरी जड़ें लिए हुए है, बाज़ार तथा राज्य इस रूप में महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ हैं कि ये अधिक अन्तर-सम्बद्ध संस्कृतियों और सोचने के तौर-तरीक़ों को बढ़ावा देती हैं। इनके विकास से विवेकशीलता और सार्वभौमिकता तथा सर्वहित की भावना को विस्तार मिला है, फिर चाहे मौजूदा ग़ैर-बराबरी की वजह से यह अक्सर कमज़ोर पड़ जाती है। जब हम अपने देश में विशाल स्तर पर हो रहे सामाजिक परिवर्तन को देखते हैं तो लगता है कि नागरिकता की शिक्षा प्रदान करने का अर्थ होगा बराबरी, विवेकशीलता, सार्वभौमिकता, स्वतंत्रता आदि की संस्कृति की शिक्षा देना, और ये सभी मूल्य हमारे संविधान में स्थापित हैं।

समानता नहीं, दबदबा

संविधान और ऊपर ज़िक्र में आई धार्मिक धाराएँ मानवता के एक होने की बात करते हैं लेकिन इनका सामना समाज की ऐसी सच्चाई से है जो समानता को अस्वीकार करती है और नकारती है। जब मैं होशंगाबाद में था, तो वहाँ जाति व्यवस्था मज़बूत थी। अन्तर्जातीय विवाह दुर्लभ थे। जाति व्यवस्था का आधार समानता नहीं, असमानता के मूल सिद्धान्त में होता है। यह व्यवस्था मानती है कि अलग-अलग सामाजिक समूहों के लिए अलग-अलग नियम होने चाहिए - सभी के लिए एक से नियम नहीं होने चाहिए। यह मान्यता भी है कि कुछ लोग अन्य के मुक़ाबले अधिक आदर और संसाधनों के अधिकारी हैं। जानकारी के आधार पर कहा जा सकता है कि अब भी बहुत कुछ नहीं बदला है।

उच्च जातियों का मज़बूत विश्वास था कि वे ही श्रेष्ठ हैं। उनके विश्वास को इस बात से भी समर्थन मिला कि वे इस मूलत: कृषि आधारित इलाक़े के सबसे बड़े भू-स्वामी भी थे। सरकारी कर्मचारियों में भी सबसे बड़ी संख्या उन्हीं की थी क्योंकि शिक्षा प्राप्त करने का मौक़ा भी पहले उन्हें ही मिला था। वे बड़े-से-बड़े व्यापारों को और अधिकतर राजनैतिक ओहदों को भी नियंत्रित करते थे। मिसाल के तौर पर, एक विशेष ब्राह्मण परिवार था जो एक हज़ार एकड़ से अधिक ज़मीन का मालिक था। इस परिवार का एक सदस्य स्थानीय लोकसभा सीट से प्रत्याशी रह चुका था, दूसरा एमएलए था, तीसरा ज़िला परिषद का मुखिया और चौथा मध्य प्रदेश सरकार का मुख्य सचिव था। सार्वजनिक सत्ता प्रमुख रूप से पुरुषों के हाथ थी और आधिकारिक ओहदों पर जो चन्द महिलाएँ थीं उनकी हँसी उड़ाई जाती थी। निम्न-स्तरीय अन्य पिछड़ी जातियाँ धीरे-धीरे उभर रही थीं और अपनी संख्या के बल पर एक राजनैतिक ताक़त के तौर पर संगठित होने की कोशिश में थीं। लेकिन उच्च जातियों की पैठ बहुत मज़बूत और गहरी थी जिनसे इन जातियों को दो-चार होना पड़ता था।

जाति की संस्कृति सामाजिक जीवन के कई कोनों तक फैली थी। मांस के सेवन को सार्वजनिक तौर पर नीची नज़र से देखा जाता था। किसी अजनबी से मुलाक़ात होने पर अगर उसके उपनाम से उसकी जाति के बारे में कुछ पता न चले तो सबसे पहले यही जानकारी ली जाती थी। नगर के 'उच्च' जातियों के मुहल्लों में मुसलमानों के लिए और 'उच्च' जातियों से इतर जाति के लोगों के लिए किराए पर मकान मिल पाना बहुत मुश्किल था। संविधान की भावना यहाँ जाति और वर्ग की व्यवस्था द्वारा कुचल दी गई थी। सार्वजनिक जीवन की संस्कृति अपने से श्रेष्ठ सामाजिक रुतबे वालों के प्रति सम्मान की और कम सामाजिक रुतबे वालों पर दबदबे और हावी रहने की थी।

सत्ता और राजनीति की संरचना का रूप-आकार जाति, धन-दौलत और व्यवसाय पर टिका था। सरकार के कर्मचारियों, ख़ासतौर से कलेक्टरेट के अधिकारियों को सभी का सम्मान मिलता था। राजनीतिज्ञों और ठेकेदारों का एक समूह स्थानीय राज्य सरकार के कर्मचारियों के साथ बहुत निकटता से इस तरह काम करता था जिससे उन्हें फ़ायदा हो। संविधान के आदर्श अप्रासंगिक हो गए थे। लोग सरकारी तंत्र में इसलिए भर्ती होते या उसके साथ काम करते थे क्योंकि यह सत्ता के समीप जाने का एक क़दम था - न कि इसलिए कि वे सबके

लिए समता, न्याय या निष्पक्षता चाहते थे। सरकारी नौकरी का पीछा इसलिए नहीं किया जाता था कि यह समानता क़ायम करने और सबके लिए न्याय मुहैया करवाने का तरीक़ा था बल्कि इसलिए, कि नौकरी मिलने के बाद आप को 'अधिक परिश्रम नहीं करना होगा'।

अधिकतर सार्वजनिक गतिविधियाँ लिंग, जाति और समाज में बनाए नेटवर्क के आधार पर होती थीं। अपने काम करवाने हों, तो इन नेटवर्क का पोषण ज़रूरी था। इन्हीं के माध्यम से आप पैसे और ओहदे का इस्तेमाल करते हुए बहला-फुसला कर, घूस देकर या धमकी देकर अपने लक्ष्यों तक पहुँच सकते थे। यह मूल रूप से पुरुषों के नेटवर्क के माध्यम से किया जाता था – महिलाओं को इनसे साफ़तौर पर बाहर रखा जाता था। सत्ताधिकार में भिन्नताएँ तथा आदर-सम्मान के श्रेणीबद्ध अनुक्रम सबको साफ़तौर पर दिखाई देते थे। सामाजिक जीवन तबक़ों में बँटा था और व्यक्ति अपने तबक़े के लिए काम करता था न कि संविधान द्वारा अनुशंसित सार्वभौमिक बेहतरी के लिए। जब किसी पंचायत को गाँव की सड़कों की बेहतरी के लिए पैसा मिलता था, तो पहले सरपंच के घर के आगे की सड़क या उसके जाति के लोगों के मुहल्ले की सड़क को ठीक किया जाता था।

समाज के इस स्वरूप से लोग नाख़ुश थे और इसका व्यापक विरोध भी था। सरकार में अविश्वास और निराशावाद व्यापक स्तर पर मौजूद था। सामाजिक पायदान के नीचे के स्तरों पर मौजूद लोग, जिनमें युवा, महिलाएँ, दलित, आदिवासी तथा निम्न स्तर पर स्थित अन्य पिछड़ी जातियों के लोग शामिल थे, मुझसे स्वतंत्रता और समानता के बारे में सबसे अधिक जज़्बे के साथ बात करते थे। लेकिन आप कर क्या सकते थे? न्याय और निष्पक्षता पर आधारित सार्वजनिक जीवन की वैकल्पिक दृष्टि के अभाव में उदासीन हो जाना और किसी तरह इस व्यवस्था के साथ काम करने की कोशिश करते रहना स्वाभाविक-सा हो गया था।

स्थानीय श्रेणीबद्ध व्यवस्था को बनाए रखने में भय, उदासीनता और सांस्कृतिक प्रतीक-चिह्नों का इस्तेमाल किया जाता था। ठेकेदारों, राजनीतिज्ञों और सरकारी अधिकारियों के बीच साँठ-गाँठ को उजागर करने की कोशिश कर रहे पत्रकारों के साथ मार-पीट की जाती थी। ताक़तवर लोगों को असहमति नागवार थी। उन्हें लगता था कि उनसे किसी भी तरह की असहमति राजनीतिक विरोध का प्रतीक थी और इससे उन्हें सार्वजनिक स्तर पर बेइज़्ज़ती का सामना करना पड़ सकता था। असहमति जताने वालों को सरदर्द माना जाता था और उन्हें किसी भी तरह चुप करवाना ज़रूरी समझा जाता था। स्थानीय वार्ड सदस्य से सार्वजनिक तौर पर सवाल किए जाने का अर्थ था कि जब तक वह व्यक्ति सत्ता में था, तब तक आप सरकार की ओर से किसी भी काम में मदद की उम्मीद नहीं रख सकते थे। वह आपके सभी प्रस्तावों का जमकर विरोध ही करेगा या (दुर्लभ हालात में) करेगी, फिर चाहे आपके प्रस्ताव कितने ही बढ़िया क्यों न हों। सभी धार्मिक और सांस्कृतिक त्यौहारों पर ताक़तवर लोगों को सम्मानित करना और उनकी इज़्ज़त करना एक महत्त्वपूर्ण एजेण्डा रहता था। जैसा कि एकलव्य को बड़ी क़ीमत चुका कर समझ में आया, कि विभिन्न सार्वजनिक मौक़ों पर उन्हें सम्मानित न करने का अर्थ था कि आपको घमण्डी समझा जाएगा और आपको आपकी जगह दिखा दी जाएगी। ताक़तवर लोगों के दाएँ बाज़ू रहना हमेशा ही बहुत महत्त्वपूर्ण था।

मैंने बहुत लोगों से पूछा कि वे और उन जैसे ही अन्य कई लोग सार्वजनिक, सामुदायिक काम क्यों करते थे? वे पानी का कुआँ खोदने में या कोई धार्मिक त्यौहार मनाने में या किसी अच्छे कार्य के लिए चन्दा देकर मदद क्यों करते थे? लगभग हमेशा यह जवाब मिलता था - ऐसा वे इसलिए करते थे ताकि वे उस कार्य को अंजाम देने वाले अग्रणी व्यक्ति की नज़रों में आ पाएँ या उसकी बुरी नज़र से बचे रह पाएँ। यह कम ही होता था कि कोई अच्छा काम सिर्फ़ इसलिए किया जा रहा हो कि वह अच्छा है। आगे चलकर हम इस बारे में और अधिक बात करेंगे।

इस संस्कृति में तथा दूसरी ओर संविधान के पीछे की संस्कृति में घोर अन्तर है। संविधान की संस्कृति का बल इस बात पर है कि सरकार की गतिविधियाँ समानता और न्याय जैसे सार्वभौमिक मूल्यों की सेवा में हों। इसलिए, राज्य द्वारा बनाए जाने वाले नियम दलित मुहल्ले में हैण्डपम्प के लिए धन के आवटंन जैसी गतिविधियों और कार्यों की तर्ज़ पर होंगे। लेकिन ऐसे कार्यों में सम्मिलित लोग इस बात को बिल्कुल सामान्य मानते थे कि वे इसमें से अपने लिए फ़ायदा उठा सकें। मिसाल के तौर पर, अपना लाभ ऐंठने के लिए वे काम में रोड़ा अटकाते या उसमें देरी करते थे। काम करवाने के लिए उन तक पहुँच बनानी पड़ती थी और यह उनकी जाति के लोगों के माध्यम से या अन्य सम्पर्कों के ज़रिए किया जाता था। हैण्डपम्प के लगने से पहले, अलग-अलग स्तर पर 20 से 30 प्रतिशत 'कट' या 'कमिशन' उन तक पहुँचाया जाना तो सामान्य बात थी।

इन दो तरह की संस्कृतियों के बीच का टकराव कई स्तरों पर काम करता था। एकलव्य के सामाजिक-अध्ययन शिक्षण कार्यक्रम की पाठ्यपुस्तकों में संविधान द्वारा सभी जन के लिए सुनिश्चित किए गए अधिकारों के बारे में उत्साहपूर्वक पढ़ाया जाता था। इतनी ही शिद्दत के साथ यह भी पढ़ाया जाता था कि अपने अधिकारों को बचाए रखने के लिए हम क्या कुछ कर सकते हैं। इस शिक्षण कार्यक्रम प्रोग्राम से सम्बद्ध सरकारी स्कूलों के शिक्षकों पर इन पाठ्यपुस्तकों का गहरा प्रभाव पड़ता

था। लेकिन फिर भी, इनमें से कुछ का कहना था, "अगर हम इन पाठ्यपुस्तकों को ज्यों-का-त्यों पढ़ाते हैं तो अगले ही दिन सरपंच के लठैत स्कूल में आ खड़े होंगे।" वे पाठ्यपुस्तक के उन हिस्सों को उजागर किए बिना काम चलाते थे, जिन्हें पढ़ाने से उत्पन्न होने वाले नतीजों से वे डरते थे।

समुदाय प्रेम

एक ओर संविधान की विवेकशील समानता और न्याय की बात थी तो दूसरी ओर सार्वजनिक क्षेत्र में स्थानीय जीवन के तौर-तरीक़े थे – इन दोनों के बीच बहुत बड़ी खाई थी। लेकिन सार्वजनिक जीवन के स्थानीय तौर-तरीक़ों में अन्य ध्वनियाँ भी थीं। सार्वजनिक स्थानों पर लोगों का व्यवहार एक ख़ास तरह का ही क्यों होता था और वे कौन थे जिन्हें शान्त-सन्तुष्ट रखने की कोशिश की जाती थी, इन बातों के बारे में पूछताछ करते हुए मैं कई अपवादों तक पहुँचा। इनमें से एक, अन्य पिछड़ी जातियों का व्यक्ति था जिसने नर्मदा नदी के किनारे घाट-निर्माण के काम की अगुवाई की थी। यहाँ के निवासी सभी धर्मों से सम्बद्ध लोगों के सांस्कृतिक जीवन में इस नदी का एक विशेष स्थान है। स्थानीय विश्वास के मुताबिक़ नर्मदा इतनी पवित्र है कि उसे देखने भर से आप पापमुक्त हो जाते हैं। लोग इस स्थानीय मान्यता के बारे में बहुत ख़ुशी से बताते ही नहीं, बारम्बार इसका ज़िक्र करते हैं। वे इस बात की ओर भी ध्यान दिलाते हैं कि इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आप को गंगा स्नान के लिए जाना पड़ता है – दूसरे शब्दों में कहें तो नर्मदा के रहते उन्हें गंगा स्नान की ज़रूरत नहीं है।

नदी के किनारे-किनारे कुछ स्थानों पर बने इन घाटों के लिए या तो अमीर लोगों ने चन्दा दिया है या फिर ये उन राजनीतिज्ञों के प्रभाव से बने हैं जो यह दिखाना चाहते हैं कि वे कितने अच्छे हैं, जबकि वे निर्माण-सामग्री में से 20 प्रतिशत धन अपनी जेब में डाल रहे होते हैं। लेकिन जिस घाट की बात मैं साझा करना चाहता हूँ, वह एक ऐसे पूर्व नशेड़ी के नेतृत्व में बना था जो कभी किसी काम का नहीं रहा था। उसने मुझे जो कहानी सुनाई उसके मुताबिक़ वह और उसके नशाख़ोर दोस्त नदी किनारे के एक मोड़ पर बैठ नशा किया करते थे। पानी में कई गोल चट्टानें बिखरी रहती थीं। एक दिन उन्होंने एक दलित महिला को महज़ इसलिए डाँट खाते देखा कि वह स्नान के लिए वहाँ आई एक उच्च जाति महिला के रास्ते में आ गई थी। दलित महिला को अपने लिए किसी स्थान का चुनाव करने के लिए चट्टानों के ऊपर से जाते हुए काफ़ी दिक़्क़त पेश आ रही थी। इस पर उन नशाख़ोरों ने एक दिन तय करके उन चट्टानों को थोड़ा व्यवस्थित कर दिया। फिर अगले दिन थोड़ा और, उसके अगले दिन और करते-करते कई दिन लगाए। धीरे-धीरे लोगों को उनके इस काम के बारे में जानकारी मिली और वे उनकी मदद के लिए आने लगे। किसी ने एक कट्टा सीमेंट दिया, तो किसी और ने उसका घोल बना कर लगाने में मदद की। कुछ मुसलमान भी सहयोग के लिए आगे आए। इन लोगों को मदद देने से किसी को कोई लाभ नहीं होने वाला था, न ही वे किसी को कुछ नुक़सान पहुँचा सकते थे। फिर भी, वह घाट बना और यह काम करते-करते उन नशाख़ोरों ने नशा करना भी छोड़ दिया।

यहाँ सार्वजनिक, साझा बेहतरी की भावना काम कर रही थी। लोग नि:स्वार्थ काम करने को प्रेरित हुए और अन्य लोगों ने भी उसे नि:स्वार्थ भावना से आगे बढ़ाने में सहयोग दिया। यह इसलिए मुमकिन हो पाया क्योंकि यह एक छोटा समुदाय था। बात जल्दी ही फैल गई। सब वहाँ आते थे और हो रहे काम को देखते थे। इस सार्वजनिक, जनहित-कार्य के केन्द्र में प्रेम था। योगदान देने वालों का कहना था कि वे यह सब कुछ नदी के लिए प्रेम के तहत कर रहे थे; घाट बनाने के विचार से प्रेरित होकर और उस समर्पण भाव के लिए कर रहे थे, जो सबके सामने साकार था। यह संविधान की विवेकशील समानता जैसी बात तो नहीं थी लेकिन यह जाति और वर्ग की श्रेणीबद्ध सत्ता-संरचना भी नहीं है। सामुदायिक प्रेम की संस्कृति उन विभाजनों का ही एक और पहलू है जिनके इर्द-गिर्द हम एक ख़ास तरह की नागरिकता बच्चों को सिखाना चाहते हैं।

निष्कर्ष

जिस तरह की नागरिकता हम अपने बच्चों को सिखाना चाहते हैं, उसकी बात शून्य में नहीं हो सकती। बच्चे कोरी स्लेट की तरह स्कूल में नहीं आते। वे एक ऐसी जटिल संस्कृति का हिस्सा हैं जिसमें कई तरह के धागे एक-दूसरे के साथ गुँथे हुए हैं। नागरिक मामलों के बारे में बच्चों के ज्ञान से सम्बद्ध अलेक्स एम. जॉर्ज के अध्ययन (2004) से स्पष्ट होता है कि प्राथमिक स्कूल के बच्चे इस बात को भली-भाँति जानते थे कि निकट भविष्य में होने वाले चुनावों के लिए पैसे की ताक़त का इस्तेमाल किया जा रहा है और पंचायत में कौन कितनी रिश्वत ले रहा है। नागरिकता के मॉडल के रूप में हम उनकी संस्कृति में मौजूद इन तीन सूत्रों में से किसे चुनना चाहेंगे – सार्वभौमिक समानता; पितृसत्तात्मक वर्गीय-जातीय व्यवस्था के अन्तर्गत बचाव की युक्ति; या फिर समुदाय में अच्छाई-भलाई के प्रति प्रेम? अन्य लोग शायद अन्य विकल्प चुनें लेकिन मैं हमारे संविधान की संस्कृति को बढ़ावा दूँगा और इसका मिलाप हमारे इर्द-गिर्द मौजूद नि:स्वार्थ अच्छाई के साथ करूँगा।

इसका शिक्षण कैसे हो, यह एक लम्बी और अलग कहानी है। यहाँ मैं इतना भर कहना चाहूँगा कि यह शिक्षण विद्यार्थियों के अपने जीवन-अनुभवों के यथार्थ को अनदेखा करके नहीं हो सकता। अगर हम इस यथार्थ की उपेक्षा करते हैं तो वे कक्षा के भीतर और बाहर के अन्तर की बात करेंगे – वे कहेंगे कि

हाँ, कक्षा में तो ऐसा किया जाता है लेकिन कक्षा के बाहर तो कुछ और होता है! स्कूलों में इस बारे में बात शुरू होनी चाहिए कि हमारे संसार में असल में क्या हो रहा है और क्यों हमें उसके बारे में चिन्तित होना चाहिए। अधिकतर स्कूलों और पाठ्यपुस्तकों को इस बाबत बात करने में परेशानी महसूस होती है – ऐसा करना उन्हें ख़तरनाक भी लगता है। लेकिन जब हम जातिवाद, वर्गीय असमानता और पितृसत्ता के बारे में बात करना शुरू करेंगे तभी विद्यार्थी यह देखना शुरू करेंगे कि क्यों संविधान की संस्कृति हमें इनसे निपटने का रास्ता दिखाती है। ज़रूरत है कि स्कूल इस बात पर चर्चा शुरू करें कि शोषण और दमन असल में कैसे होता है। यह एक ऐसी संस्कृति को रचने का पहला क़दम होगा जिसके चलते मौजूदा संस्कृति में बदलाव आएगा। आज़ादी के संघर्ष ने स्वतंत्रता को बस सामाजिक परिवर्तन की शुरुआत के रूप में देखा था। स्कूलों की ज़िम्मेदारी है कि वे इस सामाजिक परिवर्तन को लाने की प्रक्रिया में अपनी भूमिका निभाएँ।

References

George, Alex M. 2004. *Children's Perception of Sarkar: The Fallacies of Civics Teaching.* Contemporary Education Dialogue 1 (2): 228–57.

Madan, Amman. 2003. *Old and New Dilemmas in Indian Civic Education*, Economic and Political Weekly 38 (44): 4655–60.

Madan, Amman. 2005. *Between Love, Domination and Reason: Civic Education and Its 'Others' in Central India*, Contemporary Education Dialogue 2 (2): 170–92.

अमन मदान ने पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ से मानव-विज्ञान (ऐंथ्रोपॉलजी) का और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से समाजशास्त्र का अध्ययन किया। वे अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी में पढ़ाते हैं। इन दिनों शिक्षा एवं सामाजिक असमानता पर एक किताब लिखने की प्रक्रिया में हैं। हाल ही में उनकी पुस्तक एजुकेशन एंड मॉडर्निटी (शिक्षा और आधुनिकता) एकलव्य, भोपाल से प्रकाशित हुई है। उनसे amman.madan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** रमणीक मोहन

नागरिकता की शिक्षा | तरीक़ों पर सोच-विचार

अरविन्द सरदाना

एकलव्य ने 1980 के दशक में माध्यमिक स्कूल के लिए सामाजिक विज्ञान पर काम शुरू किया। तब हमारे लिए यह समझ पाना मुश्किल हो रहा था कि राज्य की उस समय प्रचलित पाठ्यपुस्तकों में नागरिकशास्त्र से सम्बद्ध हिस्से से हम क्या अर्थ लें। उनके अध्याय या तो नियमों और कार्यविधियों का समूह थे या फिर 'अज्ञानी तथा अशिक्षित' नागरिकों के लिए नैतिक विज्ञान का पाठ। अध्यायों का सिलसिला कमोबेश संविधान के शीर्षकों का अनुसरण करता था, यहाँ तक कि कुछ पंक्तियाँ तो वहाँ से ज्यों-की-त्यों उठा ली गई थीं। यह सब ठीक तो था मगर विद्यार्थी इससे कुछ अर्थ नहीं निकाल पाते थे। शिक्षकों और विद्यार्थियों, दोनों के लिए एक सुविधाजनक रास्ता यह था कि महत्त्वपूर्ण सवाल और उनके जवाब याद कर लिए जाएँ।

हमने नागरिकशास्त्र के लिए एक वैकल्पिक ढाँचा अपनाया। इसके तहत हमने इसके विस्तार को बढ़ाया और सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन से सम्बद्ध प्रसंगों को भी इस के दायरे में ले आए। समकालीन राजनैतिक जीवन पर भी नज़र डालने का फ़ैसला लिया गया। यह भी तय किया कि संस्थाओं के वास्तविक काम को चर्चा में लाते हुए क़ानून के आदर्शों के साथ उनकी तुलना को स्थान दिया जाए – यानी वास्तविकता और क़ानून के आदर्श में तुलनात्मक अन्तर स्पष्ट हो। यह सब कुछ 1986 से 2002 तक चले *एकलव्य* के नवाचारी सामाजिक विज्ञान कार्यक्रम का हिस्सा था। हमने सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों, शिक्षक-प्रशिक्षण और आकलन के नए रूपों पर काम किया।

शिक्षा की हमारी संस्कृति में दो बिल्कुल अलग दृष्टिकोण जड़े हुए हैं। पहला दृष्टिकोण निष्क्रिय नागरिकता का दृष्टिकोण है। इसके तहत अन्य लोगों को शिक्षित करने की ज़रूरत की बात होती है या फिर अज्ञानता से उत्पन्न अभाव को भरने की। इस परिप्रेक्ष्य में एक बड़ा समूह सहभागी है और इस परिप्रेक्ष्य को नागरिकशास्त्र की कक्षाओं में साल-दर-साल ऐसी ही दलीलों के दोहराव से मज़बूत किया जाता रहा है। इनमें सरकारी स्कूलों के कई शिक्षक शामिल हैं जो ख़ुद को नौकरशाह के रूप में देखते हैं। जो सरकार की खुले तौर पर आलोचना नहीं कर सकते।

दूसरा दृष्टिकोण सरकारी शिक्षकों के एक काफ़ी छोटे समूह का है। इनका विश्वास सुविज्ञ तथा विवेचनात्मक नागरिकता में है जो हमारे लोकतंत्र की असफलताओं पर चर्चा करने को तैयार रहेगी। विवेचनात्मक नागरिकता के परिप्रेक्ष्य को सीमित स्वीकार्यता ही हासिल हुई है। इसके तहत सब नागरिकों को बराबर समझा जाता है, इसलिए ग़रीब तथा वंचित तबक़ों को नीचा दिखाते हुए उनके साथ बात नहीं की जा सकती। उन्हें उनकी ग़रीबी या उन पर हो रहे अन्याय का दोष नहीं दिया जाता। इस दृष्टिकोण के तहत मौजूदा संसार में अन्याय, असमानता या भाईचारे की कमी के सामाजिक और ऐतिहासिक कारणों की चर्चा अधिक सूक्ष्मभेदी तरीक़े से की जाती है।

राज्य या केन्द्रीय संस्थाओं के शिक्षकों और शिक्षा से सम्बद्ध प्रशासकों के साथ होने वाली कई अन्त:क्रियाओं में ये परस्पर-विरोधी दृष्टिकोण सामने आते हैं। ये दृष्टिकोण पाठ्यचर्या-निर्माण और प्रक्रिया को कई महत्त्वपूर्ण तरीक़ों से गहरे तक प्रभावित करते हैं। पाठ्यचर्या-सुधार की प्रक्रिया में विवेचनात्मक नागरिकता को बहुत आसानी से स्वीकार नहीं किया जाता, उसको लेकर विरोध की भावना रहती है, इसलिए इस बारे में गहरे वार्तालाप और जुड़ाव की ज़रूरत है ताकि किसी एक दृष्टिकोण को दूसरे पर थोपा न जाए। इस सन्दर्भ में शिक्षकों के साथ हुए सत्रों से कुछ उदाहरण लेते हैं :

> राजस्थान में हुए एक शिक्षक-प्रशिक्षण सत्र में शिक्षकों के एक समूह ने विरोध जताते हुए कहा कि वे परिकल्पित सवालों पर चर्चा नहीं करेंगे – जैसे कि ग्राम सभा में सीधे, प्रत्यक्ष लोकतंत्र की अवधारणा। उनका आग्रह था कि हम राज्य के मौजूद नियमों के इर्द-गिर्द ही चर्चा करें। सालों से चले आ रहे नागरिकशास्त्र शिक्षण के तौर-तरीक़े ने उन्हें इस विषय को एक ख़ास नज़र से देखने का आदी बना दिया था। वे इस विषय को अगली पीढ़ी तक पहुँचाए जाने वाले कुछ कठोर और कड़े नियमों के समूह के रूप में देख रहे थे।
>
> छत्तीसगढ़ में शिक्षकों के एक समूह ने इस बात पर ज़ोर दिया कि मौसम बदलने पर राज्य से जाने वाले कामगारों का ज़िक्र, पलायन शब्द का इस्तेमाल किए बिना हो। राज्य ने घोषणा की थी कि कोई पलायन नहीं होता है, जबकि रायपुर और बिलासपुर के रेलवे स्टेशन ऐसे लोगों से भरे पड़े थे जो किसी भी हालत में, दिल्ली जाने वाली

रेलगाड़ियों में चढ़ रहे थे।

बन्धुआ मज़दूरी, घरेलू हिंसा या मानवाधिकारों से सम्बद्ध कोई भी मसले पाठ्यचर्या-निर्माण की चर्चा में मुश्किल बिन्दु थे। जब तथ्यों को नकारा नहीं जा सकता था या अगर हम सरकारी रिपोर्टों का इस्तेमाल करते थे, तब मुद्दे से ध्यान हटाने के लिए दलील दी जाती थी कि ये बच्चे बहुत कमउम्र हैं और इन मुद्दों को समझ नहीं पाएँगे; इन मुद्दों को छोड़ देना ही बेहतर होगा क्योंकि इनसे इन बच्चों के आसानी से प्रभावित होने वाले दिमाग़ों को नुक़सान ही पहुँचेगा। कुछ लोग यह भी कहते थे कि आदर्शों की बात की जानी चाहिए न कि कठोर और भयंकर यथार्थ की। पाठ्यचर्या सम्बन्धित सत्रों में उस के ढाँचे, अध्यायों और दृष्टान्तों को लेकर घण्टों बहस और मोल-तोल होता था।

दो अलग धारणाओं वाले ये समूह अब भी हैं, हालाँकि इनमें विश्वास रखने वालों की संख्या शायद घटती-बढ़ती रहती है। नई और परिवर्तित पाठ्यपुस्तकों के आने पर शिक्षकों के साथ व्यापक वार्तालाप एक लुप्त कड़ी है। इस वार्तालाप के अभाव में कक्षा सम्बन्धी प्रक्रियाओं में बदलाव नहीं आता – पाठ्यचर्या से जुड़ी हुई बेहतर सामग्री उपलब्ध होने पर भी नहीं।

निष्क्रिय बनाम विवेचनात्मक नागरिकता

निष्क्रिय नागरिकता का नज़रिया

अगर नेतृत्व करने वालों का नज़रिया निष्क्रिय नागरिकता वाला रहता है तो नई पहलक़दमियों के पथ से उतरने के इमकान बढ़ जाते हैं। ये दो उदाहरण ही देखिए :

हमारे कार्यक्षेत्र में एक बहुत मुखर, शोर मचाने वाले राजनीतिज्ञ थे। वे हमारे कार्यक्रमों का विरोध यह कहते हुए करते थे कि हमारी पाठ्यचर्या के अध्याय चुने हुए प्रतिनिधियों के ख़िलाफ़ लोगों को भड़काते हैं। क्योंकि पंचायत पर बने हमारे अध्याय में भ्रष्टाचार के विरुद्ध क़दम उठाने की माँग के साथ लोगों को विधायक के घर के बाहर प्रदर्शन करते हुए दिखाया गया था। दूसरी ओर मध्य प्रदेश के उदार शिक्षा-सचिव थे जिन्हें सरकारी स्कूलों के लिए पाठ्यपुस्तक को अनुमोदित करना था। उनका कहना था, "आपको सरकार की आलोचना करनी है तो बिल्कुल करें लेकिन मज़ाक न उड़ाएँ।" सरकार के साथ ताल-मेल में चला यह कार्यक्रम जब तक भी चला, इस तरह के उदार नज़रियों की वजह से ही चला।

साल 2000 के आस-पास इन्दौर के कुछ सम्भ्रान्त स्कूलों ने एकलव्य की सामाजिक-विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों को अपनाया। एक स्कूल के शिक्षक शुरुआत में हिचकिचाए लेकिन बाद में उन्हें अपनी कक्षाओं में आनन्द आने लगा। अगले अकादमिक सत्र में इस स्कूल के प्रधानाध्यापक बदल गए। नए मुखिया ने शिक्षकों से इस पहल पर उन की राय माँगी। शिक्षक ईमानदार थे और हमारी पाठ्यपुस्तकों के समर्थन में भी थे। उन्होंने कार्यक्रम को जारी रखे जाने की बात कही। लेकिन उप-प्रधानाध्यापक (वाइस प्रिंसिपल) ने चुपके से शिक्षकों को सलाह दी कि प्रधानाध्यापक कार्यक्रम को जारी न रखने के लिए "सबूत" की फ़िराक़ में हैं। शिक्षकों ने हमें बताया कि अगली बार पूछे जाने पर वे अनिश्चित, अप्रतिबद्ध मुद्रा में रहेंगे क्योंकि वे अपनी नौकरी को सुरक्षित रखना चाहते थे। कार्यक्रम समाप्त कर दिया गया क्योंकि नेतृत्व की राय थी कि शिक्षकों को तो बस अपने काम के प्रति निष्ठावान होना चाहिए और विवेचनात्मक परिप्रेक्ष्य वाली पाठ्यपुस्तकें पश्चिमी दृष्टिकोण को दर्शाती थीं - वे हमारे देश के लिए अप्रासंगिक थीं।

विवेचनात्मक नागरिकता का नज़रिया

विवेचनात्मक नागरिकता के नज़रिए का अर्थ होगा कि आप ख़ुद के सन्दर्भ में संवेदनशील मुद्दों पर चर्चा के लिए विश्वास पैदा करें और चर्चा करने के तरीक़े निकालें। कुछ उदाहरण लेते हैं :

कई नए अध्यायों में यह गुंजाइश बनती है कि ऐसे विचारों को बीच में लाया जाए, उनके साथ जूझा जाए, जिन्हें बच्चे अपनी सामाजिक परिस्थिति से ग्रहण करते हैं। बहरहाल, सबसे प्रभावशाली और कारगर तो अलग-अलग परिप्रेक्ष्यों और मतभेदों के साथ विमर्श करते हुए जूझने की क्षमता है। इन्दौर के एक सम्भ्रान्त स्कूल की एक शिक्षिका जातीय आरक्षण के मुद्दे पर तो चर्चा करने में हिचकिचाती थीं मगर महिलाओं के लिए आरक्षण को लेकर बहुत मुखर थीं। एक अध्याय में एक प्रश्न से संकेत लेते हुए उन्होंने ऐसी कहानियाँ सुनानी शुरू कर दीं जिनकी वे चश्मदीद थीं। यह भी बताया कि किस तरह बहुत-सी महिलाओं के लिए आरक्षण आगे बढ़ने में मददगार होता है, हालाँकि उन्हें अपनी नौकरी के साथ-साथ घर के काम भी करने होते हैं। जब कुछ लड़कों ने इस पर प्रश्नचिह्न लगाया तो अचानक कक्षा में लड़कियों की तरफ़ से सबूतों की एक झड़ी-सी लग गई। उन्होंने अपने परिवारों की कहानियाँ सुनानी शुरू कर दीं। जिस तरह शिक्षिका ने इस स्वत: स्फूर्त उठी बहस के दौरान अपनी कक्षा का मार्गदर्शन किया, वह सच में अद्भुत था।

एक दिन मुझे उम्र में मुझसे छोटी मित्र का फ़ोन आया। वे शिक्षकों की एक बैठक में पूछे जा रहे सवालों से भौचक्का थीं। शिक्षकों ने उनसे सीधे-सीधे पूछा था, "क्या हमारे लिए हिन्दू राष्ट्र होना सबसे बेहतर नहीं होगा? इससे यह

रोज़-रोज़ के झगड़े ख़त्म हो जाएँगे।" मेरी मित्र की पहली प्रतिक्रिया थी, "वे ऐसा पूछ ही कैसे सकते थे? यह बात तो संविधान के ख़िलाफ़ है।" उन्हें यह बात समझने में कुछ वक़्त लगा कि यह सवाल संविधान के बारे में कम और इस बारे में अधिक था कि हम सम्भवत: किस तरह का समाज बन सकते हैं। हमें आज धर्मशासित नज़रिए को ख़ारिज क्यों करना चाहिए? संविधान एक जीवन्त दस्तावेज़ है और अगर हम इसे ध्यान से पढ़ें तो इसके मूल्यों में अपने विश्वास को फिर से पुष्ट करने में हमें मदद मिल सकती है। संविधान पर केवल वकीलों और अदालतों को ही अमल नहीं करना बल्कि विमर्श के बाक़ी सब रूपों में भी यह होना चाहिए।

इसी तरह, एक शिक्षक ने बताया कि जब वह ओम प्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन से एक अंश पर चर्चा कर रही थीं तो उन्हें कक्षा में एक नाज़ुक स्थिति का सामना करना पड़ गया था। यह एनसीईआरटी की कक्षा 6 की सामाजिक और राजनैतिक जीवन पाठ्यपुस्तक का हिस्सा था। कुछ बच्चों ने दलित विद्यार्थियों को अपना निशाना बनाया और वाल्मीकि ने स्कूल में जिस स्थिति का सामना किया था, उसी की तर्ज़ पर वे दलित विद्यार्थियों से कहने लगे – झाड़ू लगा। शिक्षक विचलित हो गई क्योंकि विद्यार्थियों के इस बरताव से उनका पूरा विमर्श उलट गया। बाद में उन्होंने तय किया कि वे अपने सन्दर्भ में प्रचलित जातीय प्रथाओं पर चर्चा में काफ़ी समय लगाएँगी। ऐसा उन्होंने स्वयं अपने अनुभव के आधार पर तथा कुछ तीखे सवाल उठाते हुए किया : जैसे कि - क्या हम घर पर कुछ लोगों के लिए गिलास अलग से रखते हैं? क्या कुछ लोगों को केवल आँगन तक आने की इजाज़त होती है? उन्होंने एक लम्बी सूची बनाई और चर्चा की, कि ऐसी बातों से किस प्रकार सभी के लिए बराबर इज़्ज़त की धारणा का उल्लंघन होता है। यह भी बड़ी बात है कि वे विद्यार्थियों के बीच व्यक्तिगत वैर-भाव को भड़काए बिना ऐसा कर पाईं।

अपने विश्वास के रूप में हम निष्क्रिय नागरिकता को ग्रहण करते हैं या विवेचनात्मक नागरिकता को, निकट भविष्य में इस बात का महत्त्व और भी ज़्यादा बढ़ने वाला है। समकालीन परिस्थितियों में जब वर्तमान क़ानूनों द्वारा समाज में विभाजन को भड़काया जा रहा है, जैसे कि सीएए या 'लव जिहाद' के रूप में, तो सम्भावना यह है कि राज्य का झुकाव निष्क्रिय नागरिकता के विश्वास की ओर देखने में आएगा। आसार हैं कि कर्तव्यों, अनुशासन और निष्ठा पर बल दिया जाएगा जबकि मानवाधिकारों, समाज कल्याण, समाज के भीतर हाशियाकरण और शोषण की बातों को शक की निगाह से देखा जाएगा।

बहुत सम्भावना है कि पाठ्यचर्या-सुधार के लिए उदार नज़रियों की जगह सीमित ही होगी।

लेकिन इस निराशावादी परिदृश्य में भी हमें ऐसी अनपेक्षित गुंजाइश मिल सकती है कि पाठ्यचर्या को लेकर स्वागत योग्य हस्तक्षेप किए जा सकें। यह ज़रूर है कि अगर हमें विवेचनात्मक नागरिकता के अपने विश्वास पर बने रहना है तो पाठ्यचर्या से इतर गुंजाइश की जगहों की ओर अधिक रचनात्मक तथा ऊर्जावान तरीक़े से बढ़ना होगा। इसीलिए, शिक्षकों के व्यवहार और कार्यों से हम जो कुछ सीख सकते हैं, अब उस पर चर्चा करते हैं।

शब्दों से अधिक व्यवहार बोलता है

एक करने लायक़ काम तो यह है कि शिक्षक अपनी परिस्थितियों में जो पहल कर रहे हों, उन्हें हम पहचानें और प्रोत्साहित करें। भारत में लोकतंत्र की रचना दो तरह से प्रतिकूल परिस्थितियों में हुई – एक तो ऐसे समाज में जिसकी बुनियाद जातीय व्यवस्था की ग़ैर-बराबरी पर टिकी थी और दूसरा, एक राजसी तथा निरंकुश राज्य में। शुरुआती स्थितियाँ अविश्वसनीय-सी थीं तो दूसरी ओर लोकतंत्र को ऐसी परिस्थितियों में पनपना पड़ा है जिन्हें अगर परम्परागत राजनैतिक सिद्धान्तों की नज़र से देखें तो वे भी अनुकूल नहीं रही हैं – यानी एक ग़रीब, निरक्षर और अत्यधिक वैविध्यपूर्ण नागरिक समाज की परिस्थितियाँ। लेकिन न केवल यह लोकतंत्र बचा रहा है, इसने भारतीय समाज को अभूतपूर्व तरीक़ों से ऊर्जावान बनाने में भी सफलता पाई है। शुरुआत में कोमल, विधि-परायण राष्ट्रवादी अभिजात वर्ग द्वारा लोकतंत्र को एक शासन-प्रणाली के एक रूप में लाया गया था। लेकिन फिर लोकतंत्र को विस्तार और गहराई देते हुए समाज का एक सिद्धान्त बनाया गया और इसने भारतीयों के पास उपलब्ध सम्भावनाओं को सकारात्मक रूप से परिवर्तित कर दिया। *उन्होंने [भारत के लोगों ने] इसे अपना लिया है, और उन्होंने इसके बारे में पाठ्यपुस्तकों से नहीं बल्कि तात्कालिक व्यवहार से सीखा है। लेकिन भारत के लोकतंत्र की कामयाबी ही संस्थागत स्तर पर इसके निरन्तर ज़िन्दा रहने के लिए ख़तरा भी है। (द आइडिया ऑफ़ इंडिया, सुनील खिलनानी। इटैलिक्स मैंने किया है।)*

नागरिकता के बारे में शिक्षा एक *जिया हुआ अनुभव होना चाहिए। यह किसी व्यक्ति के ख़ुद के सन्दर्भ में लोकतंत्र के साथ गुत्थम-गुत्था* होने का अनुभव होना चाहिए। यह सुनील खिलनानी द्वारा अपनी पुस्तक में कही गई बात का अनुमोदन है। यह ऐसा समय भी है जब लोकतंत्र के ज़िन्दा रहने पर ख़तरा मँडरा रहा है। इससे पहले कि मैं इस बारे में चर्चा करूँ कि भविष्य के लिए क्या व्यवहार्य है, मैं शिक्षकों द्वारा लोकतंत्र को व्यवहार में लाने के लिए इस्तेमाल किए गए विचारशील

और रचनात्मक तरीक़ों की एक रूपरेखा रखूँगा। हमारे समाज में लोकतंत्र के गहरे होने में इस तरह के क़दमों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अगर हम शिक्षकों के जिए हुए अनुभवों पर नज़र डालें तो हमें अपने इलाक़ों में ही कई उदाहरण ज़रूर मिल जाएँगे। बात बस इतनी-सी है कि हमने उन्हें देखा नहीं है और हम उनके मूल्य और उनमें छुपी हुई सम्भावनाओं को पहचानते नहीं हैं।

मैं एक दलित शिक्षक को जानता हूँ जो सामाजिक विज्ञान के समूह का हिस्सा थे और जिस गाँव में उनकी नौकरी थी, उसी में दो दशक से भी अधिक तक रहे थे। वे दलित मुद्दों को लेकर बहुत जज़्बाती और उत्साही थे लेकिन कक्षा में या हमसे भी उन मुद्दों पर कोई ख़ास बात नहीं करते थे। बहुत बाद में मुझे इस बात का एहसास हुआ कि वे दलित बच्चों की शिक्षा में मददगार होने के लिए प्रतीकात्मक क्षणों और सूक्ष्म तरीक़ों का चुनाव करते थे। एक घटना मेरी याद में बहुत साफ़तौर पर मौजूद है। एक अभिभावक अपने बच्चे के तबादला सर्टिफ़िकेट के लिए उनसे मिलना चाहते थे मगर वे स्कूल-परिसर में आने से कतराते थे। वे आँगन में रहते हुए ही बात करते थे। शिक्षक ने बात समझ ली। वे कक्षा से बाहर आए और अभिभावक को अन्दर आने के लिए धीरे-धीरे मना लिया; उन्हें कुर्सी पर बैठाया, हालाँकि अभिभावक बहुत ही असहज महसूस कर रहे थे। शिक्षक उनसे अनौपचारिक बात करते रहे और साथ ही फ़ाइलों में सर्टिफ़िकेट को भी तलाशते रहे। इस बीच पूरी कक्षा यह सब घटित होते हुए देखती रही और उसके अर्थ को भी जज़्ब करती रही।

वे अन्य कई तरीक़ों से भी ऐसा ही कुछ व्यवहार में लाते थे। एक बहुत ग़रीब परिवार की लड़की की शिक्षा में और उसकी हॉस्टल फ़ीस अदा करने में भी उन्होंने मदद की। यह लड़की बहुत ही कठिन और चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना करते हुए शिक्षक बनी। इसी तरह उन्होंने ग़रीब परिवारों के कई लड़कों को कक्षा 8 का इम्तिहान देने के लिए प्रोत्साहित किया ताकि बाद में उन्हें विकसित हो रहे परिवहन क्षेत्र में काम मिल पाता। कई साल बाद इस शिक्षक ने बताया कि उनके द्वारा उठाए गए कई ऐसे क़दम इसलिए सम्भव हो पाए क्योंकि *उन्हें स्कूल के अपने सहकर्मियों का मौन समर्थन मिला।* यह ख़ामोश बिरादरी सार्वजनिक चर्चा से बचती थी, मुखर नहीं थी, मगर इसका प्रभाव बहुत था।

पड़ोस के एक गाँव के एक अन्य दलित शिक्षक ने गाँव के विद्यार्थियों के लिए एक ट्यूशन केन्द्र खोला ताकि वे जवाहर नवोदय विद्यालय की प्रवेश परीक्षा में स्थान बना पाएँ, जहाँ शिक्षा और देख-रेख राज्य-समर्थित होती है। एक दलित शिक्षक द्वारा एक ऐसा कोचिंग केन्द्र चलाया जाना दुर्लभ ही है जहाँ ग्रामीण समाज के सभी जाति-समूहों के बच्चे आते हों - लेकिन उन्हें इसमें सफलता मिली। यही वे अनुभव हैं जिनके माध्यम से विद्यार्थी इस विचार को जज़्ब कर पाएँगे कि गाँव में चाहे न हों मगर स्कूल के परिसर में सभी बराबर हैं।

एक माध्यमिक स्कूल के शिक्षकों के एक समूह ने अपने स्कूल में लड़कियों की शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए एक सरल तरकीब निकाली। सरकार की *ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड* योजना (1986) के अन्तर्गत महिलाओं को प्राथमिक स्कूल शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था और इसके सकारात्मक नतीजे निकले थे। अब ज़्यादा लड़कियाँ प्राथमिक शिक्षा पूरी करके माध्यमिक स्कूल में दाख़िला लेने लगी थीं जबकि इस स्तर पर परिवार के दबाव और सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दे बढ़ने लगते हैं। स्थानीय समुदाय में अपनी जड़ें रखने वाले शिक्षकों के इस समूह ने लड़कियों के माता-पिता को उनकी सुरक्षा के सम्बन्ध में पक्का भरोसा दिलाया और उनसे आग्रह किया कि वे लड़कियों को माध्यमिक स्कूल में दाख़िला लेने दें। चूँकि स्कूल गाँव के बाहरी छोर पर था, इसलिए एक मूलभूत क़दम तो यह उठाया गया कि लड़कियों की छुट्टी पहले कर दी जाती थी। उन्हें दस मिनट की छूट दी जाती थी और इतने समय में वे इकट्ठे एक समूह में स्कूल से गाँव के चौक तक पहुँच जाती थीं। नियमों में इस सरल से बदलाव के चलते माता-पिता का विश्वास बहुत बढ़ गया और लड़कियों ने बड़ी संख्या में दाख़िला लिया।

एक और उदाहरण। एक कन्या हाई स्कूल के मुख्याध्यापक तथा सामाजिक विज्ञान के अध्यापक ने चारदीवारी-निर्माण के साथ बदलाव की प्रक्रिया शुरू की और फिर इसके बाद पुस्तकों, छात्रवृत्तियों और वर्दियों के सही वितरण का काम भी किया। उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया कि कक्षाएँ समयसारणी के अनुसार ही लगें। इस स्कूल में लड़कियों का दाख़िला एक साल के भीतर 80 से बढ़कर 400 तक जा पहुँचा और कई लड़कियाँ तो अपेक्षाकृत छोटे प्राइवेट स्कूलों को छोड़कर वापस सरकारी स्कूल में आ गईं।

एक गाँव के माध्यमिक स्कूल के एक शिक्षक स्कूल लगने से आधा घण्टा पहले आ जाते और एक छोटे ब्लैकबोर्ड पर दिन के प्रमुख समाचार लिख दिया करते थे। यह संक्षेप में होता था और इसमें बहुत से विषय आ जाते थे। वे बहुत ही कुशलता के साथ स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय ख़बरों का चयन किया करते थे। बच्चे इसे पढ़ा करते थे और अक्सर ब्रेक के समय अपनी कॉपी में भी लिख लेते थे। यह वह समय था जब धीरे-धीरे टीवी की पहुँच बढ़ रही थी लेकिन उस बड़े गाँव में कुछ ही समाचार-पत्रों का वितरण होता था। बच्चों का यात्रा का अनुभव आस-पास के गाँवों तक सीमित था, यहाँ तक कि पड़ोस के उज्जैन तथा देवास नगरों तक भी उनका जाना बहुत कम ही था। समय के साथ शिक्षक के इस क़दम के नतीजे

आने शुरू हो गए – बच्चे कक्षा में सवाल पूछते, जो अक्सर समाचारों में उल्लिखित स्थानों के बारे में होते, और कई बार ऐसे प्रश्न भी पूछते, कि भूकम्प क्यों आता है या कोई युद्ध क्यों हुआ है? ख़बरों से जुड़ी कुछ छोटी-छोटी बातें वे आपस में भी करते और घर पर भी। वे इस सब में काफी रुचि लेते और दिन की ख़बरों का उत्सुकता से इन्तज़ार करते। यह उनके लिए संसार को देखने की खिड़की थी।

एकलव्य के किशोरावस्था स्वास्थ्य प्रोग्राम से सम्बद्ध सरकारी स्कूलों की शिक्षिकाएँ इस बात को लेकर स्पष्ट थीं कि कई मुद्दों के बारे में लड़कियों के साथ साफ़गोई से चर्चा करना ज़रूरी था। लैंगिक मुद्दे, घरेलू हिंसा, मासिक धर्म और गर्भनिरोध आदि इनमें से कुछ विषय थे। पितृसत्तात्मक समाज में इन मुद्दों पर बात करना आसान नहीं था लेकिन हैरत की बात थी कि ये महिलाएँ कितनी अविचलित और निर्भीक थीं – उन्होंने ये कार्यशालाएँ करने में एक-दूसरे को सहयोग दिया। इस मौक़े का लाभ उठाने को लेकर उनकी उद्देश्यपूर्णता और उत्सुकता इन मुद्दों के साथ उनके अपने गहरे संघर्षों से पैदा हुए थे। उनमें से किसी के लिए भी शिक्षक बन पाना और उसके बाद परिवार और स्कूल, दोनों से जुड़ी भूमिकाएँ निभाना आसान नहीं रहा था। महिलाओं के इस समूह का मेल-जोल और एकजुटता कमाल की थी और बीते सालों में भी बनी रही है।

स्कूली शिक्षा के सन्दर्भ में, पाठ्यचर्या से जुड़ी सामग्रियों पर तो ध्यान केन्द्रित रहा है लेकिन शिक्षकों के दृष्टिकोणों और दुनिया को देखने के नज़रियों को लेकर उनके साथ लगभग कोई भी संवाद नहीं होता। लोकतंत्र के जिए हुए सन्दर्भ में, शिक्षकों के कई अनुभव हमें वैचारिक स्तर पर अर्थपूर्ण जुड़ाव के कई रास्ते दिखाते हैं। संवैधानिक मूल्यों के साथ जुड़ने के लिए वे सूक्ष्म और दक्ष तौर-तरीक़े इस्तेमाल में लाते हैं और अगर शिक्षकों की स्वायत्तता को मज़बूती दी जाए तो इन तरीक़ों से रचनात्मक पथ खुलते हैं। शिक्षक और स्कूल की टीम के लिए स्वायत्तता की संस्कृति बदलाव के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण और निर्णायक कारक है। किशोरावस्था के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम से सम्बद्ध टीम के सुझाव के अनुसार एक तरीक़ा यह है कि विषय-विशेष की कार्यशालाएँ की जाएँ, शिक्षकों का समकक्ष-समूह बने और पाठ्यक्रम को पूरा करने के संकुचित दायरे में पड़े बिना पाठ्यचर्या से एक ढीला-ढाला सा नाता रखा जाए। (अनु गुप्ता, *हेल्थ एजुकेशन : सम इन्साइट्स*)

यह तो स्पष्ट है कि नागरिकता की शिक्षा में काम करने का कोई एक सूत्र नहीं है। सहायक संरचनाएँ तो कई हो सकती हैं लेकिन कार्रवाइयाँ स्थानीय सन्दर्भ में सहज, व्यवस्थित तरीक़े से प्रकट होंगी। बात नियमित पाठ्यचर्या के दायरे से बाहर निकलकर सोचने की है और विषयों से जुड़ा एक विश्वसनीय ढाँचा बनाने की है। शिक्षकों की भागीदारी को मज़बूती देना, उनके परिप्रेक्ष्यों पर चर्चा करना और कार्य करने के लिए उनकी स्वायत्तता के दायरे को बढ़ाना महत्त्वपूर्ण है।

यह लेख देवास के दिवंगत पन्ना लाल चव्हाण की याद को समर्पित है।

References

Anu Gupta, *Health Education: Some Insights, in School Health Services in India*, Rama Baru (ed), Sage, 2008, New Delhi.

Poonam Batra, (edited) *Social Science Learning in Schools*, Sage, 2010, New Delhi.

Alex M George, *Political Science Images in Schooling: Personal experiences of the Textbook-making Process, Contemporary Education Dialogue*, 2018, Sage.

Sunil Khilnani, *The Idea of India*, Penguin Books, India, 2012

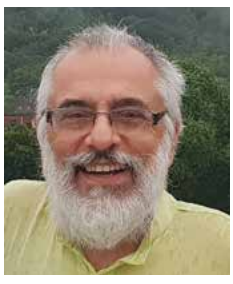

अरविन्द सरदाना एकलव्य के सामाजिक विज्ञान समूह के सदस्य हैं। वे एनसीईआरटी तथा अन्य राज्य सरकारों की पाठ्यपुस्तक-विकास की प्रक्रियाओं से जुड़े रहे हैं। उनसे arvindewas@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** रमणीक मोहन

नागरिकता के आदर्श

हृदय कान्त दीवान

शिक्षा की प्रक्रिया एक बच्चे को अपने देश का हिस्सा बनने के लिए तैयार करती है। शिक्षा से अपेक्षा होती है कि वह बच्चे को अच्छा और ज़िम्मेदार नागरिक बनाए तथा उसे उन भूमिकाओं का ज्ञान दे, जो उसे निभानी चाहिए - और इन भूमिकाओं के निर्वहन के कारणों तथा उनके विभिन्न रूपों से भी अवगत करवाए। एक अच्छे नागरिक को केवल अपनी ही परवाह नहीं करनी चाहिए बल्कि दूसरों के बारे में भी जागरूक होना चाहिए। अच्छी नागरिकता का अर्थ है, व्यापक सन्दर्भ को ध्यान में रखते हुए देश या उस के लोगों के लिए हानिकर स्थितियों से निपटने और उन्हें बदलने की कोशिशों में हिस्सेदारी के लिए तैयार रहना।

एक बच्चे को गढ़ने और आकार देने में, उसके विचारों और सम्बन्ध बनाने के तौर-तरीक़ों को शक्ल देने में, कई कारकों की भूमिका रहती है। इनमें से पहला कारक उसका परिवार और उसके आस-पास का समुदाय होता है। सभी परिवारों की इच्छा और सब समाजों की ज़रूरत होती है कि उनके बच्चे इस तरह से शिक्षित हों कि वे समुदाय का एक सामंजस्यपूर्ण हिस्सा बन जाएँ और उसके कार्य करने के तरीक़े के साथ एकीकृत हो जाएँ; वे उसमें सहज महसूस करें और उसमें योगदान दें; और अन्ततः आत्मविश्वास हासिल करके उसे आगे ले जाने की ज़िम्मेदारी ले पाएँ।

समुदायों का आकार अब बड़ा होने के साथ-साथ उनमें अधिक जटिलता भी आ गई है। इसी के चलते बच्चे अब अपने परिवार से बाहर के कहीं अधिक लोगों के साथ अन्तःक्रिया में आते हैं। इनमें से कई लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें उनका परिवार नहीं जानता। बच्चों का नई स्थितियों से सामना होता है और अजनबियों के साथ मिलना-जुलना भी होता है। उन्हें अजनबियों के साथ ही ऐसे लोगों से भी बातचीत करनी होती है, जिनसे वे तो परिचित होते हैं लेकिन जो परिवार का हिस्सा नहीं होते। बच्चों को सम्बन्ध विकसित करने होते हैं और समझना होता है कि परिवार की मदद के बिना इन सबके साथ किस तरह व्यवहार करना है – मदद के लिए उनके पास वास्तविक स्थितियों के लिए कुछ सामान्य आदेशों-निर्देशों के अलावा कुछ नहीं होता।

एक-दूसरे के साथ व्यवहार के सूक्ष्म अन्तर सीखना

बच्चों को अपने बिल्कुल नज़दीक के दायरे की स्थितियों से निपटने के दौरान कुछ विकल्पों का चुनाव करना होता है। उन्हें सबसे अधिक प्रभावित करने वाले उनके बिल्कुल निकट के दायरे में उनका ध्यान रखने वाले लोग, उनके प्रति उदासीन रहने वाले और उनके साथ हेर-फेर करने वाले या उनका फ़ायदा उठाने वाले लोग भी हो सकते हैं। एक बच्चे को इनके बीच अन्तर करना और प्रत्येक को उचित प्रतिक्रिया देना सीखना होता है। बच्चे के लिए ख़ासतौर से यह जानना ज़रूरी है कि कब कोई उसे लुभाकर और/या प्रभुत्व जमाकर उसके साथ हेर-फेर करने की कोशिश करता है – और कैसे इसका विरोध करना है। इसके लिए बच्चे को ख़ुद के बारे में, उसके शरीर और अधिकारों के बारे में शिक्षित करने के साथ ही, इस बारे में भी शिक्षित करना ज़रूरी है, कि अन्य लोग उस के साथ क्या कर सकते हैं।

इस बारे में भी शिक्षित होने की ज़रूरत है कि ऐसे मामलों में उनका फ़ायदा उठाने के क्या तरीक़े हो सकते हैं। समाज और स्थितियाँ निरन्तर बदलती रहती हैं। इसलिए बच्चों के साथ होने वाले सम्भावित हेर-फेर और ज़ोर-ज़बरदस्ती वाले व्यवहारों के तौर-तरीक़ों और प्रकृति में भी बदलाव आ सकता है। इसीलिए बच्चे की शिक्षा को विस्तार देते हुए उसमें नई तरह की प्रतिक्रियाओं को भी शामिल किया जाना चाहिए। शिक्षा और सीखने की ये ज़रूरतें समाज का सदस्य बनने और सम्भावित ख़तरों से सुरक्षित रहने की सम्पूर्ण प्रक्रिया का हिस्सा हैं।

संक्षिप्त में, शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है कि बच्चा एक सुरक्षित नागरिक के रूप में बड़ा हो सके, अपने आस-पास के बारे में जानकार और जागरूक रहे, और स्वयं की सुरक्षा कर पाने में सक्षम हो। इसके लिए उसे सम्भावित ख़तरों वाले उपकरणों और सुविधाओं के उपयोग से जुड़ी सावधानियों और ध्यान में रखे जाने वाली बातों की जानकारी होनी चाहिए। मिसाल के तौर पर, सड़क पर चलने के दौरान या फिर बिजली के कनेक्शनों, जलाशयों आदि के आस-पास होते समय। बच्चे को सह-अस्तित्व और परस्पर आदान-प्रदान के बुनियादी नियमों के बारे में भी जागरूक होना ज़रूरी

है। जैसे कि इस बात का एहसास कि खेलते समय नियमों का पालन करना है, सबकी बारी आनी चाहिए और कोई भी व्यक्ति हमेशा नहीं जीत सकता। समुदाय का हिस्सा होते हुए बच्चे को अपने निकटतम और व्यापक परिवार की प्रथाओं, रीति-रिवाज़ों और व्यावहारिक तौर-तरीक़ों के बारे में सीखना होता है। समुदाय में बड़ा होते हुए बच्चे के पास आमतौर पर यह सब सीखने के मौके उपलब्ध रहते हैं। इसमें से बहुत कुछ तो स्पष्ट तौर पर अभिव्यक्त भी नहीं किया जाता, न ही जानते-बूझते हुए प्रदान या लागू किया जाता है लेकिन यह सब उस संस्कृति और परम्परा का हिस्सा होता है जिसे बच्चा महसूस करता है। यह शिक्षा बच्चे के बड़े होने की प्रक्रिया और उसकी मान्यताओं को प्रभावित करती है।

एक बच्चे के कई अधिकार हैं। इनमें देखभाल किए जाने और सुरक्षित रखे जाने के अधिकार, यह सब और बाकी बहुत कुछ समझ पाने के उद्देश्य से शिक्षित होने का हक़, अपने आस-पास के संसाधनों और गतिविधियों में अपनी हिस्सेदारी का अधिकार शामिल हैं। इसका अर्थ है कि व्यवहार और भागीदारी से जुड़े नियम हैं, जो कर्तव्य भी हैं। यानी बच्चे को भी कुछ विशेष भूमिकाएँ निभानी होती हैं। समुदाय में बच्चे की शिक्षा में यह सब शामिल है और यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

जटिल समाज में अधिकार और कर्तव्य

सांस्कृतिक सहवास की यह प्रक्रिया आवश्यक शिक्षा के सन्दर्भ में पर्याप्त नहीं है। हम जानते हैं कि समाजों को विकसित, परिवर्तित, अनुकूलित होना होता है, और नए तरीक़े भी अपनाने होते हैं। इसलिए जिज्ञासा, जाँच-पड़ताल, खोज-बीन और प्रश्न पूछना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। बच्चे को इस सबके बारे में शिक्षित होने का अधिकार मिलना चाहिए ताकि एक वयस्क के तौर पर वह विकल्पों का चुनाव कर पाए तथा ऐसी नई स्थितियों और चुनौतियों से निपटने में सक्षम हो पाए जो उन स्थितियों से कुछ अलग हो सकती हैं जिनके बारे में समुदाय जागरूक रहा है। हम यह भी जानते हैं कि समुदाय बड़े समाज का एक हिस्सा है जिससे ही देश-जहान भी बनता है। बच्चे को मालूम होना चाहिए कि इस ज्ञान तक पहुँच बनाना सम्भव है और उसे यह चुनाव करने का अधिकार है कि वह क्या बनना चाहता या चाहती है – उसे अपने आस-पास उपलब्ध गिने-चुने विकल्पों तक सीमित रहने की ज़रूरत नहीं है और विशेष तौर से उसके परिवार और समुदाय में उपलब्ध बहुत ही थोड़े-से विकल्पों के साथ बँधे रहना भी ज़रूरी नहीं है। इन सब बातों को शामिल करने से अधिकारों की रूपरेखा अचानक व्यापक हो जाती है।

पहले से ही बहुत जटिल समाज की जटिलता और बढ़ रही है और इसमें ख़ास तरह की तैयारी की दरकार वाली विशेष भूमिकाएँ हैं। प्रत्येक बच्चे को इनके बारे में जागरूक होना ज़रूरी है। उसे इन भूमिकाओं के मौक़ों से जुड़ी सम्भावनाओं की उपलब्धता के बारे में भी जानकार होना होगा। उदाहरण के तौर पर, बच्चों को इन विकल्पों तक पहुँचने के रास्तों का ज्ञान होना होगा। उनके लिए तैयार होने में मददगार तंत्र के बारे में भी मालूम होना होगा। समता का वादा करने वाले एक लोकतांत्रिक देश में यह एक अधिकार है। इसका निहितार्थ है ऐसी शैक्षिक प्रक्रिया का होना जो बच्चे को एक कलाकार, संगीतकार, इंजीनियर, डॉक्टर, शिक्षक या नर्स की भूमिकाओं के बारे में जानने के लिए सक्षम बनाए और इनमें से प्रत्येक भूमिका के लिए आवश्यक तैयारी के बारे में भी बताए।

लेकिन बच्चे वास्तव में जिन हालात में जीते और बड़े होते हैं, वे इस स्थिति से बिल्कुल अलग हैं। यह तो स्पष्ट है कि इस अधिकार में ही बच्चे की यह ज़िम्मेदारी भी अन्तर्निहित है – अपेक्षित उद्देश्यों तक पहुँचने के लिए काम करना और अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रयास करते रहना। इस प्रकार जहाँ एक ओर बच्चे का अधिकार है कि वह संसाधन और मौक़े उपलब्ध करवाए जाने की आशा रखे, दूसरी ओर उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी तरफ से पर्याप्त चेष्टा करे। एक समुदाय में किसी-न-किसी तरह की ज़िम्मेदारियों के बिना बहुत-से अधिकार नहीं हो सकते लेकिन बच्चे भी ऐसी स्थितियों में फँसे हुए नहीं हो सकते जिनमें उनकी बस ज़िम्मेदारियाँ ही हों और अधिकार बहुत कम हों या बिल्कुल भी न हों। किसी भी समाज के लिए महत्त्वपूर्ण है कि वह स्वयं से उन ज़िम्मेदारियों और अधिकारों के बारे में पूछे जिन्हें वह आवश्यक मानता है, और यह भी, कि इनकी पहुँच सब बच्चों तक कैसे सुनिश्चित की जाए। यह हममें से प्रत्येक को पूछना चाहिए कि क्या देश के बच्चों में अधिकारों और ज़िम्मेदारियों का न्यायसंगत, उचित सन्तुलन है या नहीं।

राष्ट्रीय नागरिक बनना सीखना

बच्चों की यह स्वाभाविक शिक्षा उस सन्दर्भ द्वारा प्रेरित और संचालित होती है जिसमें वे जीते हैं। यह उनके परिवारों, समुदाय, मीडिया और अन्य स्रोतों से आती है व समाज में व्यक्ति की भूमिकाओं और अधिकारों, परस्पर सम्बन्धों और अन्त:क्रियाओं के बारे में मिश्रित परिप्रेक्ष्य लाती है। बाज़ार की ताक़तें बच्चों में प्रतियोगिता को बढ़ावा देने वाले तक़ाज़ों और आकांक्षापूर्ण मूल्यों को पैदा करने की इच्छा रखती हैं, या फिर नाजायज़ पात्रता और माँगों का बोध पैदा करना चाहती हैं। ये ताक़तें समानता, विविधता और बहुलता को ग़लत अर्थ देकर असलियत को छुपा सकती हैं। कुछ सामाजिक और राजनैतिक ताक़तें भी ग़लत जानकारियाँ देती हैं और युवाओं को अतिवादी बनाने की कोशिश करती हैं।

सोशल मीडिया के अधिक प्रयोग और पहुँच की वजह से अब बहुत-सी अनियंत्रित जानकारी सभी तक पहुँचती है। जानकारी का उपयोग करने वालों के पास प्राप्त जानकारी की प्रकृति, उद्देश्य और सचाई का मूल्यांकन कर पाने की क्षमता होनी चाहिए। इनका सन्दर्भ चुनावों समेत संकीर्ण फ़ायदों के लिए अलग-अलग तरह की लामबन्दी करना हो सकता है। सूचना-सम्पन्न और सक्रिय नागरिक होने का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है इन जानकारियों की छँटाई करते हुए लोकतांत्रिक संविधान के मूल सिद्धान्तों के साथ मेल करके उनके बारे में तार्किक और विवेकशील नज़रिया बनाना।

नागरिकता के लिए शिक्षा का तक़ाज़ा है कि ऐसे साधन विकसित किए जाएँ कि बच्चे इस ज्ञान को हासिल करने में सक्षम हो पाएँ। ये साधन हैं : सर्वप्रथम, ज्ञान के नए स्रोतों तक पहुँच बनाने की क्षमता होना यानी विश्वासपूर्ण तरीक़े से समझ के साथ पढ़ पाना और अपनी जानकारी में वृद्धि की इच्छा होना; दूसरा, इस बात का बेहतर तरीक़े से आकलन कर पाने की क्षमता कि कोई दृष्टिकोण, कथन (या पाठ) तार्किक एवं आन्तरिक तौर पर सुसंगत है या नहीं - और किस तरह वह अन्य स्रोतों द्वारा बताई गई बात के साथ मेल खाता है। इसके लिए अपनी राय को स्थगित रख सकने वाला खुला दिमाग़ और स्वभाव चाहिए। लेकिन बुनियादी क्षमताओं, तार्किकता और स्वभाव के इन पैने साधनों को एक मूलभूत नैतिक ढाँचे की भी ज़रूरत है। यह ढाँचा इन साधनों के इस्तेमाल के सिद्धान्त सुझाएगा और इसे संवैधानिक तथा मानवीय मूल्यों से उभरना चाहिए। बुनियादी साक्षरता, मूलभूत गणितीय सक्षमता, वैज्ञानिक तथा विवेकशील स्वभाव के साथ-साथ इन मूल्यों को एक बार फिर राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में रेखांकित किया गया है।

एक वचन के रूप में प्रस्तावना

भारत के नागरिकों के लिए मूल्यों का सार-तत्व संविधान की प्रस्तावना से उभरकर आता है, जो सब लोगों द्वारा एक-दूसरे को दिए गए वचन का कथन है। यह वचन समता, न्याय, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व के साथ-साथ वैज्ञानिक स्वभाव और विवेकशीलता रखने का वचन है। इसमें जिस सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय का वादा किया गया है, उसके कई निहितार्थ हैं, जिनमें स्कूलों में विविधता से जुड़ा बरताव भी शामिल है। शिक्षा अलग-अलग लोगों के साथ होने वाले बरताव का आकलन करने और असमानताओं पर प्रतिक्रिया देने के बारे में सबको जागरूक बनाती है।

संविधान में किए गए वादों में से सबसे महत्त्वपूर्ण है भ्रातृत्व का वादा। यह विविधताओं के बीच एकता के निर्माण के लिए और जीने के बहुल रूपों के प्रति आदर पैदा करने के लिए ज़रूरी है। यह मूल्य बाक़ी सब मूल्यों के केन्द्र में है और इसके बिना बाक़ियों में से किसी को भी पुख़्ता नहीं किया जा सकता। भ्रातृत्व-निर्माण के प्रभाव विशाल हैं और विविध अन्य लोगों के नज़दीक जाने की इच्छा इनके दायरे में आती है। इसी प्रभाव के तहत आप अन्य लोगों को अपनी ही तरह के इन्सान के तौर पर स्वीकार करते हैं।

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, मत और पूजा की आज़ादी होने पर एक नागरिक खुले तौर पर सोचने, ख़ुद को अभिव्यक्त करने और तर्क करने तथा जैसा उचित लगे, उसी तरह पूजा-अर्चना करने में विश्वस्त महसूस करता है।

अन्य मूल्य

इस सबके साथ, विविधता को स्वीकार करने तथा मतों, सोचने के तरीक़ों, विचारों, पूजा-उपासना के स्वरूपों और वैकल्पिक विचारों व रूपों की अभिव्यक्तियों की बहुलता का आदर करने के लिए सहनशीलता की आवश्यकता होती है। भारत के सन्दर्भ में, जहाँ धर्म और उपासना के भिन्न-भिन्न रूप मौजूद हैं, स्वयं के लिए यह आज़ादी सुनिश्चित करना दूसरों को ऐसी ही आज़ादी देने के साथ गुँथा हुआ है। इसके लिए ज़रूरत है कि विभिन्न धर्मों के उपासना के तरीक़ों और त्यौहारों के बारे में जागरूक रहा जाए, उनमें भाग लिया जाए या एक दर्शक बनकर उनमें दिलचस्पी ली जाए। लोकतंत्र पर अपना दावा जमाने के लिए स्वीकृति का यह एहसास होना ज़रूरी है।

लोकतांत्रिक नागरिक होने का एक अन्य अनिवार्य पक्ष भी है। यह है समझदारी और इरादे के साथ लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भागीदार हो पाना। लोकतांत्रिक प्रक्रिया में हिस्सा लेने का अर्थ सत्ताधारी सरकार के पक्ष या विपक्ष में होना नहीं है और बस वोट दे देने तक तो कतई सीमित नहीं है। इसका अर्थ है जो कुछ भी घटित हो रहा है, उसके बारे में जानकार होना, उसका विश्लेषण करना; सरकार तथा प्रशासन के काम का आकलन करना और उसके बारे में कोई राय बनाना; उठाए गए क़दमों और लिए गए फ़ैसलों के औचित्य को लेकर सवाल पूछना। अच्छा नागरिक होने का अर्थ सत्ताधारियों की आज्ञाकारी प्रजा होना नहीं है बल्कि एक ऐसा सूचना-सम्पन्न नागरिक होना है जो न केवल अपनी बल्कि अन्य लोगों की भी ज़िन्दगी को बेहतर बनाने की कोशिश करता है। एक लोकतंत्र में शिक्षित नागरिक होने का अर्थ है :

- जानकारी हासिल करने और उसके बारे में राय बनाने की क्षमता रखना।
- प्रमाण, परिप्रेक्ष्य, विचार, विश्लेषण, तथ्याधारित भविष्यवाणियों को प्राप्त करना और उन का आकलन करना।
- तर्क और विवेक की क़द्र करना।

ये तीन गुण ही वह विश्वास पैदा कर सकते हैं जिससे कोई ख़ुद को कुछ हद तक शासकों-प्रशासकों के बराबर समझ पाएगा। नागरिक के तौर पर अपनी भूमिका के महत्त्व को समझने की क्षमता पैदा कर पाएगा और सामन्ती प्रजा की तरह रोब और सत्ता के अधीन होना स्वीकार नहीं करेगा।

देश-प्रेम

नागरिक होने का एक महत्त्वपूर्ण तत्व देश के बारे में सोचना और जनहित की भावना रखना है। लेकिन देश-प्रेमी और ज़िम्मेदार नागरिक होने से सम्बद्ध विचारों को भी जाँचना-परखना ज़रूरी है। राष्ट्र के विचार, देश-प्रेम के अर्थ और उससे सम्बद्ध क्या और क्यों जैसे मसलों पर सवाल उठाना ज़रूरी है। सवाल पूछने और सरकार या प्रशासन द्वारा उठाए गए क़दमों से असहमति होने का अर्थ देशप्रेम के विरुद्ध होना नहीं है।

> नागरिकों को इस बात को समझते हुए सक्रिय होना चाहिए कि राष्ट्र लोगों से बनता है। राष्ट्र का कोई भी ऐसा विचार जिसमें देश के लोगों की चिन्ता न हो और जो राष्ट्रीयता के अमूर्त विचार के प्रति असीम त्याग की माँग रखता हो, एक अलोकतांत्रिक निरूपण है। स्वयं पर और अपने देश पर गर्व करने की भावना को इस एहसास के साथ मापना और मिलाना होगा कि ख़ुद के गौरव को तब ही आदर मिलेगा जब हम अन्य व्यक्तियों, समुदायों और राष्ट्रों के गौरव को मान-सम्मान देंगे।

हमें समझना होगा कि भूतकाल हमें अपनी ग़लतियों को पहचानने में ही मदद कर सकता है, वह आज के जीवन को बेहतर नहीं बना सकता। बीते समय की ग़लतियों को आज के सन्दर्भ में रखकर प्रभुता-सम्पन्न गणतंत्र के विचार तथा राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने के अर्थ को जाँचने की ज़रूरत है। क्या यह लोगों और सम्पूर्ण विविधता के लिए आदर से रहित है? क्या इसका अर्थ एकरूपता, सोचने के एक ही तरीक़े तथा एक धर्म/विश्वास के आधिपत्यपूर्ण प्रभुत्व को बढ़ाना है? क्या इसका अर्थ अन्य समुदायों और इन्सानों के प्रति भय और क्रोध के बीज बोना है? इसका सरोकार देश में रहने वाले लोगों के साथ होना चाहिए – यह केवल धरती और भूगोल की बात नहीं है। इन पर और राष्ट्र के अमूर्त रूप पर ज़रूरत से ज़्यादा बल देने, बीते समय की ओर देखने, अति-राष्ट्रवादी, संकीर्ण और ग़ैर-समावेशी होने का अर्थ है संविधान में कल्पित भारतीय होने के विचार का अनादर करना।

स्कूल की भूमिका

स्कूल की प्रक्रियाओं को इस विचार में योगदान देने की ज़रूरत है और यह सम्भव है। ऐसा कई तरह से किया जा सकता है: स्कूल में इस प्रकार की संस्कृति विकसित करना जिसके तहत सब लोगों की भागीदारी रहे और उनमें घनिष्टता तथा एकजुटता की भावना हो; कई तरह के संयुक्त काम और गतिविधियाँ हाथ में लेना; स्कूल को चलाने और सम्भालने के काम में विद्यार्थियों और शिक्षकों की साझा भूमिकाओं को शामिल करने वाली संस्कृति को अपनाना। इसका अर्थ होगा कि समूहों के पास एक ढाँचे के तहत यह ज़िम्मेदारी और अधिकार होंगे कि वे उन्हें सौंपे गए विभिन्न कार्यों की रूपरेखा बना सकें और उन्हें क्रियान्वित कर सकें।

तालमेल बनाए रखने वाले समूहों के कार्यों में ये कार्य शामिल हो सकते हैं - सामग्री/उपकरणों की देख-रेख, कक्षा-कक्षों और परिसर की स्वच्छता सुनिश्चित करना, खेल-मैदानों और पौधों की देखभाल करना, उपस्थिति सुनिश्चित करने में मदद करना, मदद की ज़रूरत वाले बच्चों को सहयोग देना आदि। संक्षेप में, यह स्कूल के कामकाज के लिए भागीदारी पर आधारित व्यवस्था और संस्कृति होगी। इसमें सदस्य, सूचना-सम्पन्न फ़ैसले लेने की प्रक्रियाओं का हिस्सा हो सकते हैं - मिसाल के तौर पर समयसारणी, स्कूल की गतिविधियों, कार्यक्रमों तथा अन्य ऐसे ही कार्यक्षेत्रों के बारे में फ़ैसले लेने की प्रक्रियाएँ। इससे सम्पूर्ण ढाँचे की संरचना में रहते हुए विद्यार्थी आपसी तालमेल के साथ काम करने के एहसास को विकसित कर पाएँगे। वे अलग दृष्टिकोण होने पर बहुमत द्वारा लिए गए फ़ैसलों को स्वीकार करना सीख पाएँगे। साथ ही, वे खुले मन और सकारात्मकता के साथ आलोचना व सुझावों को स्वीकारते हुए समीक्षा करने तथा योजना बनाने में भी शामिल हो सकते हैं। ये समूह वार्तालाप के ऐसे मंचों के रूप में भी काम करेंगे जहाँ विद्यार्थी स्कूल के फ़ैसलों के बारे में सवाल पूछ सकते हैं।

कॉमन स्कूल के विचार के सबसे नज़दीक पब्लिक यानी सार्वजनिक स्कूल हैं क्योंकि वे विभिन्न पृष्ठभूमियों के बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं। स्कूल, बच्चों के लिए साथ खेलने, एक-दूसरे को सुनने-सुनाने और मिल-बाँट कर भोजन करने के लिए एकत्र होने का स्थान है। यहाँ वे आचरण के तौर-तरीक़े सीखते हैं। एक-दूसरे से भाषा, विचार और खेलों के बारे में भी सीखते हैं। स्कूल के माहौल में वे कई तरह के संस्कारों तथा रस्म-रिवाज़ का पालन करते हैं या उनमें भागीदारी करते हैं, जिसके चलते वे लोगों के कुछ तबक़ों को घिनौने रूप में चित्रित किए जाने के झूठे अभियानों का विरोध करना सीख सकते हैं। आधी छुट्टी के दौरान एक-दूसरे के साथ मिल-बाँट कर भोजन करने से या मध्यान्ह भोजन के दौरान साथियों के तौर पर एक-दूसरे की बगल में बैठने से कई तरह के अवरोध धराशायी होते हैं।

लेकिन यह सब तभी मुमकिन है अगर स्कूल भ्रातृत्व की भावना का आदर करता है और स्वयं विद्यार्थियों के बीच कोई फ़र्क़

नहीं करता; उन्हें प्रोत्साहित करता है कि वे जाति, समुदाय, परिवारों के पेशों और आर्थिक हालात को दरकिनार करते हुए दोस्त, सहयोगी, टीम के सदस्य बनाएँ। एक टीम के तौर पर मिलकर खेलना, हार-जीत के बीच नतीजों को स्वीकार करना सीखना, स्कूल के लिए सांस्कृतिक तथा अन्य गतिविधियों और कार्यों में एक-दूसरे के साथ रहना – इन सबसे बच्चे ऐसी समझ विकसित कर पाते हैं जो कई चुनौतियों का सामना कर सकती है।

इन्साफ़ का विचार अच्छे से दिमाग़ में घर कर जाए, इसके लिए अनिवार्य है कि विद्यार्थियों को पारदर्शी और निष्पक्ष प्रतिक्रियाएँ दी जाएँ। स्कूल का आन्तरिक कामकाज और गतिविधियाँ स्कूल के छोटे संसार में विविधता की स्वीकृति को विकसित करने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। मिसाल के तौर पर साथ मिलकर काम करने के अनुभव, पारदर्शी बरताव और मिश्रित समूहों को सुनिश्चित करना। इसके साथ-साथ यह सब कुछ व्यापक समाज और उसकी चुनौतियों में ख़ुद को तल्लीन करने के लिए एक तैयारी का काम भी करता है। इस तैयारी में व्यापक तथा बड़े संसार को प्रभावित करने वाले सरोकारों के साथ रिश्ता बनाना भी शामिल होगा। इसमें ये सब तत्व शामिल रहेंगे – वर्तमान घटनाओं की चर्चा और ज्ञान के माध्यम से दूसरों से,; जो कुछ अनजाना है, जिससे अभी तक मुलाक़ात नहीं है, उस सबसे और उससे जुड़ी चुनौतियों से भी सरोकार रखना; साम्प्रदायिक मुद्दों से प्रभावित होने से बचना व उसके इर्द-गिर्द होने वाली लामबन्दियों को होने से रोकना; हमारी आँखों के सामने घटित होने वाले बड़े संकटों (मसलन, मौजूदा महामारी के समय में लोगों द्वारा बड़े पैमाने पर पलायन) से जुड़ी चिन्ताग्रस्त प्रतिक्रिया का होना; पर्यावरण से सम्बद्ध दायित्वपूर्ण तरीक़ों को प्रोत्साहित करना; उसमें आ रही गिरावट को रोकना, टिकाऊ पदार्थों, उत्पादों और तरीक़ों के प्रयोग को प्रोत्साहित करना और उपभोक्तावाद से बचना। ये सामाजिक दायित्वों के बारे में जागरूक होने के तरीक़े हैं और इस जागरूकता के लिए सामुदायिक परियोजनाओं में भाग लिया जा सकता है और किसी-न-किसी तरह उन सामाजिक दायित्वों पर काम भी किया जा सकता है।

सार-संक्षेप

इसमें से बहुत कुछ ऐसा है जो कर पाना स्कूलों के लिए आसान नहीं है। लेकिन बच्चों को समर्थ बनाने वाले माहौल को बेहतर बनाने का प्रयास तो निश्चित ही किया जा सकता है। स्कूल ऐसे छोटे और बड़े सन्दर्भों के आर-पार संवाद की शुरुआत कर सकता है जिनके बारे में बच्चे जागरूक हो सकते हैं - और उनसे प्रभावित भी हो सकते हैं। बच्चा स्कूल के बाहर और समुदाय में कुछ काम हाथ में लेता है तो ये उसके सामाजिक तौर पर ज़िम्मेदार और अच्छा नागरिक होने के संकेत हैं। टीमों और समूहों में धर्म-निरपेक्ष हिस्सेदारी और ग़ैर-साम्प्रदायिक दोस्तियाँ करना विभिन्नताओं के आर-पार भ्रातृत्व की भावना सुनिश्चित करता है। इसके लिए ज़रूरी है कि बच्चे टीम-खेलों में भाग लेने, स्कूल-कार्यों के लिए संयुक्त ज़िम्मेदारी लेने, छोटे-बड़े आयोजन करने, विविध प्रकार की ज़रूरतों के माध्यम से एक-दूसरे की मदद करने जैसे काम करें।

लेकिन इस सबसे भी बढ़कर नागरिकता में प्रशिक्षित होने की माँग है कि बच्चे आत्मविश्वास के साथ नया ज्ञान हासिल करने का सामर्थ्य विकसित कर पाएँ, जो वे पठन-पाठन एवं अन्य स्रोतों के माध्यम से कर सकते हैं; वे स्वयं को तार्किकता और स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त कर पाएँ; ख़ुद की एक सकारात्मक छवि रख पाएँ; उनके पास नैतिकता का एक मज़बूत तंत्र हो और वे निडर हों। नागरिकता का अर्थ है कि प्रत्येक शिक्षार्थी अपने महत्त्व को लेकर विश्वस्त हो और अपनी भूमिका के प्रति ज़िम्मेदार हो।

स्कूल के लिए यह सम्भव कर पाना बहुत कुछ इस बात पर बहुत निर्भर करता है कि न केवल शिक्षकों की बल्कि पूरे स्टाफ़ की एक प्रतिबद्ध टीम हो। एक ऐसा माहौल हो जिसमें यह टीम सुरक्षित और सुनिश्चित महसूस करे, और उसमें नागरिकता का बोध हो। उनमें अभिभावकों समेत बाहर की दुनिया के साथ संवाद कर पाने का विश्वास होना चाहिए – यह जानते हुए कि शायद यह संवाद हमेशा सामंजस्यपूर्ण नहीं होगा और न ही ऊपर वर्णित मूल्यों से मेल खाने वाला होगा। इसके लिए ज़रूरत होगी कि वे नागरिकता को समझ पाएँ और उनमें यह भी समझ पाने की क्षमता हो कि वे स्कूल के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण में क्या कुछ लागू करवाने की स्थिति में हैं। वे अपने पूर्वाग्रहों तथा वफ़ादारियों को एक तरफ़ रखते हुए खुली और न्यायसंगत बातचीत के लिए तैयार हों ताकि बच्चे मानवतावादी और संवैधानिक मूल्यों से रंगे अपने खुद के तर्कसंगत नज़रिए बनाना सीख पाएँ।

References

National Education Policy 2020, Department of Education Government of India, Delhi

National Curriculum Framework 2005, NCERT

Dewan Hriday Kant, (2017) Curricula: What can the school do in the life of the child, Voices of Teachers and Teacher Educators, 8-15, NCERT, August 2017, New Delhi

हृदय कान्त दीवान इस समय अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के 'अनुवाद पहल' के साथ कार्यरत हैं। वे *एकलव्य* के संस्थापक समूह के सदस्य रहे हैं और विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर के शिक्षा-सलाहकार हैं। वे शिक्षा के क्षेत्र में पिछले 40 साल से अलग-अलग हैसियत में रहते हुए काम करते रहे हैं। वे विशेष तौर से शैक्षिक नवाचारों और राज्य के शैक्षणिक ढाँचों में सुधार के प्रयासों से जुड़े रहे हैं। उनसे hardy@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** रमणीक मोहन

पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से नागरिकता का निर्माण

रूपमंजरी हेगड़े

नागरिकता शिक्षा को दुनिया के विभिन्न हिस्सों में नागरिकशास्त्र, नागरिकता शिक्षा या सक्रिय नागरिकता के लिए शिक्षा जैसे नामों से जाना जाता है। इसका उद्देश्य आमतौर पर विद्यार्थियों में ऐसे ज्ञान, कौशलों और प्रवृत्तियों का विकास करना होता है, जो उन्हें एक लोकतांत्रिक समाज में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए तैयार करें। इसका शिक्षण अक्सर छोटे बच्चों में अपने कर्तव्यों, ज़िम्मेदारियों और अधिकारों के बारे में जागरूकता का विकास करता है ताकि वे प्रभावी रूप से राष्ट्रीय विकास और राष्ट्र निर्माण में योगदान दे सकें। उदाहरण के लिए, एनसीईआरटी की नागरिकशास्त्र की कुछ पाठ्यपुस्तकों (1975-2000) में, शिक्षार्थी को यह बात लगातार याद दिलाई जाती है कि वह अपने भीतर एक नागरिक के उपयुक्त गुणों को विकसित करे। जैसे कि विवेकपूर्ण आचरण, आपसी सहयोग और अपने साथी नागरिकों की चिन्ता। ऐसा करके वे अपने परिवार, समुदाय और वृहत समाज के प्रति अपने दायित्वों को पूरा कर सकते हैं।

लेकिन व्यक्ति के लिए केवल एक नागरिक होना ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि उसे कुछ अन्य गुणों को आत्मसात करके एक अच्छा नागरिक (एनसीईआरटी 1988:49) बनने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जैसे : 'देश के नियमों' (पूर्वोक्त) का पालन करना, ख़ुद को 'देश की घटनाओं और समस्याओं के बारे में अच्छी तरह से सूचित' रखना (एनसीईआरटी 2003:186), और राष्ट्र के हित को प्राथमिकता देना – ताकि वह देश के लिए उपयोगी साबित हो सके। हालाँकि, इन पाठ्यपुस्तकों में शिक्षार्थियों को अपने 'अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में सचेत रहने' (पूर्वोक्त) के लिए कहा गया है, लेकिन ज़ोर स्पष्ट रूप से उन कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों पर दिया गया है, जिन्हें आत्मसात करने की अपेक्षा उनसे की जाती है।

लेकिन किसी लोकतंत्र के भीतर नागरिकता सिर्फ़ *कर्तव्यों तक सीमित* नहीं होती, बल्कि उन *अधिकारों* का सवाल भी होती है जिनकी गारंटी संविधान द्वारा दी जाती है और जिनके तहत प्रत्येक नागरिक को उसके वर्ग, लिंग, धर्म, जाति और जातीय समूह की परवाह किए बग़ैर क़ानूनी दर्जा दिया जाता है। वह कई तरह के अधिकारों का हक़दार होता है और उससे यह अपेक्षा की जाती हो कि वह राष्ट्र के साथ तादात्म्य और अपनेपन की भावना विकसित करे (जयल 2013:2)। क्या एक पाठ्यपुस्तक, जिसे अलग तरह से तैयार किया गया हो, सोचने के उस तरीक़े में बदलाव ला सकती है जिस तरीक़े से राष्ट्र, नागरिकता और पहचान के विचारों की कल्पना की गई हो?

विद्वानों ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 (एनसीएफ़ 2005)[i] की इस बात के लिए प्रशंसा की है कि इसमें बहुत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं (बत्रा 2010:13)। एनसीएफ़ में, यह तर्क दिया गया है कि नागरिकता शिक्षा मानवाधिकारों और आलोचनात्मक शिक्षणशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में स्थित है और इसमें समता और सामाजिक न्याय के मुद्दों को शामिल किया गया है ताकि हाशिए के समुदायों के दृष्टिकोणों को भी जगह मिले। 'भारतीय राष्ट्र की कल्पना करने के कई तरीक़ों' और लिंग सम्बन्धी सरोकारों पर ज़ोर देने की दिशा में भी प्रयास किए गए हैं।

इस लेख में पर्यावरण अध्ययन (EVS) और सामाजिक विज्ञान की कुछ पाठ्यपुस्तकों जैसे *लुकिंग अराउंड* (कक्षा III-V) और *सोशल एंड पॉलिटिकल लाइफ़* (कक्षा VI-VIII) शृंखलाओं की पड़ताल की गई है। यह समझने की कोशिश की है कि इस तरह के नए दृष्टिकोणों को इन पाठ्यपुस्तकों में किस हद तक एक ठोस रूप दिया गया है।

पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से परिलक्षित होने वाले परिवर्तन केवल तभी सार्थक होते हैं, जब वे कक्षा की शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से बदलने में सक्षम हों। इसे शिक्षक के सक्रिय हस्तक्षेप के द्वारा किया जा सकता है। इस लेख में इस बात की जाँच भी की गई है कि शिक्षकगण भविष्य के नागरिकों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका कैसे निभा सकते हैं।

राष्ट्र की कल्पना करना

पाठ्यपुस्तकों में नागरिकता का निर्माण आमतौर पर यह दर्शाता है कि राष्ट्र की कल्पना कैसे की गई है। इस कल्पना के भीतर कौन वैध नागरिकों के रूप में शामिल है और कैसे? किन्हें छोड़ दिया गया है? ये प्रश्न एक समीक्षात्मक विश्लेषण की माँग करते हैं। स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ़एसई) 2000, और इसका अनुसरण करने वाली अँग्रेज़ी और सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों की

इस बात के लिए कड़ी आलोचना की गई कि इसमें एक ऐसी राष्ट्रीय पहचान की बात की गई है जो कि बहुसंख्यकवाद और पितृसत्तात्मक थी, जिसने भारतीय समाज के बहुलवादी चरित्र को कमज़ोर कर दिया। इसके विपरीत एनसीएफ़ 2005, एक ऐसी शिक्षा प्रणाली का प्रस्ताव करता है जो 'हमारे समाज में निहित सांस्कृतिक बहुलवाद' के अनुकूल हो (NCF 2005:7) और जिसके परिणामस्वरूप एक मज़बूत लोकतांत्रिक राज्यतंत्र बना रहेगा (पूर्वोक्त)। इस प्रकार एनसीएफ़ धर्मनिरपेक्षता, समतावाद, बहुलवाद और सामाजिक न्याय के आदर्शों के आधार पर एक राष्ट्रीय पहचान की बात को दोहराता है।

लुकिंग अराउंड (एलए)[ii] और *सोशल एंड पॉलिटिकल लाइफ़ (एसपीएल)*[ii] शृंखला की सूक्ष्म पड़ताल से ऐसे समाज का पता चलता है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों, सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक सन्दर्भों वाले लोग बसे हुए हैं। ये नागरिक देश के अलग-अलग क्षेत्रों और स्थानों के रहने वाले हैं जैसे मुम्बई जैसे महानगरों के (शान्ति की कहानी, एसपीएल III:67), आन्ध्र प्रदेश के कुरनूल जैसे परिनगरीय क्षेत्रों के (स्वप्ना की कहानी, एसपीएल II:105) मध्य प्रदेश के भीतरी इलाक़ों के (तवा मत्स्य संघ की कहानी, एसपीएल II:118), उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्रों के (दादू की कहानी, एसपीएल III:81-82) आदि। भोजन, कपड़ों और आवास की स्थापत्य परम्पराओं से सम्बन्धित क्षेत्रीय विशिष्टताओं को भी चित्रित किया गया है। उदाहरण के लिए, *फूड वी ईट* (एलए I) शीर्षक पाठ में कश्मीर से केरल तक भारत के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले लोगों की विविध खाद्य आदतों के बारे में बताया गया है। इसी पाठ्यपुस्तक के ए *हाउस लाइक दिस* नामक पाठ में भूपेन (असम), नसीम (श्रीनगर), चमेली (मनाली), कांशीराम (राजस्थान) और मिताली (दिल्ली) जैसे पात्र हैं जो एक-दूसरे को यह बता रहे हैं कि कैसे उनके घर स्थानीय पर्यावरण की आवश्यकताओं के अनुसार अलग-अलग तरीक़े से निर्मित किए गए हैं। ज़्यादातर उदाहरणों में लिखित विवरणों के साथ प्रासंगिक रंगीन चित्र भी दिए गए हैं ताकि बच्चे उन पाठों में दी गई जानकारियों की कल्पना कर सकें।

इन पाठ्यपुस्तकों में दिए गए सामाजिक-सांस्कृतिक विवरण भी बहु-धार्मिक हैं। विभिन्न अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्यों की उपस्थिति से यह बात स्पष्ट हो जाती है, जैसे अनवरी एक मुसलमान धोबिन है (एलए III:26), मेलनी लोगों के घरों में काम करने वाली ईसाई महिला है (एसपीएल II:49) और जसप्रीत एक सिख उच्च मध्यम वर्गीय गृहिणी है (एसपीएल II:47)। इस प्रकार ये पाठ्यपुस्तकें भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक दायरे को समतलित और एक जैसे रूप में पेश करने की प्रवृत्ति को चुनौती देती हैं। वे भारतीय राष्ट्र के बहुलतावादी, विविध और बहु-सांस्कृतिक चरित्र को बनाए रखती हैं।

सांस्कृतिक विविधता और आर्थिक विषमता

एनसीईआरटी की पहले की कुछ पाठ्यपुस्तकें (1975-2004) सांस्कृतिक विविधता को केवल शक्ति के स्रोत के रूप में चित्रित करती हैं और ऐसा करते हुए वे आर्थिक असमानता और सामाजिक-सांस्कृतिक असंगति की अनदेखी करती हैं। इसके विपरीत एलए और एसपीएल दोनों शृंखलाएँ सांस्कृतिक विविधता के बारे में समस्यात्मक दृष्टिकोण पेश करती हैं। विविधता के लाभों को इंगित करने के साथ-साथ इस ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया है कि कैसे सामाजिक-आर्थिक भेदों से उत्पन्न विविधता अक्सर असमानता और भेदभाव की ओर ले जाती है। उदाहरण के लिए, *फूड वी ईट* (एलए I:36-42) शीर्षक पाठ एक विचारोत्तेजक दृश्य के साथ शुरू होता है, जिसमें विभिन्न पृष्ठभूमियों वाले बच्चों का एक समूह दिखाया गया है, जो इस बात पर चर्चा कर रहे हैं कि उन्होंने पिछली रात को क्या खाया था। बच्चे 'पूरी, खीर, ऑमलेट' या 'मछली' या 'दाल-चावल' जैसे स्वादिष्ट भोजन के बारे में बात कर रहे होते हैं, एक बच्चा बताता है उसने उन (बचे हुए) नूडल्स का आनन्द लिया जिन्हें उसकी माँ उस घर से लाई थी जहाँ वह काम करने जाती है। एक अन्य बच्ची बताती है कि उसके घर तो 'खाना ही नहीं बना था।' यह बातचीत न केवल सांस्कृतिक विविधता पर प्रकाश डालती है, बल्कि हमारे समाज में मौजूद कठोर आर्थिक असमानताओं की ओर भी ध्यान आकर्षित करती है। इन दृश्यों के बाद विचारोत्तेजक प्रश्नों की एक शृंखला है, जिससे बच्चों को इस मुद्दे के साथ गहराई से जुड़ने का मौक़ा मिलता :

- *आपने चित्र में देखा होगा कि एक बच्ची के घर में खाना बना ही नहीं था। इसकी क्या वजह हो सकती है?*
- *क्या आपके साथ कभी ऐसा हुआ है कि आपको भूख लगी हो लेकिन खाने के लिए कुछ नहीं हो? यदि हाँ तो क्यों?*

ये पाठ्यपुस्तकें ग्रामीण और शहरी स्थानों को दोहरे रूप में चित्रित नहीं करतीं। न तो उन्हें रमणीय स्थानों के रूप में दिखाती हैं और न ही कई समस्याओं से ग्रस्त बताती हैं। ये उन्हें वर्ग और जाति के पदानुक्रम द्वारा स्तरीकृत किए गए संघर्ष से भरे ऐसे स्थानों के रूप में दर्शाती हैं, जहाँ विभिन्न हित अपना हक़ पाने के लिए समझौते और संघर्ष करते हैं। चाहे वह शहरी सन्दर्भ हो या ग्रामीण, एलए और एसपीएल शृंखला में लोगों को विभिन्न सामाजिक स्तरों से सम्बन्धित दिखाया गया है, जिनकी आजीविका के प्रकार और जीवन जीने के

छोटू का घर, आस-पास, कक्षा तीन की पाठ्यपुस्तक, एनसीईआरटी 2006

स्तर बहुत विविध हैं। ये पाठ्यपुस्तकें इस बात पर भी प्रकाश डालती हैं कि कैसे इन दोनों सामाजिक क्षेत्रों में आम नागरिक एक गरिमापूर्ण जीवन जीने के उनके बुनियादी अधिकारों की पूर्ति के लिए संघर्ष करते हैं।

उदाहरण के लिए, एलए और एसपीएल शृंखला में कृषि समुदाय के बीच गहरा विखण्डन दिखाई देता है जिसमें ज़मीन के मालिक समृद्ध किसान (रामलिंगम, एसपीएल I:71), छोटे किसान (शेखर, एसपीएल I:70), और भूमिहीन खेतिहर मज़दूर (धनु, एलए II:200; तुलसी, एसपीएल I:68) हैं जो जीविकोपार्जन के लिए संघर्षरत हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मछली पकड़ने, बुनाई, पशुपालन और रक़म उधार देने (अध्याय 22, एलए II; अध्याय 8, एसपीएल I) जैसी विभिन्न ग़ैर-कृषि गतिविधियों पर निर्भर दिखाया गया है। किसान सरीखे ग्रामीण नागरिकों को जिन मुश्किलों का सामना करना पड़ता है (शेखर, एसपीएल 1:70 फ़सल ठीक से न होना, ऋण और आत्महत्या), वे भी उजागर किए गए हैं।

एलए और एसपीएल शृंखला में शहरी परिदृश्य को न केवल गगनचुम्बी इमारतों, तेज़ गति से चलने वाले वाहनों के आवागमन, आलीशान अस्पतालों और शानदार ढंग से बनाए गए शॉपिंग मॉल के माध्यम से दर्शाया गया है, बल्कि इसमें श्रमिक वर्ग के अस्वास्थ्यकर इलाक़े, भीड़-भाड़ वाले सरकारी अस्पताल और सड़क के किनारे खुले बाज़ार भी दिखाए गए हैं। विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्तरों के लोग शहर का पारिस्थितिकी-तंत्र बनाते हैं। यहाँ, अत्यधिक सम्पन्न उद्योगपतियों, उच्च-मध्यम और मध्यम-वर्ग के सलाहकारों व सरकारी कर्मचारियों तथा निम्न-मध्यम वर्ग और श्रमिक वर्ग के लोगों (जैसे कारख़ानों के श्रमिक, सड़क के किनारे सामान बेचने वाले, लोगों के घरों में काम करने वाले, कारीगर, रिक्शा वाले, दिहाड़ी मज़दूर व बेघर, सड़क पर भटकते बच्चों) को साथ में रहते हुए दिखाया गया है। शहरी लोगों को अपनी अलग तरह की समस्याओं के साथ संघर्ष करते हुए दिखाया गया है। जैसे कि रहने के अस्वच्छ हालात (कान्ता की कहानी, एसपीएल II:4-5), पानी जैसी बुनियादी सुविधाओं की कमी (नन्दिता कम्स टु मुम्बई, एलए कक्षा IV; चेन्नई के नागरिकों के मामलों का अध्ययन, एसपीएल III:106-107) के साथ ही घर न होने की समस्या (छोटू का घर, एलए, कक्षा III)।

लिंग सम्बन्धी सरोकारों को सामने रखना

वैसे तो एनसीईआरटी की नागरिकशास्त्र की जो पाठ्यपुस्तकें पहले थीं (2002-2004), उनमें दोनों लिंगों का प्रतिनिधित्व अच्छी तरह से किया गया है। लेकिन उनमें दिए गए चित्र श्रम के विभाजन के सम्बन्ध में कुछ रूढ़िबद्ध सामाजिक धारणाओं को मज़बूत करते हैं। सरोजिनी नायडू और विजयलक्ष्मी पण्डित (एनसीईआरटी 2003:176) जैसी प्रतिष्ठित हस्तियों को छोड़ दें तो इन पाठ्यपुस्तकों (एनसीईआरटी 1987; एनसीईआरटी 2002) में महिलाओं को मुख्यतः एक पोषणकर्ता और देखभाल करने वाली के रूप में दिखाया गया है (गृहिणी, नर्स)।

एलए और एसपीएल शृंखला में हम महिलाओं को पुरुषों के साथ समान मंच साझा करते हुए पाते हैं। पण्डिता रमाबाई और रुकैया सखावत हुसैन जैसी प्रतिष्ठित हस्तियों के योगदान पर तो चर्चा है ही, लेकिन साथ ही, कुछ सफल महिलाओं की उपलब्धियों से परे जाने का विशेष प्रयास भी किया गया है। ये पाठ्यपुस्तकें विभिन्न सामाजिक समूहों से सम्बन्धित सामान्य महिलाओं के उदाहरणों से भरी हुई हैं जो न सिर्फ़ परिवार की आय में, बल्कि समुदाय और राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक विकास में भी सक्रिय रूप से योगदान दे रही हैं। उन्हें न केवल अपनी पारम्परिक, देखभाल करने वाली गृहिणी की भूमिका में दिखाया गया है – (शबनम बानो, एसपीएल II:5), बल्कि परिवार के कमाऊ सदस्यों के रूप में भी दिखाया गया है। जैसे हाथ से मैला ढोने वाली (एलए III:147; एसपीएल III:101), मछुआरिन (अरुणा, एसपीएल I:73), घरेलू सहायिका (एलए I:83; मेलनी, एसपीएल II:49), धोबन (अनवरी, एलए I:27), मधुमक्खी-पालक (अनीता, एलए III:38) और कारख़ाने की मज़दूर (एसपीएल II:109)। उन्हें शिक्षिकाओं (मनजीत कौर, एसपीएल II:4), सरकारी कर्मचारियों (यास्मीन, एसपीएल I:57), व्यावसायिक उद्यमियों (वन्दना, एसपीएल I:80-81) और वकीलों (कमला रॉय, एसपीएल III:69-70) के रूप में कई व्यवसायों में काम करते हुए भी दिखाया गया है।

कई कहानियों के माध्यम से कामकाजी महिलाओं को होने वाली समस्याओं के बारे में बताया गया है। यहाँ, आय के अनियमित स्रोत और कम आमदनी के कारण पीड़ित तुलसी जैसी भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों तथा कारख़ानों में अनियमित आधार पर काम करके नाज़ुक स्थिति का सामना कर रही निर्मला जैसी महिला-श्रमिकों की कहानियों का उल्लेख करना आवश्यक है।

एसपीएल शृंखला में पाठकों को यह अवसर दिया गया है कि वे यह समझ सकें कि लिंग सम्बन्धी रूढ़िवादिता एक सामाजिक रचना है। लिंग रूढ़िवादिता और गृहिणी व देखभाल करने वाली के रूप में महिलाओं का अवमूल्यन समाज में विभिन्न स्तरों और समुदायों में मौजूद है। इस तथ्य पर जसप्रीत, जो एक उच्च-मध्यम वर्गीय गृहिणी है (एसपीएल II:47-48) की कहानी और मेलनी, जो एक घरेलू सहायिका है, के जीवन अध्ययन (एसपीएल II:49) के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। घर के कामों की गरिमा और उसके महत्त्व पर ज़ोर देने का भी प्रयास है। उदाहरण के लिए पर्यावरण अध्ययन की एक पाठ्यपुस्तक में एक लड़की दीपाली (वर्क वी डू, एलए I:83) की कहानी है। वह एक सब्ज़ी विक्रेता और घरेलू सहायिका की सबसे बड़ी सन्तान है। दीपाली पर खाना पकाने और घर की सफ़ाई करने से लेकर अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल करने तक की ज़िम्मेदारी है, वहीं उसके माता-पिता गुज़र-बसर करने के संघर्ष में लगे रहते हैं। इस प्रकार यह कहानी बड़े सूक्ष्म लेकिन मज़बूत ढंग से जीवन की कठोर वास्तविकताओं की ओर ध्यान दिलाती है और यह बताती है कि ग़रीबी के कारण अक्सर लड़कियाँ स्कूल व पढ़ाई छोड़ने के लिए मजबूर हो जाती हैं।

ये पाठ्यपुस्तकें आगे इस मुद्दे पर भी चर्चा करती हैं कि पुरुषों के विपरीत महिलाओं को घर के काम-काज और रोज़गार के दोहरे बोझ को उठाना पड़ता है। इस मामले में हरियाणा और तमिलनाडु (एसपीएल II:50) में किए गए एक सर्वेक्षण का ज़िक्र किया गया है। घरेलू हिंसा (कुसुम और शाज़िया की कहानी, एसपीएल III:46-48) और दहेज के कारण होने वाली मौतों (सुधा गोयल की केस-स्टडी, एसपीएल III:58) जैसे लिंग आधारित भेदभाव के उदाहरणों का सन्दर्भ भी दिया गया है।

नागरिकता का निर्माण

ऊपर इस बात का उल्लेख किया गया है कि कैसे पहले की एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकों (1975-2004) में नागरिकता कर्तव्यों की धारणा पर टिकी हुई थी और अधिकारों के सवाल को कम महत्त्व दिया गया था। यह इस बात से स्पष्ट है कि शिक्षार्थी को बार-बार यह याद दिलाया जाता है कि उसे *उचित गुणों* का विकास करना चाहिए ताकि वह राष्ट्र निर्माण में योगदान दे सके और इस प्रकार एक ज़िम्मेदार और कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बन सके।

इसके अलावा, इन पाठ्यपुस्तकों में राज्य को हमेशा एक अखण्ड, पितृतुल्य और परोपकारी संरचना के रूप में चित्रित किया गया है जो नागरिकों की भलाई का ध्यान रखता है। इनमें राज्य-तंत्र के काम-काज में होने वाली ऐसी किसी भी सम्भावित चूक/अनाचार के बारे में या इस तरह की कमियों को सरकार द्वारा लोकतांत्रिक तरीक़े से कैसे दूर किया जा सकता है, इस बारे में चर्चा की बहुत कम गुंजाइश है।

सामाजिक विषमता को चुनौती

एसपीएल शृंखला में, नागरिकता को नागरिक के अधिकारों के ढाँचे के भीतर परिभाषित किया गया है। यहाँ पर नागरिकता को केवल राजनीतिक अधिकारों (अधिकार जो लोकतंत्र में सभी वयस्क नागरिकों को समान के रूप में मतदान करने में सक्षम बनाते हैं चाहे उनकी सामाजिक स्थिति कुछ भी हो) के सन्दर्भ में परिभाषित करने से परे जाने का प्रयास किया गया है। बल्कि, यह इस समानता को नागरिकों की ज़िन्दगियों की सामाजिक-आर्थिक वास्तविकता के भीतर रखकर उसके आधार पर ही प्रश्न उठाता है क्योंकि उनकी ज़िन्दगियाँ विभिन्न प्रकार की असमानताओं और अन्तरों से भरी पड़ी

हैं। उदाहरण के लिए, एक पाठ्यपुस्तक में एक ऐसी कहानी है जिसमें विभिन्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमियों के नागरिकों (एक शिक्षक, एक घरेलू सहायिका, एक सलाहकार, एक उद्योगपति) को किसी मतदान केन्द्र के सामने एक क़तार में खड़े हुए दिखाया गया है, जो यह बताता है कि नागरिकों के रूप में सभी की स्थिति समान है। लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतता है, घरेलू सहायिका कान्ता यह समझ जाती है कि यद्यपि वह अपने नियोक्ता, एक अमीर उद्योगपति श्री जैन के साथ एक ही क़तार में खड़ी होकर अपना वोट डाल सकती है, लेकिन उनके बीच अन्तरों की एक गहरी खाई है। अपने नियोक्ताओं के विशाल अपार्टमेंट के विपरीत, कान्ता को एक बेहद अस्वच्छ परिवेश की एक मलिन झुग्गी में रहते हुए दिखाया गया है और वह अपनी बीमार नाबालिग बेटी को घर पर अकेला छोड़कर काम पर जाने के लिए मजबूर है। अपना काम पूरा करने और अपने नियोक्ता से कुछ पैसे उधार लेने के बाद ही शाम को जाकर वह अपनी बेटी को डॉक्टर के पास ले जा पाती है। वह सोचने लगती है, "भले ही हम वोट देने के लिए एक ही क़तार में खड़े हो जाएँ, लेकिन क्या हम वास्तव में बराबर हैं?" (एसपीएल II:4-6)।

हमारे समाज में मौजूद इन्हीं असमानताओं की पृष्ठभूमि में ये पाठ्यपुस्तकें उन नागरिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकारों के महत्त्व की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं जो मौलिक अधिकारों के रूप में संविधान में निहित हैं। पाठ्यपुस्तकों में विशेष रूप से समानता के अधिकार (अनुच्छेद 15) और जीवन के अधिकार (अनुच्छेद 21) का ज़िक्र किया गया है। कई लोगों के मामलों के अध्ययन के माध्यम से ये पाठ्यपुस्तकें यह दिखाने का प्रयास करती हैं कि जब इन अधिकारों का इस्तेमाल किया जाता है तो ये न केवल सामाजिक असमानताओं को चुनौती दे सकते हैं बल्कि सभी नागरिकों के लिए एक सम्मानजनक जीवन सुनिश्चित कर सकते हैं। ये पाठ्यपुस्तकें आगे इस बात पर भी प्रकाश डालती हैं कि हालाँकि, संविधान में अधिकारों को सुनिश्चित किया गया है, लेकिन नागरिकों के लिए अपने अधिकारों का आसानी से प्रयोग कर पाना हमेशा सम्भव नहीं हो पाता। बल्कि, इन अधिकारों को व्यक्तियों, समूहों, संस्थानों और यहाँ तक कि राज्य द्वारा भी बार-बार चुनौती दी जाती है, उनके रास्ते में अवरोध उत्पन्न किए जाते हैं और उनका अतिक्रमण किया जाता है। अधिकांश मामलों में यह भी देखा जाता है कि नागरिकों को कुछ सामाजिक भेदभावों का सामना करना पड़ता है, जो या तो जाति-आधारित होते हैं (बीआर अम्बेडकर, एसपीएल:19-20 और ओम प्रकाश वाल्मीकि, एसपीएल II:7-8 की कहानियाँ) या लिंग-आधारित (जसप्रीत की कहानी, एसपीएल II:47-48) और या धर्म-आधारित (अंसारियों की कहानी, एसपीएल II:8)। इनमें ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जहाँ नागरिक की आर्थिक पृष्ठभूमि के कारण समाज के अधिक सम्पन्न और शक्तिशाली वर्गों द्वारा उसका शोषण किया जा सकता है (भूमिहीन मज़दूर ओम प्रकाश की कहानी, एसपीएल I:44-45)।

राज्य को जवाबदेह ठहराना

एसपीएल पाठ्यपुस्तकों में ऐसे कई उदाहरण भी हैं जो विभिन्न सरकारी विभागों के काम-काज में उन ख़ामियों की बात करते हैं, जिनके परिणामस्वरूप नागरिक अपने वैध अधिकारों से वंचित हो जाते हैं। कुछ कहानियाँ स्पष्ट रूप से राज्य द्वारा जानबूझकर किए गए कुछ कार्यों और उत्साहहीन रवैये को दर्शाती हैं (जैसे कारख़ाने के श्रमिकों और नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने में राज्य की विफलता, भोपाल गैस त्रासदी पर फोटो-निबन्ध, एसपीएल III:124-127)। कुछ मामलों में यह भी दर्शाया गया है कि कैसे राज्य नागरिकों के अधिकारों का अतिक्रमण करने के लिए जानबूझकर उपाय करता है (जैसा कि वनवासियों के मामले में, तवा मत्स्य संघ की कहानी, एसपीएल II:117-119)।

अधिकारों को पुनः प्राप्त करना

इन पाठ्यपुस्तकों के बारे में असाधारण बात यह है कि यहाँ नागरिकता का निरूपण सिर्फ़ नागरिकों के अधिकारों के बारे में चर्चा करने तक या व्यक्तियों और समूहों को इस तरह के अधिकारों से कैसे वंचित किया जाता है, यह बताने तक सीमित नहीं है। बल्कि, इनमें की गई चर्चा इस बात की सम्भावनाओं को दिखाती है कि इस तरह के अधिकारों को कैसे हासिल किया जाए और छिन जाने पर पुनः हासिल किया जाए। सामाजिक वर्ग कोई भी हो, कई नागरिक अपनी क्षमता का उपयोग करते दिखाए गए हैं। उदाहरण के लिए, महिलाओं को अपने अधिकार अलग-अलग तरीक़ों से पुनः प्राप्त करते हुए दिखाया गया है – प्रचलित सामाजिक मानदण्डों और पूर्वाग्रहों को चुनौती देते हुए (रमाबाई, एसपीएल II:59) या अपनी तीव्र इच्छाशक्ति के बल पर अपनी आकाँक्षाओं को पूरा करते हुए (लक्ष्मी लकरा, एसपीएल II:57)। ऐसे उदाहरण भी दिखाए गए हैं जहाँ नागरिक क़ानूनी सहायता लेते हैं और पुलिस जैसे विभिन्न राज्य संस्थानों को हस्तक्षेप करने के लिए कहते हैं (मोहन की कहानी, जिसने अपनी ज़मीन पर अतिक्रमण करने वाले अपने पड़ोसी के ख़िलाफ़ स्थानीय पुलिस स्टेशन में एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की (एसपीएल I:49-50)। जब उनके अधिकारों का हनन होता है तो वे न्यायपालिका के पास भी जाते हैं। यहाँ पर एक कृषि मज़दूर हाकिम शेख़ के मामले पर ध्यान दिलाना आवश्यक है, जो एक गम्भीर दुर्घटना के बाद सरकारी अस्पतालों के ख़िलाफ़ अदालत में मामला दायर करते हैं क्योंकि इन अस्पतालों ने उनका इलाज करने से इन्कार कर दिया था (एसपीएल II:21)।

सामूहिक कार्रवाई

इन पाठ्यपुस्तकों में, नागरिकों द्वारा सहकारी समितियों के गठन और सामाजिक आन्दोलन चलाने जैसी सामूहिक कार्रवाइयों को भी अपने मौलिक अधिकारों को फिर से हासिल करने का एक और सही तरीक़ा माना गया है। ये पाठ्यपुस्तकें सामाजिक भेदभाव के ख़िलाफ़ समाज के शिक्षित मध्य या उच्च-मध्य वर्गों द्वारा किए गए संघर्षों का भी हवाला देती हैं (उदाहरण के लिए, घरेलू हिंसा अधिनियम को पारित करने के लिए लॉयर्स कलेक्टिव और राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा किए गए योगदान पर कहानी, एसपीएल III:46-48)। लेकिन, कई स्थानों पर ऐसे सामूहिक मोर्चे की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है, जो आम नागरिकों, विशेष रूप से हाशिए पर रहने वाले लोगों द्वारा बनाए गए हैं। इन लोगों को सार्वजनिक रैलियों और विरोध जुलूसों में भाग लेते हुए, सार्वजनिक सुनवाई करते हुए, धरनों पर बैठे हुए और नाटक, गीत व रचनात्मक लेखन जैसे नूतन साधनों का प्रयोग करके अपना असन्तोष व्यक्त करते हुए दिखाया गया है। इन पाठ्यपुस्तकों में दिए गए कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं तवा मत्स्य संघ (एसपीएल II:118) द्वारा मध्य प्रदेश में विस्थापित वनवासियों को उनकी आजीविका का अधिकार पुनः दिलाने के लिए किया गया संघर्ष, और समान नागरिकता अधिकारों को वापस हासिल करने के लिए महिलाओं का आन्दोलन (एसपीएल II:63-67)।

वैसे नागरिकों को हमेशा जीतते हुए नहीं दिखाया गया है। बल्कि, ये पाठ्यपुस्तकें नागरिकों को लड़ने की भावना से प्रेरित करती हैं और इस बात को स्पष्ट करती हैं कि किसी भी प्रकार के अन्याय और असमानता के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना न्यायोचित है और लोकतंत्र की भावना के हक़ में है। ये सब इस बात का प्रतीक हैं कि इन पाठ्यपुस्तकों में नागरिकता और नागरिकता शिक्षा की अवधारणा के दृष्टिकोण में निश्चित रूप से बदलाव आया है।

शिक्षक की भूमिका

ये पाठ्यपुस्तकें राष्ट्रीय कल्पना में नागरिकता की प्रकृति की रूपरेखा बता सकती हैं, लेकिन महत्त्वपूर्ण बात है कक्षा में विद्यार्थियों के लिए उस दृष्टि को स्पष्ट करने में शिक्षक की भूमिका। सबसे पहले तो यह बेहद महत्त्वपूर्ण है कि शिक्षक कक्षा के भीतर ऐसा वातावरण बनाएँ जहाँ विद्यार्थी किसी भी मुद्दे पर अपने विचारों और सोच को बेझिझक साझा कर सकें। ऐसा करने के पीछे यह विचार है कि एक ऐसी लोकतांत्रिक संस्कृति का निर्माण किया जाए जहाँ बच्चे विभिन्न दृष्टिकोणों को निडरता के साथ और खुलकर व्यक्त कर सकें, जहाँ उन्हें चुप न कराया जाए या उनके बारे में कोई राय न बना ली जाए।

शिक्षकों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करें कि वे पढ़ाए जा रहे विषय से सम्बन्धित ऐसे प्रासंगिक स्थानीय उदाहरणों को सामने रखें जो उनके अनुभवों पर आधारित हों।

महिलाएँ दुनिया बदलती हैं, एसपीएल II, एनसीईआरटी, 2007

इसके लिए ज़रूरी है कि शिक्षक विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक से परे ले जाएँ। इस तरह के अभ्यास न केवल कक्षा में होने वाली चर्चाओं को समृद्ध करेंगे बल्कि विद्यार्थियों को तथ्यों को रट लेने की आदत से बाहर निकालने से भी अन्ततः उनका सीखना मज़बूत होगा।

शिक्षक के लिए यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि बच्चे केवल पाठ्यपुस्तक से ही नहीं बल्कि प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सहित कई अन्य स्रोतों से भी ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसलिए, यह महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि शिक्षक प्रासंगिक स्थानीय और राष्ट्रीय मुद्दों के बारे में जागरूक रहें और जब भी आवश्यक हो, इन मुद्दों पर चर्चाओं के माध्यम से विद्यार्थियों को इनसे जोड़े रख सकें।

एसपीएल की एक पाठ्यपुस्तक में बताया गया है (शिक्षकों के लिए आरम्भिक टिप्पणी, एसपीएल III) कि यह शृंखला विशेष रूप से जाति, लिंग, वर्ग और धर्म पर आधारित असमानता के विशिष्ट रूपों के बारे में ख़ासतौर पर विचार करती है और इस बात की पूरी सम्भावना है कि कक्षा में ऐसे भेद नज़र आएँ। इस सन्दर्भ को ध्यान में रखते हुए, शिक्षकों के लिए यह बात और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है कि इस तरह के मुद्दों पर चर्चा करते समय वे अपेक्षित संवेदनशीलता दिखाएँ।

निष्कर्ष

पाठ्यपुस्तकें ऐसी सांस्कृतिक उपकरण हैं जो राष्ट्र की सामूहिक कल्पना को आकार देती हैं। एनसीएफ़ 2005 की शुरुआत के बाद आने वाली *लुकिंग अराउंड* शृंखला और *सोशल एंड पॉलिटिकल लाइफ़* पाठ्यपुस्तकों ने सफलतापूर्वक इस बात का नमूना सामने रख दिया है कि भारतीय संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों के मुताबिक़ नागरिकता शिक्षा की कल्पना कैसे की जानी चाहिए। जैसा कि उपर्युक्त विश्लेषण से ज़ाहिर होता है, कि इन पुस्तकों में जिस तरह से राष्ट्र की कल्पना की गई है, लैंगिक सरोकारों को सामने रखा गया है और नागरिकता का सृजन मानव अधिकारों के ढाँचे के भीतर किया गया है – उससे भी यह बात स्पष्ट हो जाती है। अब देखना यह है कि शिक्षक की मध्यस्थता से, इन विचारों को कक्षा के भीतर कैसे पेश किया जाता है।

[i] कांग्रेस के नेतृत्व वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन या यूपीए सरकार (2004-2014) के दौरान एनसीएफ़ 2005 को क्रियान्वित किया गया और यह 2014 (जब शासन में परिवर्तन हुआ) के बाद भी जारी रहा है।

[ii] *लुकिंग अराउंड* और *सोशल एंड पॉलिटिकल लाइफ़* पाठ्यपुस्तकों को इसके बाद से क्रमशः एलए और एसपीएल कहा जाएगा।

References

Advani, Shalini. 2009. *Schooling the National Imagination: Education, English and the Indian Modern*. New Delhi: Oxford University Press.

Batra, Poonam. 2010. *Social Science Learning in Schools: Perspectives and Challenges*. New Delhi: Sage Publications.

Bhog, Dipta (Ed.). 2010. *Textbook Regimes: An Overall Analysis*. New Delhi: Nirantar.

Jain, Manish. 2004. 'Civics, Citizen and Human Rights: Civics Discourse in India', *Contemporary Education Dialogue*, 1(2): 165-198.

Jayal, Niraja Gopal. 2013. *Citizenship and its Discontents: An Indian History.* Ranikhet: Permanent Black

NCERT textbooks mentioned in the text:

- *National Curriculum Framework for School Education*. 2000. NCERT: New Delhi
- *National Curriculum Framework*. 2005. NCERT: New Delhi

रूपमंजरी हेगड़े ने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से 'शिक्षा का समाजशास्त्र' विषय में पीएचडी की उपाधि प्राप्त की है। सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें और कक्षा-शिक्षण पद्धतियाँ उनके शोध के क्षेत्र रहे हैं। वर्तमान में वे I Am A Teacher (गुरुग्राम) की संकाय सदस्य हैं, जो शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाला एक ग़ैर-लाभकारी संगठन है। उन्हें शिक्षा क्षेत्र में दो दशकों से अधिक का अनुभव हासिल है। उन्होंने IDiscoveri Education (गुरुग्राम), और NEEV (नई दिल्ली) जैसे संगठनों में कोर टीम की सदस्य के रूप में सामाजिक विज्ञान और पर्यावरण अध्ययन में प्रयोगात्मक कक्षाओं को विकसित करने के लिए शिक्षण की रूपरेखा और आकलन के क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर काम किया है। रूपमंजरी भूटान के लिए 'राष्ट्रीय शैक्षिक ढाँचा' विकसित करने वाली एक परियोजना का भी हिस्सा रह चुकी हैं। उनसे rupamanjarihegde@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

स्कूली कामकाज से लोकतंत्र के बारे में सीखना

अभिलाषा अवस्थी

2019 की सर्दियों में, मैंने अज़ीम प्रेमजी स्कूल, दिनेशपुर में एक सीमित शोध अध्ययन किया ताकि यह समझ सकूँ कि स्कूल में लोकतंत्र कैसे कार्य करता है और लोकतंत्र से सम्बन्धित अवधारणाओं को पढ़ाने का क्या प्रभाव पड़ता है। मैंने कक्षा छह, सात और आठ के साथ काम किया लेकिन फ़ोकस समूह सातवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ़) 2005 के बाद एनसीईआरटी की सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तक में कुछ संशोधन किए गए थे। उसमें प्रस्तुत किए गए लोकतंत्र के विषय के तहत कुछ बुनियादी अवधारणाएँ मैंने बच्चों को सिखाईं।

लोकतंत्र की उपस्थिति

स्कूल की पाठ्यचर्या

कई कारक हैं, जो बच्चे के सीखने को स्वरूप देते हैं। उनमें से एक प्रमुख कारक स्कूल की पाठ्यचर्या है। लेकिन यह कारक अनजाने में कई अन्य कारकों से प्रभावित हो जाता है, जिनमें स्कूली तंत्र में छिपी हुई पाठ्यचर्या काफ़ी महत्त्वपूर्ण कारक है। बच्चे के सीखने को आकार देने के लिए स्कूली पाठ्यचर्या और छिपी हुई पाठ्यचर्या मिलकर काम करते हैं।

अज़ीम प्रेमजी स्कूल, दिनेशपुर के सन्दर्भ में मेरा अवलोकन यह था कि भारतीय लोकतंत्र के विवरण के तहत समानता वाला जो मौलिक सिद्धान्त है, उसे अधिकांश विद्यार्थी गहन रूप से समझते थे। क्योंकि जब उनके साथ कोई गतिविधि करवाई जाती या कहानियों पर चर्चा होती तो वे उनमें आने वाले अलोकतांत्रिक व्यवहारों को समझ लेते थे। इससे साफ़ पता चलता है कि बच्चों को इस बात की स्वाभाविक समझ थी कि संवैधानिक रूप से क्या ग़लत है और जहाँ भी ऐसे उदाहरण आते, वे उन्हें पहचान लेते थे।

इस स्कूल में एनसीईआरटी पाठ्यक्रम का अनुसरण किया जाता है। अकादमिक रूप से 'समानता' की अवधारणा तीन कक्षाओं में दी हुई थी। सातवीं कक्षा में जब मैं उन्हें लैंगिक असमानता के बारे में पढ़ा रही थी तो दोनों लिंगों की समानता का विचार उन्होंने ही दिया था। लड़कियों ने सवाल किया कि लड़कों से वे काम क्यों नहीं करवाए जाते जिन्हें वे करती हैं। कुछ लड़कों ने बताया कि वे घरेलू कामों में समान रूप से हाथ बँटाते हैं।

मैंने सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों को लैंगिक असमानता पर एक लघु फ़िल्म दिखाई, जिसका शीर्षक था *दि इम्पॉसिबल ड्रीम।* हास्य और अद्भुत दृश्यों के माध्यम से यह फ़िल्म अपने उद्देश्य को स्पष्ट करती है कि पुरुषों को भी घरेलू कामों और बच्चों के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी साझा करनी चाहिए। विद्यार्थियों ने तुरन्त इसमें आने वाली समस्याओं का पता लगाया और उन्हें अपने जीवन से जोड़ा भी। उन्होंने भेदभाव के उन उदाहरणों के बारे में बताया जिनका सामना वे और अन्य लोग अपने लिंग के कारण करते हैं। फिर हमने इस मुद्दे को इस बात से जोड़ा कि संविधान समानता के बारे में क्या कहता है और आश्चर्य की बात थी कि सातवीं कक्षा ने वास्तव में इस अवधारणा को गहराई से आत्मसात कर लिया था। वे अपने घरों में व्याप्त असमानता के बारे में काफ़ी खुलकर बोले, ख़ासकर लड़कियों के मामले में, जिन्हें स्कूल से घर लौटने के बाद घर का काम करना पड़ता था, जबकि लड़कों को इससे छूट मिली हुई थी।

जब मैंने उनसे पूछा कि, "क्या आपको लगता है कि आपको इस स्कूल में और इस कक्षा में बराबर माना जाता है?" तो उन्होंने हामी भरी। आगे मैंने पूछा कि, "आपको ऐसा क्यों लगता है?" तो जवाब मिला कि स्कूल उनके साथ एक समान व्यवहार करता है। उनमें से कुछ ने अपने प्रधानाचार्य का उदाहरण भी दिया जो सभी के साथ समान व्यवहार करते थे और उन्होंने अक्सर भेदभाव के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई थी।

जब *लड़के और लड़कियों के रूप में बड़ा होना* शीर्षक अध्याय से एक चरित्र के *मेरी माँ काम नहीं करती* नामक स्टोरीबोर्ड को सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों के साथ पढ़ा जा रहा था, तब हमने घर पर मदद करने के विषय पर विस्तार से चर्चा की। जब हमने उन कारणों पर बात की कि लड़के घर पर मदद क्यों नहीं करते, तो उन्होंने कहा कि उनसे मदद करने के लिए कहा ही नहीं जाता। क्योंकि उनके माता-पिता उसी पुरानी धारणा को मानते हैं कि घर के कामों में मदद करना लड़कों का कर्तव्य नहीं है। इस पर एक लड़के ने कहा, "मैंने एक बार अपनी दादी से पूछा कि क्या मैं भगवान की पूजा कर सकता हूँ तो उन्होंने कहा कि यह लड़कों का काम नहीं है।" इससे पता चलता है कि घरों में लड़कों और लड़कियों को काम सौंपने में कितना कड़ापन बरता जाता है और एक के 'माने हुए' कामों को दूसरे से कराने के प्रति कितना कम लचीलापन है। एक लड़की ने

बताया कि ज़्यादातर लड़कियों को स्कूल से घर वापस जाने के बाद, थके होने के बावजूद, घर के कामों में मदद करनी पड़ती है क्योंकि उनसे यही अपेक्षा की जाती है। इस विषय पर सातवीं कक्षा के कई समूहों में बहस हुई और उन्होंने पुरानी पीढ़ियों में मौजूद इस संकुचित दृष्टिकोण के पक्ष और विपक्ष में विभिन्न तर्क दिए।

छठवीं से आठवीं कक्षा तक के सभी बच्चे समानता की अवधारणा से परिचित थे। वे जानते थे कि उनके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता और अगर ऐसा हुआ तो वे मदद माँग सकते हैं। इसलिए, इन सभी कक्षाओं में इस अवधारणा के साथ तत्काल एक जुड़ाव का एहसास हुआ जिसमें समानता की धारणा को बनाए रखने के लिए सराहना का भाव भी था। ऐसा नहीं लगा कि यह पाठ्यपुस्तक में दी गई कोई अनजान अवधारणा है, बल्कि, यह एक ऐसा साकार भाव था जिसके साथ जुड़ा जा सकता था। जैसे-जैसे हम एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों के अध्यायों को पढ़ते गए, वैसे-वैसे विद्यार्थी इस अवधारणा के साथ गहराई से जुड़ते गए और स्कूल में बहुत ध्यानपूर्वक विकसित किए गए ग़ैर-भेदभावपूर्ण वातावरण ने इस कार्य में बहुत मदद की।

कक्षा और विद्यार्थी प्रतिनिधि

प्रत्येक कक्षा में दो कक्षा प्रतिनिधि (सीआर) थे – एक लड़का और एक लड़की। सीआर के अनेक कर्तव्य होते हैं, उदाहरण के लिए, कक्षाओं की स्वच्छता सुनिश्चित करना, अन्य बच्चों को अनुशासित करना, कक्षा के आन्तरिक मामलों को हल करना, महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर शिक्षक के साथ संवाद करना आदि। उन्हें विभिन्न स्कूल-व्यापी कर्तव्य भी निभाने पड़ते हैं। उदाहरण के लिए मध्याह्न भोजन परोसना, यह सुनिश्चित करना कि प्लेटों को धोकर यथास्थान रखा जा रहा है, जूते अपनी-अपनी जगह रखे जा रहे हैं, देर से आने वालों के नाम लिखना आदि।

इनके अलावा स्कूल में एक न्यायिक अधिकारी और दो विद्यार्थी प्रतिनिधि (एसआर) थे – एक लड़का और एक लड़की। ये सभी पदधारी यानी सीआर, एसआर और न्यायिक अधिकारी, हर बुधवार को स्कूल के बाद बैठक करते, अपने कर्तव्यों और अधिकारों पर चर्चा करते, अपनी कक्षाओं के माहौल को बेहतर और सुन्दर बनाने की योजना बनाते, बदलावों के सुझाव देते और विद्यार्थियों तथा स्टाफ़ के सदस्यों के बीच एक सेतु का काम करते। इनमें से कुछ चर्चाओं में उन्होंने एक प्रतिनिधि के रूप में अपनी क्षमताओं का निर्माण करने की बात भी की। यह सब एक लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से किया गया था, जिसमें सीआर, विद्यार्थियों के चुने हुए नेताओं के रूप में कार्य कर रहे थे और समग्र विद्यार्थियों की बेहतरी के लिए निर्णय ले रहे थे, लेकिन किसी ने किसी भी रूप में निरंकुशता का प्रदर्शन नहीं किया और दूसरे प्रतिनिधियों के विचारों का ध्यान भी रखा। इस प्रकार, इस प्रक्रिया से उन्हें इस बात का अन्दाज़ा हुआ कि संसद की बैठक कैसी होती होगी। सभी ने बैठकों में वोट डाले और अपने विचार व्यक्त किए।

लेकिन जल्द ही मैंने महसूस किया कि हालाँकि संरचना और सिद्धान्तों की दृष्टि से तो यह सब बहुत आदर्श लग रहा था, लेकिन किसी ने भी सक्रिय रूप से कोई सुझाव नहीं दिया और यह सारी प्रक्रिया काफ़ी यांत्रिक-सी हो गई थी, जिसमें विद्यार्थी अपने-अपने काम तो बहुत लगन से कर रहे थे, लेकिन प्रक्रियाओं में सुधार करने के लिए सक्रिय रूप से कोई प्रयत्न नहीं कर रहे थे। मैंने सामाजिक अध्ययन की एक कक्षा में एक सीआर से 'प्रतिनिधि' शब्द का अर्थ पूछा। कोई भी इसका उत्तर नहीं जानता था, यहाँ तक कि सीआर भी नहीं। इससे मुझे यह एहसास हुआ कि 'प्रतिनिधि' को लेकर बच्चों की समझ यह है कि वे दूसरों के वोटों के कारण सत्ता की स्थिति में हैं, लेकिन वे अपने कर्तव्य के रूप में लोगों (विद्यार्थियों) के साथ काम करने की अवधारणा को समझ नहीं पाए थे। प्रतिनिधियों ने यह तो समझ लिया था कि वे किस हैसियत से काम कर रहे हैं, लेकिन वे उन ज़िम्मेदारियों को नहीं समझ पाए थे जिन्हें उन्हें निभाना था। विद्यार्थी भी इस तथ्य से बेख़बर लग रहे थे कि वे अपने प्रतिनिधि से सवाल कर सकते हैं और अपनी माँगों को सामने रख सकते हैं।

शिक्षकों द्वारा आदर्श व्यवहार का प्रदर्शन

औपचारिक स्कूली प्रक्रियाओं के बाहर भी मैंने ऐसे उदाहरण देखे जहाँ शिक्षकों ने लोकतांत्रिक व्यवहार का प्रदर्शन किया। उदाहरण के लिए, एक बार जब मैं खेल के मैदान में बैठी थी और मैंने खेल शिक्षक को दो बच्चों से बातें करते हुए सुना, जिनमें कोई झगड़ा हो गया था। उन्होंने दोनों को एक साथ बिठाया और उनसे कुछ सवाल पूछे, जैसे- उनके माता-पिता कहाँ काम करते हैं, क्या उन्हें घर में कोई परेशानी है और अन्त में पूछा कि वे क्यों लड़े। जब दोनों बच्चों ने अपना-अपना पक्ष बताया तो उन्होंने तथ्यों का विश्लेषण किया, विवरणों पर ध्यान दिया और तार्किक रूप से ऐसे अन्य विकल्पों के बारे में चर्चा की जिनका उपयोग वे बच्चे कर सकते थे। फिर उन्होंने दोनों बच्चों का मेल-मिलाप करवाया। मैंने देखा कुछ अन्य विद्यार्थी भी इस बातचीत को सुन रहे थे। इससे मुझे एहसास हुआ कि समस्या के समाधान की अवधारणाओं को आत्मसात करने के लिए इस तरह से अवलोकन करके सीखना कितना आवश्यक है और इस विशिष्ट मामले में यह देखना कितना महत्त्वपूर्ण था जहाँ एक वयस्क मध्यस्थ ने प्रत्येक बच्चे के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए उन्हें एक न्यायसंगत और निष्पक्ष समाधान दिया।

इन अवधारणाओं के साथ परिचित होने के कारण

बच्चे समानता की अवधारणा से भली-भाँति परिचित इसलिए थे क्योंकि वे समानता और भेदभाव के बीच अन्तर करने का नज़रिया रखते थे। स्कूल में लम्बे समय से यह दृष्टिकोण विकसित किया जा रहा था। पूरा स्कूल तंत्र, चाहे शिक्षक हों, प्रक्रियाएँ हों या पाठ्यक्रम (छिपा हुआ पाठ्यक्रम भी) समानता को अत्यधिक महत्त्व देता था। समान होने का दावा करने और लोगों को समानता की नज़र से देखने के बीच की कड़ी काफ़ी हद तक मौजूद थी। इसका एक और उदाहरण यह है कि शिक्षकों और प्रधानाचार्य के बीच कोई कड़ा पदानुक्रम नहीं था। रोज़ सुबह वे सभी दैनिक बैठकों में एक साथ बैठते थे और प्रत्येक मुद्दे पर सभी अपना वोट डालते थे; हर एक को अपनी बात कहने का अधिकार था।

छिपे हुए पाठ्यक्रम ने भी इस प्रक्रिया में मदद की। अधिकांश स्कूलों की प्रक्रियाओं में शिक्षक और विद्यार्थी के बीच मौजूद पदानुक्रम स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, लेकिन इस स्कूल में बच्चे अधिकांश शिक्षकों और प्रधानाचार्य के साथ आसानी से बात कर सकते थे। कोई भी बच्चा उनके पास जा सकता था और अपनी समस्याएँ उन्हें बता सकता था या सवाल पूछ सकता था। वे विद्यार्थियों के साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करते थे। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कुछ बातों में तो शिक्षक और विद्यार्थी बिल्कुल बराबर थे। उदाहरण के लिए, जब सर्दियाँ चरम पर थीं तब भी शिक्षकों के लिए हीटर नहीं लगाए गए थे क्योंकि इस बात को अनुचित माना गया कि केवल शिक्षक उनका उपयोग करें और विद्यार्थियों को यह सुविधा न मिले। सभी के लिए हीटर की व्यवस्था करना स्कूल के लिए व्यावहारिक रूप से सम्भव नहीं था। सभी के साथ समान व्यवहार करने का यह एक पक्का उदाहरण था, जिसे विद्यार्थियों ने देखा और आत्मसात किया।

लोकतंत्र की शिक्षा देना

अपनी शोध पद्धति के अनुसार मैंने माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों को लोकतंत्र से सम्बन्धित अवधारणाएँ सिखाईं, जिसका उल्लेख मैं ऊपर भी कर चुकी हूँ। मैंने कुछ ऐसे विषयों को चुना जो लोकतंत्र के विचार के लिए सामान्य थे, जैसे, प्रतिनिधियों के होने और उनसे सवाल करने का विचार, सरकार, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समानता और एक सक्रिय नागरिक होना।

कक्षा छह : 'पटवारी, शहरी और ग्रामीण प्रशासन'

जब मैंने ग्रामीण प्रशासन, और ग्रामीण परिवेश में मौजूद होने वाले सरकार के प्रतिनिधियों (पटवारी) के बारे में पढ़ाया, तो मैंने यह बात सामने रखी कि मीडिया किस प्रकार समाचार-पत्रों में प्रतिनिधियों की आलोचना/प्रशंसा करता है। सातवीं और आठवीं कक्षा में मैंने पढ़ाया कि लोकसभा में हमारे चुने हुए प्रतिनिधि हमारे अधिकारों और माँगों के लिए कैसे लड़ते हैं। जब यह आधारभूत बात उन्हें सिखाई गई तो वे अपने वास्तविक जीवन के उदाहरण बताने लगे और उन्हें एनसीईआरटी में दिए गए उदाहरण भी उपयोगी लगने लगे।

इस थीम को शहरी प्रशासन के अध्याय में भी उपयोग किया गया। जब हमने उनके वार्ड के सदस्यों और अध्यक्ष के बारे में बात की, तो हालाँकि अधिकांश बच्चे इन नेताओं के बारे में जानते थे, लेकिन वे उन्हें सरकार के एक हिस्से के रूप में नहीं देख पाए। वे तो यही जानते थे कि ये लोग जनता से वोट माँगते हैं और चुनाव जीत जाते हैं। जब दुनियाभर के अच्छे शहर दिखाकर उन्हें एक 'अच्छे शहर' का विचार दिया गया तो विद्यार्थियों ने सवाल किया कि उनका अपना शहर उतना साफ़-सुथरा और सुव्यवस्थित क्यों नहीं है। यह प्रश्न फिर से हमें अपने प्रतिनिधियों के विचार पर ले आया। जल्द ही, वे स्थानीय सरकार की भूमिका को कल्याण कार्यों से जोड़

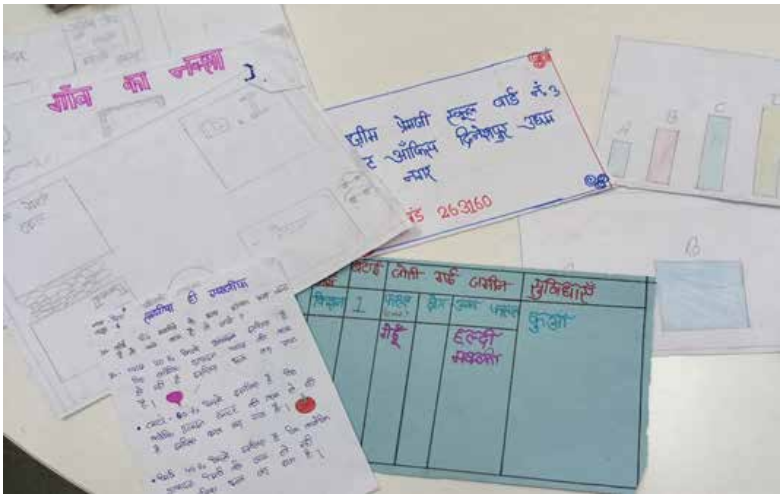

शहरी प्रशासन के तहत आने वाले क्षेत्रों को जानने के लिए अभ्यास

पाए और उन्होंने महसूस किया कि ये प्रतिनिधि उन लोगों के प्रति जवाबदेह होते हैं जो इन्हें वोट देते हैं और जिनका ये प्रतिनिधित्व करते हैं।

जब मैंने छठवीं कक्षा से पूछा कि उनके रहवास के एक इलाक़े में इतना कचरा और प्रदूषण क्यों है, तो जवाब मिला कि, "कोई भी सड़क साफ़ करने नहीं आता।" मैंने उनसे पूछा कि क्या उन्होंने कभी स्थानीय प्रतिनिधि से इस बारे में सवाल किया तो बच्चों ने जवाब दिया कि अगर वे कुछ कहने की कोशिश करते हैं तो उनके परिवार वाले उन्हें रोक देते हैं। एक बच्चे ने कहा कि, "अब तो वे कचरे को स्थानीय पार्क में भी फेंक देते हैं।" इस तरह, उनसे यह पूछताछ करने पर कि उन्होंने अपने नेताओं से कभी सवाल क्यों नहीं किए, उन्हें एहसास हुआ कि वे सवाल कर सकते हैं। कक्षा छह की एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तक में स्थानीय प्रतिनिधि के माध्यम से सरकार पर सवाल उठाने वाला कोई प्रत्यक्ष उदाहरण नहीं दिया गया था।

कक्षा सात : 'मीडिया, लिंग और समानता'

समाचार-पत्र साक्षरता पर एक सप्ताह की कक्षा के बाद सृजन के एक भाग के रूप में (सीखने का ऊँचा क्रम; ब्लूम का वर्गीकरण), सातवीं कक्षा से कहा गया कि वे पाँच-पाँच के समूह में अपना साप्ताहिक समाचार-पत्र बनाएँ। उन्होंने एक समाचार निकाला और पूछा कि "कक्षा नौ के स्पोर्ट्स क्यों हुए बन्द?" नौवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने इसे 'फ़र्ज़ी समाचार' और 'यह सच नहीं' बताते हुए अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। आगे जाँच करने पर, नौवीं कक्षा ने स्वीकार किया कि यह ख़बर सच थी, लेकिन इसे इल्ज़ाम लगाने के लहज़े में लिखा गया था जिससे उनकी छवि बिगड़ती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि यह उनके और प्रधानाचार्य के बीच एक 'समझौता' था और यह निर्णय आपसी सहमति से लिया गया था, थोपा नहीं गया था। उनकी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया इसलिए उग्र थी क्योंकि वे अपनी छवि के प्रति सचेत थे और यह अख़बार पूरे स्कूल में बाँटा गया था। और उन्होंने अपनी ग़लत छवि दिखाए जाने पर आवाज़ उठाई। इस घटना ने विद्यार्थियों को भ्रामक जानकारियाँ फैलाने की मीडिया शक्ति से परिचित करवाया।

जब हमने सातवीं कक्षा को इस प्रतिक्रिया से अवगत कराया तो वे यह जानकर सकते में आ गए कि उन्होंने अधूरी ख़बर छापी थी। फिर जब उनके साथ चर्चा की गई तो उन्होंने स्वीकार किया कि समाचार को सत्यापित करने से पहले उन्होंने उसकी दो-तरफ़ा जाँच नहीं की थी। इस बिन्दु पर आकर मैंने उन्हें समझाया कि शोध पर आधारित ऐसे सन्तुलित समाचार लिखना आवश्यक होता है जो निष्पक्ष रूप से तथ्यों को बताए और किसी विषय के दोनों पक्षों को सामने लाए। स्कूल के सन्दर्भ में लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ के रूप में मीडिया के बारे में चर्चा की गई और इसे विस्तार देते हुए राष्ट्रीय स्तर पर इसकी भूमिका के बारे में भी चर्चा की गई।

कक्षा आठ : 'संसद – संविधान, अंग, कार्य'

आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक से सरकार के बारे में जो कुछ पता चला और उन्होंने अपने वास्तविक जीवन में जो कुछ देखा था, उसके बीच की खाई उनके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण थी। उन्होंने पहले संसद नहीं देखी थी, टीवी पर भी नहीं। इसलिए, उन्हें इस बात को समझने में बहुत कठिनाई हुई कि सरकार क्या है और क्यों है। पर इसी बात को स्थानीय सरकार के माध्यम से पुन: समझाया गया तो उन्हें इस बारे में समझ बनाने में काफ़ी मदद मिली। स्थानीय से केन्द्रीय तक जाने की विधि से मुझे तीनों कक्षाओं को पढ़ाने में सहायता मिली।

समानता के बारे में विद्यार्थियों की समझ और प्रतिनिधियों की अवधारणा से मुझे इससे जुड़ी शैक्षिक अवधारणा को और अधिक विकसित करने में मदद मिली। अनुभव तो उनको स्कूल से ही प्राप्त हो गए थे, अतः वे गम्भीर रूप से इन पर चिन्तन कर सके और इन्हें असम्बद्ध अमूर्त विचारों की बजाय वास्तविक जीवन की अवधारणाओं के रूप में समझ सके। इसके अलावा, वे उन क्षेत्रों की पहचान भी कर सके जहाँ उन्होंने इन विचारों को व्यावहारिक रूप से असफल होते देखा, विशेषकर स्कूल स्तर पर। भले ही विद्यार्थियों को राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक ढाँचे के बारे में ठीक से पता नहीं था, लेकिन वे उन चीज़ों से काफ़ी परिचित थे जो उनके सामने थीं, जैसे, उनके स्थानीय नेता और स्कूल के नेता। उन्हें पता था कि ये लोग उनकी भलाई के लिए ज़िम्मेदार थे और यदि आवश्यक हो तो वे उनके कार्यों पर सवाल उठा सकते थे। इसके साथ ही सीआर को भी अपनी शक्ति के बारे में पता था। साथ में वे भी यह जानते थे कि उनके कार्यों पर सवाल उठाया जा सकता है और अगर वे अपनी ज़िम्मेदारियाँ ठीक से नहीं निभाते तो उन्हें अपना पद छोड़ने के लिए भी कहा जा सकता है।

समानता, स्वतंत्रता और न्याय जैसी अवधारणाओं के लिए भी विद्यार्थियों ने कक्षा में अपने परिवेश के उदाहरण पेश किए। इस जुड़ाव ने उन्हें इन विषयों के तहत ऊँचे स्तर की अवधारणाओं को समझने और पाठ्यपुस्तक में दिए गए उदाहरणों तक ले जाने में मदद की।

फ़ोकस समूह चर्चा

इस स्कूल के साथ अपने काम के दौरान मैंने नौवीं कक्षा के बच्चों के साथ एक फ़ोकस समूह चर्चा की ताकि इस पूरे विषय के बारे में उनकी समझ को जाँच सकूँ। दस-दस बच्चों के तीन समूह बनाए गए। *समूह 1* में ऐसे बच्चे थे जो कक्षा में बहुत सक्रिय थे, विशेष रूप से अपनी राय व्यक्त करने और चीज़ों के बारे में जागरूक होने की दृष्टि से। *समूह 2* में ऐसे बच्चे थे जो

कक्षा में न तो बहुत सक्रिय थे और न ही बहुत निष्क्रिय। *समूह 3* में ऐसे बच्चे थे जो बिल्कुल भी सक्रिय नहीं थे। लोकतंत्र और सरकार से सम्बन्धित अधिकांश विचारों को तीनों समूह अच्छी तरह से समझ गए थे। उनकी कक्षा कैसी चल रही थी और सरकार ने कैसा काम किया, इनके बीच वे स्पष्ट सम्बन्ध देख पाए।

इसके अलावा *समूह 1* को लोकतंत्र के प्रक्रियात्मक पहलू की जानकारी थी क्योंकि उसमें ऐसे कई विद्यार्थी थे जो स्कूल के प्रतिनिधियों के रूप में भाग ले रहे थे। वे जानते थे कि उनसे पूछताछ की जा सकती है, इसलिए उन्हें अपने नेताओं से पूछताछ करनी चाहिए।

समूह 2 सामान्य मानसिकता का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता था; विद्यार्थियों को पता था कि वोट माँगना एक जाल की तरह था और सरकार पर सवाल उठाने से हत्या हो सकती है या सिर्फ निराशा हाथ लग सकती है। इस समूह को लगा कि इस सबमें शामिल होना बहुत झंझट वाला काम है।

समूह 3 ने सरकार को एक अभिभावक के रूप में देखा जो ग़रीबों की देखभाल करता है यह जानते हुए भी कि यह भ्रष्टाचार में शामिल है, और वह भ्रष्टाचार में शामिल लोगों को खोजने का काम भी करता है।

यदि इस बात की जाँच की जाए कि इन तीन कक्षाओं (छह, सात और आठ) में सिखाई गई अवधारणाओं ने विद्यार्थियों को इन विचारों को समझने में मदद की या नहीं तो यह कहा जा सकता है कि परिणाम सकारात्मक रहे और इससे काफ़ी हद तक मदद मिली। लेकिन सभी समूह सरकार के तीन अंगों के नाम और कार्यों के बारे में नहीं बता पाए। इसके अलावा, वे अपने स्थानीय वार्ड के सदस्यों के नाम भी नहीं बता पाए जो कि एक असामान्य बात थी क्योंकि उनमें से कुछ राजनीतिक रूप से जागरूक थे।

निष्कर्ष

जैसा कि ऊपर दिए गए उदाहरणों में बताया गया है, एक अवधारणा के रूप में लोकतंत्र को व्यावहारिक रूप से जीने की आवश्यकता है। बच्चों को ऐसा उपयुक्त वातावरण दिया जा सकता है जहाँ वे समान महसूस करें और अपने सवाल और राय व्यक्त करने में न झिझकें। बच्चे उन चीज़ों के साथ जल्द ही जुड़ जाते हैं जिन्हें वे मूर्त रूप से देख सकते हों। ऐसा उन अवधारणाओं के साथ भी होता है जिन्हें जिया जाता है और अभ्यास व व्यवहार में भी लाया जाता है। ठीक वैसे ही, इस मामले में, जब स्कूल का वातावरण इस अवधारणा को व्यावहारिक रूप से समझने में लगातार उनकी मदद कर रहा है तो उनके लिए पुस्तक में दिए गए विवरणों को समझना और फिर इस अवधारणा को पाठ में प्रस्तुत स्थितियों और परिदृश्यों से जोड़ना आसान हो जाता है। और तब, उन्हें उनके द्वारा पढ़ी जा रही बातों पर सवाल करने, और उन्हें स्कूल के बाहर के अपने जीवन में लागू करने में मदद मिलती है।

सातवीं कक्षा द्वारा बनाए गए समाचार-पत्र

समाचारों के प्रकारों पर चर्चा

अभिलाषा अवस्थी वर्तमान में उत्तराखण्ड के पिथौरागढ़ में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में कैंपस एसोसिएट के रूप में कार्यरत हैं। सामाजिक अध्ययन और बच्चों में भाषा का विकास करना उनकी रुचि के क्षेत्र हैं। उन्हें खेलना और चित्रकारी करना पसन्द है। उनसे abhilasha.awasthi18_mae@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

अपनेपन की भावना से आती है ज़िम्मेदारी

अर्चना आर

हम इस बात पर इसलिए ज़ोर देते हैं कि बच्चों को स्कूल की दिन-प्रतिदिन की प्रक्रियाओं को तय करने, सुनियोजित करने और लागू करने में भाग लेना चाहिए, क्योंकि हम यह मानते हैं कि बच्चे स्कूल में सिर्फ़ इसलिए नहीं आते कि उन्हें पढ़ा दिया जाए या वयस्क, यानी शिक्षक, उनपर 'काम' करें। स्कूल में बच्चे की भूमिका केवल प्रेक्षक या प्राप्तकर्ता की नहीं बल्कि एक सक्रिय प्रतिभागी की होती है। यह भागीदारी तभी सुचारु रूप से चल सकती है जब उन्हें अपनी आवश्यकताओं को बताने के अवसर और स्थान दिए जाएँ। बच्चों को मिलने वाले इस स्थान और प्रतिनिधित्व की मात्रा विभिन्न स्कूलों में हमेशा अलग-अलग रही है। उदाहरण के लिए, जिस स्कूल में टेटसुको कुरोयानागी (Tetsuko Kuroyanagi या तोतो-चान)[i] जाया करती थीं, वहाँ पर प्रधानाध्यापक ही नियम बनाया करते थे, लेकिन उन्होंने इस तरह से नियम बनाए कि बच्चों को स्कूल के भीतर पूरी आज़ादी मिलती थी।

एएस नील (A. S. Neill) द्वारा संचालित समरहिल स्कूल[ii] में इसी विचार को और अधिक महत्त्व दिया गया है कि बच्चे ख़ुद अपनी लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण करें। नील इस बात पर ज़ोर देते हैं कि हालाँकि 'बच्चों की सरकार' का अर्थ अलग-अलग उम्र के बच्चों के लिए अलग हो सकता है, लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे जानते हों कि यह उनसे सरोकार रखती है और वे अपने लिए महत्त्वपूर्ण मामलों के बारे में विचार प्रस्तुत कर सकते हों। उन्होंने बच्चों द्वारा अपने विचारों को निश्चयात्मक रूप से बताने वाले कुछ उदाहरण दिए। जैसे कि चोरी के लिए उपयुक्त सज़ा पर चर्चा करना या आठ-नौ वर्षीय विद्यार्थियों का 12 साल से कम उम्र के बच्चों के धूम्रपान करने पर प्रतिबन्ध को हटाने के लिए बहस करना।

समरहिल जैसे स्कूल में बच्चों को उन बातों पर भी निर्णायक राय देने का अधिकार होता है, जिन्हें बाक़ी दुनिया नकारात्मक या अतिवादी मान सकती है। इन घटनाओं के वर्णन से हमें यह भी ज्ञात होता है कि इस स्कूल में बच्चों को ख़ुद को अभिव्यक्त करने का अवसर दिया जाता है। वे उन मामलों को चुनते हैं जिनपर चर्चा करने की ज़रूरत होती है, उनके बीच आपस में या प्रधानाचार्य-शिक्षक-विद्यार्थियों के बीच कोई पदानुक्रम नहीं होता और नियम सर्वश्रेष्ठ तर्क पर आधारित होते हैं। यह प्रक्रिया इसलिए सफल है क्योंकि स्कूल ने पहले ही बच्चों को स्कूल के मुख्य विचार समझा दिए हैं (अनुभव के माध्यम से)। बच्चों को स्वतंत्र रहने दिया है और उन्हें सिखाया गया है कि उनकी स्वतंत्रता में बाधा डालने वाली कोई भी बात स्कूल के सिद्धान्तों के ख़िलाफ़ है और उसपर सवाल उठाए जा सकते हैं।

स्कूल में चुनाव का दिन

मैं अपने एसोसिएट प्रोग्राम के लिए सरकारी उच्च प्राथमिक विद्यालय, कंचगाराहल्ली (यादगीर) गई हुई थी। स्कूल में गाँव के साथ ही एक *तण्डा* (जनजातीय टोला) के भी विद्यार्थी हैं। यादगीर में लगभग हर गाँव में एक *तण्डा* है और वे लोग लम्बाणी भाषा बोलते हैं। आमतौर पर *तण्डा* मुख्य सड़क से दूर, निर्जन और दूरदराज़ के स्थानों में होते हैं।

शनिवार की सुबह थी और बच्चे स्कूल में प्रार्थना के लिए इकट्ठा हुए थे। उन्हें नए शैक्षिक वर्ष के लिए नेतृत्व के पदों के लिए मतदान करना था और स्कूल की पूरी सफ़ाई करनी थी। विभिन्न क्लबों जैसे स्वच्छता, बागवानी, पुस्तकालय, खेल, अँग्रेज़ी, हिन्दी; और दोपहर के भोजन व यूनिफ़ॉर्म की जाँच जैसे कार्यों के लिए विद्यार्थियों का चुनाव होना था। विद्यार्थियों और शिक्षकों से बात करते हुए मुझे पता चला कि उस दिन जो विद्यार्थी अनुपस्थित थे, उनका एक पैटर्न था :

- सातवीं और आठवीं कक्षा की कई लड़कियाँ अनुपस्थित थीं।
- *तण्डा* के कई विद्यार्थी अनुपस्थित थे।

मुख्याध्यापिका ने मुझे बताया कि *तण्डा* के विद्यार्थियों की अनुपस्थिति असामान्य बात नहीं थी; जिस दिन भी स्कूल की सफ़ाई करनी होती थी, उस दिन वे कभी भी स्कूल नहीं आते थे। मुझे यह भी पता चला कि छात्राओं की अनुपस्थिति के पीछे यह सच्चाई थी कि विद्यार्थियों के एक ही समूह को नेतृत्व के पदों पर चुना जाता था। नेतृत्व करने से जो लोकप्रियता मिलती है, उसके साथ शर्म और व्यग्रता की भावनाओं का उत्पन्न होना किशोरों में एक आम बात हो सकती है, लेकिन लड़कियों का हीन या उपेक्षित महसूस करना कुछ अन्य कारकों पर भी निर्भर था, जैसे :

- कई पदों पर लड़के और लड़की, दोनों की नियुक्ति ज़रूरी थी – लेकिन यह सिर्फ़ नाम के लिए था। पद के आधार पर ज़िम्मेदारी या तो लड़के को दी जाती या लड़की को। उदाहरण के लिए, लड़के खेल और बागवानी से सम्बन्धित कार्यों का 'नेतृत्व या व्यवस्था' करते और लड़कियाँ रोज़मर्रा के कामों की देख-रेख करतीं जैसे कि दोपहर का भोजन और स्वच्छता।
- शेष पदों, जैसे कि विभिन्न क्लबों का लीडर बनना, अकादमिक योग्यताओं से प्रभावित होता था, इसलिए केवल चुनिन्दा विद्यार्थियों को ही इन पदों पर चुना जाता था।
- जो लड़के मेहनती थे, उदाहरण के लिए स्कूल में पौधे लाते थे या खेलों में रुचि रखते थे, वे लीडर बन सकते थे। वहीं लड़कियों में सातवीं और आठवीं कक्षा की वही चार-छह लड़कियाँ सभी पदों के लिए चुन ली जातीं क्योंकि शिक्षकों का मानना था कि जो लोग पढ़ाई में अच्छे हों, वे रोज़मर्रा के कामों की देख-रेख के लिए भी काफ़ी ज़िम्मेदार होते हैं।

प्रवासी बच्चे

लम्बाणी-भाषी *तण्डा* के विद्यार्थियों की अनुपस्थिति काफ़ी परेशान करने वाली थी। इस पूरे इलाक़े में उनका शैक्षिक प्रदर्शन एक चुनौती है क्योंकि शिक्षा का माध्यम कन्नड़ है, जो उनके लिए मुश्किल है। लेकिन फिर भी ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें वे नेतृत्व कर सकते हैं, जैसे कि हिन्दी क्लब (वे सहजता से हिन्दी बोल लेते हैं), या सांस्कृतिक गतिविधियाँ (वे गाने और नाचने में रुचि दिखाते हैं)। अकादमिक प्रदर्शन की वजह से तो उनके चुने जाने की सम्भावनाएँ कम हुईं ही, लेकिन उनके अनुपस्थित रहने के कारण ये अवसर बिल्कुल समाप्त हो गए।

जब मैंने यह समझने का प्रयास किया कि वे क्यों अनुपस्थित हुए और सफ़ाई वाले दिन स्कूल क्यों नहीं आते थे तो मैंने महसूस किया कि मुझे विद्यालय के समग्र स्तर पर उनकी उपस्थिति को देखना पड़ेगा। शुरुआती कक्षाओं से ही *तण्डा* के बच्चों को, कक्षा में, कन्नड़ भाषी विद्यार्थियों के साथ घुलने-मिलने में दिक़्क़त पेश आती है। अपने माता-पिता का पेशा अलग होने के कारण इन बच्चों का 'मौसमी रूप से अनुपस्थित' (फसल की कटाई, त्यौहारों के समय) होना आम बात है। जब वे काम के लिए अपने परिवारों के साथ बड़े शहरों में प्रवास करते हैं तब भी वे लम्बे समय तक कक्षा में अनुपस्थित रहते हैं। इन बड़े शहरों में वे सीखना ही नहीं, बल्कि अपने कन्नड़ भाषाई वातावरण को भी खो देते हैं। जब वे स्कूल लौटते हैं तो भाषा की बाधा के कारण उन्हें अपने सहपाठियों और शिक्षकों के साथ जुड़ने में कठिनाई होती है। इससे इन विद्यार्थियों को अपने साथियों के बीच बड़ी बेचैनी महसूस होती है और वे लगातार इस चिन्ता में रहते हैं कि उन्हें डाँटा-फटकारा जाएगा।

अपनेपन की भावना

ज़िम्मेदारी और अपनेपन की भावना में गहरा सम्बन्ध है। छोटे बच्चों का उदाहरण देखें तो उनमें पहले अपनेपन की भावना का विकास होता है और बाद में उसके साथ ज़िम्मेदारी जोड़ी जा सकती है। इसका एक उदाहरण एएस नील (A. S. Neill) ने *समरहिल* के एक विवरण में दिया है, जहाँ एक बच्चा खिड़कियाँ तोड़ता रहता था और वह इसे न तो ग़लती मानता और न ही बुरा व्यवहार, लेकिन वह इस नुक़सान की भरपाई के लिए पैसे देने की पेशकश करता था और कहता था कि, *"ये मेरी खिड़कियाँ हैं!"*' (नील 1960)। इस उदाहरण में बच्चे में अपनेपन की भावना पहले आई है और उसकी उम्र ही ऐसी है जिसमें यह उस चीज़ के प्रति स्वामित्व की भावना का रूप ले लेती है। अभी उसकी उम्र उतनी नहीं है कि उसे अपने कार्यों के लिए दोषी महसूस कराया जा सके या यह समझाया जा सके कि उसने जो किया है वह ग़लत है। लेकिन उसके अपनेपन की भावना उसे बेहद स्वाभाविक तरीक़े से अपने कार्यों के प्रति ज़िम्मेदार बनाती है।

जब मैं इस बात पर विचार कर रही थी कि *तण्डा* के विद्यार्थी स्कूल की सफ़ाई करने के कार्य से बचने की कोशिश क्यों करते हैं, तब मैंने ऊपर लिखी घटना के बारे में सोचा। यह तो ज़ाहिर है कि कोई भी बच्चा ऐसे कार्यों को पसन्द नहीं करता जिनमें बस मेहनत करनी पड़े। ऐसे काम करने के लिए बच्चों को किसी और वजह की ज़रूरत होती है, चाहे घर हो या स्कूल। हाँ, एक नियम बनाकर, धमकी देकर या उन्हें यह मानने के लिए मजबूर करके कि ऐसा करना आवश्यक है – उनसे ये काम करवाए जा सकते हैं। लेकिन *तण्डा* के विद्यार्थियों के उदाहरण से पता चलता है कि जब बच्चे किसी काम को करने की कोई व्यक्तिगत वजह नहीं पाते तो उनकी प्रतिक्रिया कैसी होती है। यदि विद्यार्थियों को छह-सात सालों में भी ऐसा नहीं लगा है कि वे अपने स्कूल से जुड़े हुए हैं तो वे स्कूल की सफ़ाई के लिए ख़ुद को ज़िम्मेदार महसूस नहीं करेंगे। और अगर छात्राओं ने छह साल में भी स्कूल के प्रति अपनेपन की भावना का अनुभव नहीं किया है तो किशोरावस्था इस भावना को और बढ़ा ही सकती है।

शिक्षकों के पूर्वाग्रह

चुनावों की बात करें तो शिक्षकों के बीच पूर्वाग्रह काफ़ी आम है, हालाँकि इसे दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। कोई भी वयस्क व्यक्ति जो कभी-न-कभी सरकारी स्कूल में गया हो और पढ़ाई में बहुत अच्छा रहा हो, इस बात की पुष्टि करेगा। वे आपको बताएँगे कि वे अपने शिक्षकों के चहेते थे और

स्वीकार करेंगे कि उनके स्कूल के सबसे अच्छे शिक्षक वे थे जो बस कुछ चुनिन्दा विद्यार्थियों पर ध्यान देते थे। शिक्षक भी इसे स्वीकार करते हैं कि कुछ विद्यार्थी उनके प्रिय पात्र होते हैं क्योंकि वे सीखने के इच्छुक लोगों को पहचान लेते हैं और महसूस करते हैं कि ऐसे विद्यार्थियों के विकास के लिए ही प्रयास करना बेहतर होगा।

हमें याद रखना चाहिए कि बच्चे स्कूल सरकार का गठन स्कूल के रोज़मर्रा के कार्यों के लिए करते हैं। और यह कि नेतृत्व का अर्थ ज़िम्मेदारी लेना और दूसरों के निर्धारित कर्तव्यों को पूरा करने में उनकी सहायता करना होता है। यह प्रक्रिया तब तक सम्भव नहीं हो सकती जब तक कि सभी बच्चे निर्णयों में शामिल न हों। निर्णयों को सामूहिक सहमति के आधार पर लिया जाना चाहिए बजाय इसके कि सामूहिक रूप से किसी बात के प्रतिरोध पर सहमति बनाई जाए। और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों की सरकार बच्चों से, बच्चों के लिए और उन्हीं के द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए बनाई जाती है कि इसका काम शिक्षकों के स्थान पर अन्य विद्यार्थियों की निगरानी करना नहीं है, बल्कि एक ऐसा माहौल बनाना है जिसमें विद्यार्थी 'अपने लिए' अपने कार्यों और ज़िम्मेदारियों को पूरा करें।

जब मैंने *तण्डा* के विद्यार्थियों को उस दिन स्कूल में अनुपस्थित पाया तो मुझे लगा कि ख़ुद अपने लिए कुछ करने की यह भावना शायद उन बच्चों में नहीं आ पाई है।

बच्चों द्वारा नियम

हालाँकि, मैं स्कूल के स्तर पर कुछ अधिक नहीं कर पाई, लेकिन मैं यह जानना चाहती थी कि जो शासन प्रणाली बच्चों ने ख़ुद बनाई हो, उसपर उनकी प्रतिक्रिया किस तरह की होगी। जब मेरे पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने शोर मचाना शुरू किया और देखा कि मैं जिस किताब से कहानी पढ़ रही थी, उसे मैंने बन्द कर दिया है तो पहले उन्होंने एक-दूसरे को चुप रहने के इशारे किए लेकिन फिर ऊँची आवाज़ में एक-दूसरे से बहस करने लगे। जब मैंने उनसे कहा कि वे ख़ुद ऐसा तरीक़ा निकालें जिससे हम प्रत्येक सप्ताह एक कहानी निश्चित रूप से पूरी कर सकें (जो तभी सम्भव है जब उनकी ओर से कोई बाधा न हो) तो उन्होंने इसके काफ़ी व्यापक नियम बना दिए (जिनमें एक नियम यह भी था कि झगड़े से बचने के लिए किसे किसके साथ नहीं बैठना चाहिए!)। मैंने कक्षा छठवीं और सातवीं के साथ भी इन नियमों का प्रयोग किया और प्रयोग सफल रहा।

नियमों से इस बात की गारंटी तो नहीं मिली कि कक्षा का वातावरण बिल्कुल आदर्श हो जाए। लेकिन, यह प्रक्रिया इस तरह से सफल रही कि जब कोई समस्या सामने आती तो बच्चों को पता लग जाता कि क्या ग़लत हुआ और हम इसे कैसे हल कर सकते हैं। बेशक, ऐसे मौक़े भी आए जब समस्याओं को अन्य तरीक़ों से निपटाना पड़ा था। ऐसे अवसर भी आए जब विद्यार्थी मेरे सामने किसी विशिष्ट समस्या को लेकर नहीं आए क्योंकि उन्हें लगा कि उसे सुलझाने का मेरा तरीक़ा काम नहीं करेगा। लेकिन जिस संक्षिप्त अवधि में मैं उनके साथ रही, उसके आधार पर मैं कह सकती हूँ कि बच्चों द्वारा बनाई गई सरकार कारगर होती है। मुझे लगता है कि मैं जो प्रयास कर सकी (बहुत छोटे स्तर पर), उसके कारगर होने की सम्भावना सिर्फ़ इसलिए थी क्योंकि एक तो मैं इसमें सभी बच्चों को शामिल करने को प्राथमिकता दे सकी और दूसरे, मैं सभी बच्चों को शामिल कर सकी क्योंकि उनके द्वारा तैयार किए गए नियम सीधे उनके व्यवहार से सम्बन्धित थे। यह बात उनकी उस अधीरता, लड़ने-झगड़ने और चिल्लाने के बारे में थी जब उनकी पसन्द की कहानी पढ़ी जा रही होती थी। उनके स्वामित्व हासिल करने के बाद ज़िम्मेदारी को तय करना सहज था (भले ही आसान न हो)। मैं केवल पाँचवी-आठवीं कक्षा के साथ ही ऐसा कर सकी। *नली-कली* के मामले में, बच्चों से नियमों को याद रखने की उम्मीद नहीं की जा सकती थी, चाहे वे किसी ने भी बनाए हों। यहाँ तक कि अगर वे पिछले दिन ही इसके लिए सहमत हुए हों तो भी वे अगले दिन अपने खेल में इसे भूल जाते। लेकिन हमने हर कक्षा में कुछ छोटी व्यवस्थाएँ बना रखी थीं (जैसे सिर्फ़ किसी कहानी को सुनते वक़्त अर्धवृत्त में बैठना) जिनसे उन्हें एक स्वरूप और स्थिरता प्राप्त हुई।

> मेरी समझ में, हमारे सरकारी स्कूलों में नागरिकता की शिक्षा चार प्रमुख बिन्दुओं के इर्द-गिर्द घूमती है : पहला, बच्चों को एक ऐसा माहौल देना होगा जो उन्हें स्कूल के नागरिकों जैसा महसूस कराए; दूसरा, बच्चों को यह समझना चाहिए कि स्कूल में प्रत्येक सदस्य के कुछ निश्चित अधिकारों के आधार पर ही उनका वातावरण अस्तित्व में है; तीसरा, बच्चों को उन प्रक्रियाओं को बनाए रखने, उनपर डटे रहने और उन्हें कार्यान्वित करने में शामिल होना चाहिए जिनके तहत ये अधिकार लागू हो सकते हैं; और चौथा, बच्चों के लिए लोकतंत्र को कैसे संरचित किया गया है – इस बारे में उनकी जागरूकता को सीखने की औपचारिक प्रक्रिया में लाना चाहिए (उसी तरह जैसे वे अपनी नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तकों में भारतीय लोकतंत्र के बारे में सीखते हैं)।

ज़िम्मेदार नागरिक या ज़िम्मेदार विद्यार्थी बनाने का विचार जटिल और चुनौतीपूर्ण लग सकता है, लेकिन प्रत्येक बच्चे को स्कूल के प्रति अपनेपन का अहसास कराना हमारी ज़िम्मेदारी

है। अपनेपन का भाव रखने वाले नागरिक बनाने में अपनी भूमिका निभाना एक अच्छी शुरुआत है। और, मेरे संक्षिप्त अनुभव में, इसे देखना अद्भुत होता है।

[i] तोतो-चान, द लिटिल गर्ल एट द विंडो (1981) एक आत्मकथात्मक संस्मरण है जिसे जापानी टेलीविज़न कलाकार और यूनिसेफ़ गुडविल राजदूत, टेटसुको कुरोयानागी ने लिखा है।

[ii] समरहिल स्कूल, लाइस्टन, सफेक, इंग्लैंड में एक स्वतंत्र, बोर्डिंग स्कूल है। इसे 1921 में अलेक्ज़ेंडर सदरलैंड नील द्वारा इस विश्वास के साथ स्थापित किया गया था कि स्कूल को बच्चे के अनुकूल बनाया जाना चाहिए, न कि बच्चे को स्कूल के अनुकूल।

अर्चना आर अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, यादगीर, कर्नाटक में अँग्रेज़ी की रिसोर्स पर्सन हैं। उन्होंने अँग्रेज़ी विषय में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। उन्हें कहानियाँ पढ़ने और रोमांचक किताबें ढूँढ़कर बच्चों को पढ़कर सुनाने में मज़ा आता है। उनसे archana.r@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

विज्ञान की कक्षा में लोकतंत्र

चन्द्रिका मुरलीधर

अनुच्छेद 51A (h) के तहत एक ऐसा कर्तव्य है जो भारत के लिए अद्वितीय है और जो नागरिक को 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करता है।'

विज्ञान की शिक्षिका अपनी कक्षा में लोकतंत्र को कैसे देखती हैं? क्या यह कक्षा शिक्षण और सीखने के दृष्टिकोण को परिभाषित करने में कोई भूमिका निभाता है? डेवी (Dewey) के शब्दों में, 'अगर हम कभी बुद्धिमत्ता से संचालित होते, न कि चीज़ों और शब्दों से, तो विज्ञान के पास इस बात के लिए कुछ होना चाहिए कि हम क्या करते हैं, न कि केवल इस बारे में कि हम इसे बहुत आसानी और आर्थिक रूप से कैसे कर सकते हैं।'

इस बात से डेवी का क्या तात्पर्य है कि हम विज्ञान में 'क्या करते हैं?' कक्षा के बाहर हम जो जीवन जीते हैं और जीवन के पहलुओं पर हमारे दृष्टिकोण को आकार देने में इसके प्रभाव को नज़र अन्दाज़ नहीं किया जा सकता है। एक अध्ययन में ओवेन्स, सैडलर और ज़ाइडलर (Owens, Sadler and Zeidler, 2018) उन सामाजिक-वैज्ञानिक मुद्दों की बात करते हैं जिन्हें सामने लाने की आवश्यकता है। विज्ञान की कक्षा में इन बातों के लिए अवसर प्रदान किए जाते हैं -विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करना, विवादास्पद मुद्दों पर एक दृष्टिकोण विकसित करना, वैज्ञानिक सबूतों का उपयोग करके उन दृष्टिकोणों का समर्थन करना और दूसरों द्वारा दिए गए वैकल्पिक विचारों का सम्मानपूर्वक मूल्यांकन करना।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना

विज्ञान का इस तरह अभ्यास करना जो साक्ष्यों पर निर्भर करता हो, विद्यार्थियों को लोकतांत्रिक नागरिकता की ज़िम्मेदारियों के लिए तैयार करने में मदद करता है, जो न केवल उनकी विषय-सामग्री के ज्ञान को मज़बूत करता है, बल्कि वैज्ञानिक जाँच के लाभों और सीमाओं, दोनों को देखने में भी उनकी मदद करता है (रीस [Reiss], 2003)। और उन्हें मज़बूत तर्क का अभ्यास करने और चिन्तनशील निर्णय विकसित करने के अवसर देता है (ज़ाइडलर, 2014)।

पारम्परिक विज्ञान शिक्षा ने ज़्यादातर, विवादास्पद या नैतिक विषयों को दरकिनार करते हुए स्थापित और सुरक्षित ज्ञान को उपलब्ध कराया है (हॉडसन [Hodson], 2003)। ऐसा करने से शिक्षकगण पाठ्यक्रम से विवादास्पद मुद्दों को हटाकर, अपने स्वयं के नैतिक दृष्टिकोण अपने पास रखते हुए, विद्यार्थियों, माता-पिता और अन्य हितधारकों के साथ टकराव से बचने में सक्षम हो जाते हैं। फिर भी, ये विषय, जिन्हें शिक्षक पढ़ाने के लिए विवादास्पद मानते हैं, ठीक वही मुद्दे हैं जो विद्यार्थियों के जीवन और लोकतांत्रिक नागरिकता के विकास के लिए सबसे अधिक प्रासंगिक हैं (मैकगिनिस एंड सिमंस [McGinnis and Simmons], 1999)।

ओवेन्स, सैडलर और ज़ाइडलर (2018) ऐसी रणनीतियाँ बनाने पर ज़ोर देते हैं जो कक्षा समुदायों की स्थापना करें। ऐसे समुदाय जो विचारशील पूछताछ का समर्थन करें और विज्ञान की अवधारणाओं से सम्बन्धित विचारों की समीक्षा करने का प्रयास करें। यह बच्चों में अपने साथियों से कठिन सवाल पूछने, प्रयोगात्मक परिणामों की विभिन्न व्याख्याओं को चुनौती देने और इस बात को समझने की शक्ति देता है कि पूछताछ और समालोचना से उत्पादक विचार और सीख मिल सकती है।

सामाजिक-वैज्ञानिक मुद्दों पर ध्यान देने के अवसर प्रदान करने से पहले अगर विज्ञान के शिक्षक इस बात को बारीक़ी से देखें कि वे कक्षा में कुछ बुनियादी लोकतांत्रिक तरीकों को कैसे लागू कर सकते हैं (उदाहरण के लिए, पर्यावरण में उपलब्ध सामान्य संसाधनों का उपयोग) तो उन्हें काफ़ी मदद मिलेगी। यह विज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता हो सकती है, विशेष रूप से प्रयोगशाला के काम के दौरान - अर्थात यह समझना कि प्रयोगशाला नियमित कक्षा की तरह सभी के लिए सामान्य है, इस स्थान का सम्मान करना चाहिए और ज़िम्मेदारी की भावना के साथ उपकरणों को काम में लाना चाहिए। अब हम विज्ञान की कक्षा के कुछ उदाहरणों को देखेंगे।

प्रयोगशाला के कार्य और लोकतंत्र

आठवीं कक्षा के विद्यार्थी विज्ञान की प्रयोगशाला में आते हैं। वे काफ़ी उत्साहित हैं क्योंकि शायद वे पहली बार अकेले और अपने आप प्रयोग कर रहे हैं। इससे पहले वे अपने शिक्षकों

को प्रयोग करते हुए देखते। वे उसमें तभी भाग लेते थे जब उन्हें शिक्षक अनुमति देते थे - वह भी थोड़े समय के लिए। प्रयोगशाला उनके लिए एक परिचित जगह है लेकिन उसमें उन्होंने काम नहीं किया था। यह कक्षा से थोड़ी अलग है क्योंकि इसमें इधर-उधर जाने की स्वतंत्रता होती है, शिक्षिका और साथियों तक आसानी-से पहुँचा जा सकता है, सबसे बढ़कर यहाँ पर 'विज्ञान को करने' का भाव रहता है। आठवीं कक्षा के विद्यार्थी इस अनुभव की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे हैं।

शिक्षिका आती हैं और बच्चों की जगमगाती आँखों में उत्साह और चमकदार मुस्कान को अपने मन में बसा लेती हैं।

शिक्षिका : विज्ञान प्रयोगशाला में आपका स्वागत है! आपके प्रसन्न चेहरों को देखकर बेहद अच्छा लग रहा है। मैं आपके साथ यह पूरा साल बिताने के लिए उत्सुक हूँ। आप यहाँ अपने आसपास जो कुछ भी देख रहे हैं, उसका वर्णन कैसे करेंगे?

विद्यार्थी 1 : कार्य करने की मेज़, अलमारियाँ, बोतलें, नमूने…

विद्यार्थी 2 : प्रयोग के लिए विभिन्न सामग्रियों को सावधानीपूर्वक व्यवस्थित किया गया है।

विद्यार्थी 3 : काम करने की मेज़ें बहुत साफ़-सुथरी हैं!

विद्यार्थी 4 : हमारे प्रयोग के लिए एक अच्छी व्यवस्था है और प्रक्रिया शीट भी है।

विद्यार्थी 1 : बहुत सारे सूचनात्मक चार्ट हैं जिनका उपयोग हम सन्दर्भ के रूप में कर सकते हैं!

शिक्षिका : बहुत बढ़िया! अगले कुछ हफ़्तों में आप इस जगह के सभी पहलुओं का अनुभव करेंगे। तो चलिए, शुरू करते हैं। आपको आज के प्रयोग के लिए प्रक्रिया शीट मिल जाएगी, जिसकी चर्चा हमने कल कक्षा में की थी। मैं आपकी टेबल के पास आऊँगी, तब आप अपनी शंकाओं का निवारण कर सकते हैं।

शिक्षिका कक्षा में विद्यार्थियों को उनके सवालों के जवाब देती हैं और जहाँ भी ज़रूरत होती है, उनकी सहायता करती हैं। फिर वे प्रयोग और गृहकार्यों को पूरा करने के बारे संक्षिप्त चर्चा करती हैं।

शिक्षिका : मुझे लगता है कि आप सभी ने इस प्रयोग को अच्छी तरह से किया है और मैं गृहकार्य के प्रश्नों पर आपके उत्तरों की प्रतीक्षा करूँगी। हाँ, एक बात और - मैं चाहूँगी कि आपने जहाँ प्रयोग किया, उस स्थान को देखिए और मुझे बताइए कि अब आप वहाँ क्या देख रहे हैं।

विद्यार्थी चारों ओर देखते हैं।

शिक्षिका : क्या ये स्थान वैसे ही हैं जैसे प्रयोग के पहले थे?

विद्यार्थी सिर हिलाकर 'नहीं' का संकेत देते हैं।

शिक्षिका : विद्यार्थियों का एक और समूह है, जो अब आएगा। क्या प्रयोग करने के लिए हम उन्हें ये अस्त-व्यस्त मेज़ें दे सकते हैं?

सभी विद्यार्थी एक साथ : नहीं!

विद्यार्थी 2 : क्या आप हमें इन मेज़ों को साफ़ करने के लिए कोई झाड़न दे सकती हैं?

शिक्षिका : ज़रूर। (झाड़न देती हैं)।

विद्यार्थी समूह बनाते हैं और मेज़ों को सुव्यवस्थित करने लगते हैं।

शिक्षिका : इस स्थान का सम्मान करने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद, विशेष रूप से इसलिए कि यह ऐसे प्रत्येक विद्यार्थी का है जो यहाँ आता है।

यहाँ पर शिक्षिका ने स्वतंत्रता के साथ ज़िम्मेदारी का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त, सार्वजनिक स्थान के लिए सम्मान और उपयोग के बाद सफ़ाई के महत्त्व को बताया है।

बच्चे के रोज़मर्रा के जीवन में इसका क्या महत्त्व हो सकता है? इससे बच्चों में सार्वजनिक स्थानों के उपयोग के प्रति ज़िम्मेदारी का भाव उत्पन्न होगा और वे उसके रख-रखाव पर ध्यान देंगे। इस तरह का दृष्टिकोण शहरी बच्चों तक सीमित नहीं है, जिनका ऐसे स्थानों से सम्पर्क ग़ैर-शहरी बच्चों से अधिक होता है। ऐसे बच्चे अपने घर, स्कूल, बाज़ार, पूजा स्थल, सामुदायिक केन्द्रों में इन बातों का ध्यान रख सकते हैं।

ग्रहणग्रस्त धारणा

एक विद्यार्थी अपनी कक्षा शिक्षिका (जो उसकी विज्ञान शिक्षिका भी हैं) के पास आता है और प्रार्थना पत्र देता है। यह पत्र अगले दिन सूर्य ग्रहण के कारण स्कूल से अनुपस्थिति की अनुमति लेने के लिए है, क्योंकि बड़ों की हिदायत है कि सूर्य ग्रहण वाले दिन उसे घर पर होना चाहिए। शिक्षिका को आश्चर्य नहीं होता है क्योंकि ऐसा अनुरोध उनके पास पहली बार नहीं आया है। वे इस तरह के अनुरोध के पीछे की भावनाओं को भी समझती हैं, फिर भी विज्ञान की एक शिक्षिका होने के नाते वे अपने विद्यार्थियों को ग्रहण जैसी प्राकृतिक घटनाओं के बारे में वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करना चाहती हैं। उनका इरादा लम्बे समय से चली आ रही प्रथाओं की आलोचना करना नहीं है, बल्कि उन्हें तर्कसंगत दृष्टिकोण प्रदान करना है।

शिक्षिका : बच्चों, आप सभी जानते हैं कि कल सूर्य ग्रहण है। आपको पिछली कक्षा में सीखी हुई ग्रहण की अवधारणा याद है?

विद्यार्थी साथ में : हाँ !!

शिक्षिका : तो, कल सूर्य ग्रहण में क्या होने वाला है?

विद्यार्थी 1 : सूरज को ग्रहण लग जाएगा।

विद्यार्थी 2 : चन्द्रमा से... मतलब चन्द्रमा पृथ्वी और सूर्य के बीच आता है।

विद्यार्थी 3 : कल हमें घर के अन्दर रहना होगा। हम खाना नहीं खा सकते और न ही पानी पी सकते हैं।

विद्यार्थी 4 : अगर हम सूरज को देखेंगे तो हम अन्धे हो जाएँगे।

शिक्षिका : ठीक है। यानी ग्रहण एक घटना है जिसमें चन्द्रमा की छाया सूर्य को ढक लेती है। ग्रहण के दौरान आपको खाना खाने या पानी पीने की अनुमति क्यों नहीं है?

विद्यार्थी 1 : भोजन ज़हर में बदल जाता है!

शिक्षिका : ऐसा है क्या? क्या आपके पास कोई सबूत है?

विद्यार्थी एक साथ : सबूत?

शिक्षिका : हाँ, विज्ञान के विद्यार्थियों के रूप में आप जो कुछ भी कहते हैं, उसके लिए सबूत देना आवश्यक है। यदि आप कहते हैं कि ग्रहण के दौरान कोई अन्धा हो सकता है तो इसके लिए आपका आधार क्या है? किसी परिकल्पना को सिद्ध करने के लिए सबूत प्रस्तुत करना विज्ञान की शिक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण है। कल के लिए हमारा काम यह है कि सूर्य ग्रहण के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी इकट्ठा करें और उसे कक्षा में प्रस्तुत करें। मैं इस चर्चा की प्रतीक्षा करूँगी।

यहाँ पर शिक्षिका ने बच्चों को अपनी अधिगृहीत मान्यताओं से परे देखने और उन पर सवाल करने के लिए एक मंच प्रदान किया है।

इन दोनों विवरणों में, शिक्षकों ने आहिस्ता से और संवेदनशील रूप से सवाल उठाए हैं और मुद्दों व ज़िम्मेदारियों के बारे में जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया है। ऐसा करने से, उन अभ्यासों पर चर्चा करने के लिए एक ऐसा वातावरण निर्मित हो जाता है, जिनका शायद कोई मज़बूत वैज्ञानिक तर्काधार न हो। इस तरह की अन्तःक्रिया के लिए निरन्तर संवाद आवश्यक है और यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि वे विज्ञान की कक्षा से पृथक मामले नहीं हैं। शिक्षक और विद्यार्थी को प्रचलित सामाजिक मान्यताओं पर लगातार सवाल उठाने चाहिए, उनके अस्तित्व के आधार का पता लगाना चाहिए और उनके लिए तर्कसंगत स्पष्टीकरण खोजने चाहिए।

अन्त में, शिक्षकगण विज्ञान की ऐसी कक्षा की रचना कर सकते हैं जहाँ गम्भीर चर्चाओं को प्रोत्साहित किया जाता हो, प्रश्नों का स्वागत किया जाता हो और सबूत ढूँढ़ना अनिवार्य हो। ऐसे शिक्षक अपने विद्यार्थियों में तर्कसंगत सोच की भावना पैदा करते हैं और उन्हें लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं से रूबरू करवाते हैं। इन विद्यार्थियों से यह अपेक्षा की जा सकती है कि वे सामाजिक-वैज्ञानिक मुद्दों को उद्देश्यपूर्ण और निष्पक्ष तरीके से देखेंगे।

References

Dewey, John (1941). Science and Democracy. *The Scientific Monthly*. American Association for the Advancement of Science

Hodson, D. (2003). Time for action: Science education for an alternative future. *International Journal of Science Education*. 25, 645-670

Reiss, M (2003). Science education for social justice. In C.Vincent (Ed). *Social justice education and identity* (pp. 153-164). London, England: Routledge Falmer

McGinnis, J.R & Simmons, P. (1999). Teachers' perspectives of teaching science-technology-society in local cultures. A sociocultural analysis. *Science Education*. 83, 189

Owens, D.C, Troy D. Sadler & Dana L. Zeidler (2018). Controversial issues in the science classroom. *Phi Delta Kappa International*. pp 45-49

चन्द्रिका मुरलीधर स्कूल ऑफ़ कंटीन्यूइंग एजुकेशन एण्ड यूनिवर्सिटी रिसोर्स सेंटर, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में संकाय सदस्य हैं। वे पढ़ाने के साथ-साथ पेशेवर विकास कार्यक्रमों में योगदान देती हैं। वे विज्ञान-शिक्षा, शिक्षक-क्षमता संवर्धन, पाठ्य-सामग्री विकास, पाठ्यपुस्तक लेखन और विश्वविद्यालय प्रकाशनों के सम्पादकीय सदस्य के रूप में कार्य कर रही हैं। उनसे chandrika@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

नागरिकता-शिक्षा के माध्यम से वास्तविक जीवन की चुनौतियों का समाधान

नेहा यादव और अस्मिता तिवारी

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा के उद्देश्य और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 जैसे मार्गदर्शक दस्तावेज़ों में मानवीय मूल्यों की आवश्यकता और संविधान में दिए गए अधिकारों, कर्तव्यों व सिद्धान्तों के बारे में जागरूकता को लगातार चिह्नांकित किया गया है। भारतीय सन्दर्भ में, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 में इस बात को स्वीकार किया गया है कि स्कूली शिक्षा में नागरिकता के ऐसे विकास की ज़िम्मेदारी निहित होनी चाहिए, जो नागरिकों के अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक हो और हमारे संविधान में निहित सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाती हो।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, 2005 के बाद पाठ्यक्रमों में कई सुधार किए गए हैं। हालाँकि, इस प्रयास के बावजूद, विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ काम करने का हमारा जो अनुभव है, उसके अनुसार नागरिकशास्त्र/सामाजिक और राजनीतिक जीवन (एसपीएल) पर प्राप्त प्रतिक्रिया यह बताती है कि यह आमतौर पर सैद्धान्तिक, 'अप्रासंगिक' या 'अव्यावहारिक' ही है। हमारे जैसे देश के लिए, यह एक संकट का संकेत है। इसका अर्थ यह है कि एक तरफ़ हमारे सामने हर साल स्कूलों से बाहर आने वाले ऐसे बहुत-से निरुत्साही विद्यार्थी हैं जिनके पास वे ज़रूरी जानकारियाँ और व्यावहारिक कौशल नहीं होते, जो सक्रिय और प्रवृत्त नागरिक होने के लिए आवश्यक हैं। वहीं दूसरी तरफ़, हमारे गाँवों और शहरों में ख़राब शासन व्यवस्था से जुड़ी वे समस्याएँ जिन्हें राज्य प्रशासन के साथ प्रभावी नागरिक-जुड़ाव के माध्यम से हल किया जा सकता है, मौजूद रहेंगी।

वी, द पीपल अभियान, नागरिक समाज का एक संगठन है जिसका मिशन भारत में एक सुविज्ञ, सक्रिय और ज़िम्मेदार नागरिकता का विस्तार करना है। ऊपर बताई गई कमी को दूर करने के लिए इस संगठन ने बहुत ध्यानपूर्वक नागरिकता शिक्षा कार्यक्रम (*सिटिज़न एजुकेशन प्रोग्राम* - सीईपी) नामक पाठ्यक्रम तैयार किया है, जिसके माध्यम से शिक्षकों और विद्यार्थियों की क्षमता निर्माण पर ध्यान दिया जाता है।

गुणवत्तापूर्ण नागरिक शिक्षा, ज़िम्मेदार नागरिकता को विकसित करने की बुनियाद है और आम धारणा यही है कि इसे प्राथमिक विद्यालय के दौरान ही भली-भाँति किया जा सकता है। सीईपी, नागरिक के दृष्टिकोण से एसपीएल को एक विषय के रूप में समझने का प्रयास करता है। यह इस सवाल का जवाब देने की कोशिश करता है कि – लोकतंत्र में एक नागरिक के रूप में, मेरे जीवन में एसपीएल शिक्षा मेरे लिए कैसे प्रासंगिक है? इस तरह, विद्यार्थी *सिविक एक्शन प्रोजेक्ट्स* (सीएपी) और अभियानों के माध्यम से कक्षा और व्यावहारिक उपयोग में नवीन पद्धतियों के बारे में जान पाते हैं। उनके सीखने की यात्रा को अभिवृत्तियों, ज्ञान और कौशलों की रूपरेखा के माध्यम से मज़बूत किया जाता है।

हमारी कार्यप्रणाली

हमारी विषय-सामग्री इन तीन मूलभूत प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर विकसित की जाती है :

- नागरिकों की अभिवृत्तियों/दृष्टिकोणों में किन बदलावों की आवश्यकता है?
- नागरिक समाज शिक्षा के लिए कौन-सी जानकारी और ज्ञान की आवश्यकता है?
- ज़मीनी स्तर पर कार्रवाई करने के लिए कौन-से कौशलों और उपकरणों की आवश्यकता है?

यह सामग्री इस रूपरेखा के आधार पर बनाई गई है :

संविधान के विभिन्न पहलुओं को इस बात से समझा जाता

अभिवृत्तियाँ	ज्ञान	कौशल
अवधारणा का 'क्यों', जैसे कि हमें आज़ादी क्यों चाहिए, समानता क्यों महत्त्वपूर्ण है आदि।	अवधारणा का 'क्या', जैसे कि मौलिक अधिकार क्या हैं, क़ानून क्या है, राज्य की संरचना क्या है आदि।	कार्रवाई 'कैसे' की जाए, जैसे कि किसी भी कार्रवाई को करने के लिए आवश्यक कौशल/उपकरण।

है कि वे *क्या* हैं और एक नागरिक उनसे *कैसे* जुड़ सकता है। इसमें नागरिक कार्रवाई के लिए उपकरणों के व्यावहारिक प्रयोग भी जुड़ जाते हैं। हम स्कूल पाठ्यक्रम के भीतर सीईपी को एकीकृत करने और सामाजिक विज्ञान के शिक्षकों के साथ ट्रेनिंग ऑफ़ ट्रेनर (टीओटी) यानी प्रशिक्षक का प्रशिक्षण मॉडल का अनुसरण करने का प्रयास करते हैं। इस प्रक्रिया में पाठ्यक्रम का मानचित्रण एक आवश्यक क़दम है। ऐसा करने से हम सीईपी और एसपीएल पाठ्यक्रम के बीच एक मज़बूत सम्बन्ध बनाने में सक्षम हो पाते हैं।

'इन गतिविधियों ने विद्यार्थियों में नागरिकशास्त्र में रुचि पैदा करने में मदद की और उन्हें इस विषय का महत्त्व और व्यावहारिक प्रासंगिकता समझने में मदद मिली।'

- मेंटर टीचर, शिक्षा निदेशालय, नई दिल्ली

'मुझे यह तो नहीं पता कि इन सभी विवरणों और तरीक़ों का अन्ततः कक्षा में कैसे उपयोग हो पाएगा। लेकिन हम सभी शिक्षकों के लिए मैं यह कह सकता हूँ, अब हम वह शिक्षक नहीं हैं, जो छह महीने पहले थे।'

- निजी स्कूल शिक्षक, पुणे, महाराष्ट्र

नागरिक कार्रवाई परियोजना (सिविक एक्शन प्रोजेक्ट)

यह कार्रवाई-चालित कार्यप्रणाली है जो दिल्ली-एनसीआर और महाराष्ट्र के कई स्कूलों में विद्यार्थियों और शिक्षकों को प्रवृत्त और सक्रिय नागरिक बनाने में कारगर रही है। विद्यार्थी अपने परिवेश से कोई नागरिक मुद्दा चुनते हैं, ख़ुद को उसके लिए अपेक्षित ज्ञान और कौशल के साथ लैस करते हैं ताकि वे नागरिक कार्रवाई शुरू कर सकें और समस्या को हल करने के लिए अधिकारियों के साथ मिलकर काम कर सकें। इस परियोजना से विद्यार्थियों को, अपने आस-पास के वास्तविक जीवन के मुद्दों को हल करने के लिए, सीखी हुई क्षमताओं को अमल में लाने का अवसर मिलता है और इस प्रकार वे ज़िम्मेदार और सक्रिय नागरिकता के पहलुओं का अभ्यास कर पाते हैं।

हमने विद्यार्थियों की नागरिक क्षमताओं पर सीएपी के प्रभाव का आकलन करने के लिए एक अध्ययन किया। यह देखने के लिए कि विद्यार्थियों की क्षमताओं का मूल्यांकन कैसे किया गया, हमने विद्यार्थियों के दो समूह बनाए – एक नियंत्रण समूह और दूसरा प्रायोगिक समूह। अध्ययन का उद्देश्य इस बात का आकलन करना था कि दोनों समूह अपनी कार्य योजनाएँ लिखने में अपने नागरिक ज्ञान, कौशलों और मनोवृत्तियों का उपयोग कैसे करते हैं। क्या दोनों समूहों द्वारा दर्ज की गई कार्य योजनाओं के बीच कोई गुणात्मक अन्तर है।

इस अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि सीएपी अभियान से गुज़रे प्रायोगिक समूह के विद्यार्थियों ने नियंत्रण समूह के विद्यार्थियों की तुलना में अपने नागरिक ज्ञान, कौशलों और मनोवृत्तियों में महत्त्वपूर्ण वृद्धि की है। प्रायोगिक विद्यार्थियों द्वारा लिखी गई कार्य योजनाएँ अच्छी तरह से शोध की हुई और भली-भाँति संरचित नागरिक कार्रवाई को दर्शाती हैं। इसमें कई सरल नागरिक युक्तियों को शामिल किया गया है। जैसे कि सरकारी अधिकारियों के साथ काम करते समय लिखित संवाद का उपयोग करना। इसके विपरीत नियंत्रण समूह के विद्यार्थियों की कार्य योजना में समस्याओं को हल करने की इच्छा और उपयुक्त दृष्टिकोण तो नज़र आए लेकिन अपनी नागरिक कार्रवाई को प्रमाणित करने के लिए जिस ज्ञान और कौशल की आवश्यकता थी, उसे लेकर उन्हें दिक़्क़त पेश आई।

प्रायोगिक समूह के विद्यार्थी अपनी परियोजनाओं में की गई गतिविधियों के आधार पर नागरिक कार्रवाई योजना लिखने में सक्षम हुए। वे किसी परिकल्पित समस्या को, पाठ्यक्रम सम्बन्धी अवधारणाओं, जैसे कि मौलिक अधिकारों और उस समस्या से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधानों, से भी जोड़ पाए। कार्य योजना से यह स्पष्ट है कि सीएपी हस्तक्षेप के बाद प्रायोगिक समूह के विद्यार्थियों ने नागरिक क्षमताओं में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हासिल की। दूसरी ओर, नियंत्रण समूह के विद्यार्थी को ऐसे आवश्यक ज्ञान और कौशल हासिल करने की ज़रूरत थी जिनके द्वारा वे किसी समस्या को हल करने की अपनी इच्छा को प्रभावी नागरिक कार्रवाई में बदल सकें।

'इस समस्या को हल करने के लिए, हम पहले संविधान में इससे सम्बन्धित अधिकार को देखेंगे और फिर उन अधिकारों के लिए बनाए गए क़ानूनों का पता लगाएँगे। हम नगर निगम के कार्यालय में जाएँगे, शिकायत दर्ज कराएँगे और देखेंगे कि क्या वे उसे नोट करते हैं या नहीं। अगर वे हमारी शिकायत को स्वीकार नहीं करते हैं, तो हम, स्कूल के सभी विद्यार्थी, पैसा इकट्ठा करेंगे और पानी की निकासी का काम पूरा करेंगे।'

- एक अध्ययन में विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाएँ

लाभ और परिणाम

हमारे अनुभवों और प्रभाव के आकलन ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि अच्छी तरह से नियोजित सीएपी डिज़ाइन किसी स्कूली व्यवस्था में अत्यधिक व्यवहार्य है। सीएपी के व्यावहारिक अनुभव एसपीएल पढ़ाने वाले शिक्षकों के लिए एक बढ़िया साधन हैं। इसकी सहायता से वे विद्यार्थियों के सीखने को अधिक व्यावहारिक और कौशल-आधारित बना पाते हैं।

माजलगाँव के विद्यार्थियों ने स्ट्रीटलाइटें लगवाईं

ऐसी ही एक गतिविधि के दौरान, महात्मा फुले विद्यालय, माजलगाँव, ज़िला बीड, महाराष्ट्र के विद्यार्थियों ने अपने स्कूल परिसर के पास स्ट्रीटलाइट लगवाने का मुद्दा चुना। उन्होंने इसके लिए अच्छी तरह से शोध करके दस्तावेज़ तैयार किए और लाइट लगवाने के लिए स्थान भी चुना। इन सबको उन्होंने अपने आवेदन पत्र के साथ नत्थी किया और उसे ले जाकर माजलगाँव नगरपालिका परिषद को दिया। लगातार प्रयासरत रहने और अधिकारियों के साथ विद्यार्थियों की बैठक के बाद स्कूल परिसर के पास स्ट्रीटलाइट लग गई।

स्कूल की चारदीवारी बनवाने के लिए विद्यार्थियों ने आरटीई का उपयोग किया

महात्मा फुले माध्यमिक आश्रमशाला, ज़िला सतारा, महाराष्ट्र के विद्यार्थियों ने अपने स्कूल के चारों ओर एक चारदीवारी बनवाने के लिए कटगुन की ग्राम पंचायत को एक आवेदन दिया। यह स्कूल परिसर पंचायत का था और जिसे स्कूल द्वारा पट्टे पर इस्तेमाल किया जा रहा था। विद्यार्थियों ने आवेदन के साथ शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 की प्रतिलिपि को संलग्न किया जिसमें प्रत्येक स्कूल परिसर के लिए चारदीवारी को अनिवार्य किया गया है।

आवेदन पत्र जनवरी के महीने में दिया गया था। विद्यार्थी कुछ महीनों तक उसके बारे में पता भी करते रहे। अन्ततः ग्राम पंचायत ने बजट से 1,21,000/- रुपए का उपयोग किया और स्कूल को अपनी बहुप्रतीक्षित चारदीवारी मिल गई।

संवैधानिक मूल्यों पर अभियान

इस कार्य के लिए एक अत्यन्त सरल लेकिन अति महत्त्वपूर्ण संसाधन की आवश्यकता है, और वह है : अपने जीवन के अनुभव, यहाँ तक कि युवा नागरिकों के अनुभव भी। पिछले कुछ वर्षों से, हम शिक्षा निदेशालय, नई दिल्ली के तहत मेंटर शिक्षकों के साथ काम कर रहे हैं। हमने सरकारी स्कूलों के विद्यार्थियों और उनके सभी विषयों के शिक्षकों के साथ मिलकर द *कॉन्स्टीट्यूशन एट 70* (संविधान के 70 बरस) पर काम किया है जो संवैधानिक मूल्यों पर चलाया गया एक छोटा अभियान है।

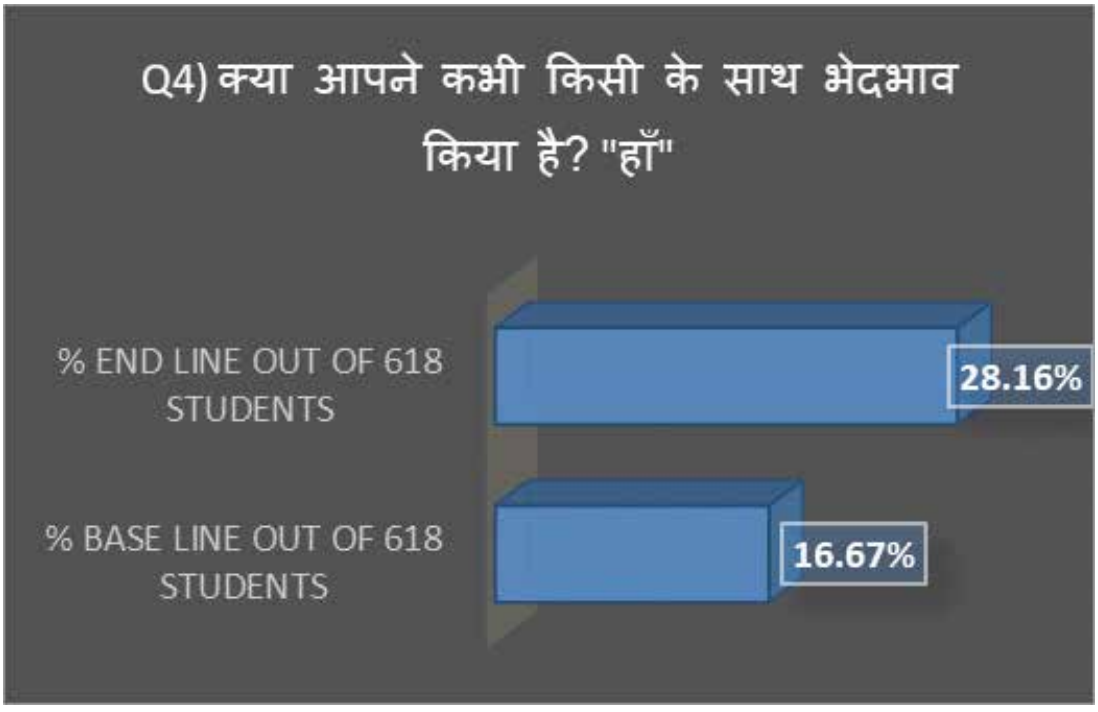

अभियान के प्रभाव आकलन से उदाहरण

इस अभियान के प्रभाव का अध्ययन ऐसे विभिन्न स्कूलों के शिक्षकों और विद्यार्थियों के समूह के माध्यम से किया गया जिनके साथ हम लगातार जुड़े हुए थे। हालाँकि, विभिन्न स्कूलों में विद्यार्थी अलग-अलग सांस्कृतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के थे, लेकिन उनके विचार एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु से सम्बन्धित थे – हमारे संविधान की प्रस्तावना। इस अभियान में उन्हें अपने आस-पास के लोगों के समान समूहों के साथ बातचीत करनी थी – जैसे सभी को अपने परिवार के सदस्यों और अपने पड़ोसियों के साथ बातचीत करनी थी। चूँकि, लोगों के ये समूह सभी के लिए समान थे, इसलिए उन सभी को इस बात को समझने में मदद मिली कि लोगों के लिए इन मूल्यों के क्या मायने हैं और वे दैनिक आधार पर इन मूल्यों के साथ कैसे जुड़ते थे।

युवा नागरिकों के बीच इस चेतना को स्थापित करने व मूल्यों का एक नज़रिया विकसित करने के प्रयास ने हमें यह दिशा दी कि हम उनके साथ संविधान की प्रस्तावना पर काम करना जारी रखें। इसके अलावा, हमने यह सुनिश्चित किया कि सभी विषयों के शिक्षक अभियान में शामिल हों जिससे कि शिक्षकों को भी संवैधानिक मूल्यों के साथ जुड़ने का एक रास्ता मिल सके। ऐसा लगता था कि विषय के साथ जीवन्त अनुभवों को जोड़ने से शिक्षकों और विद्यार्थियों में *प्रस्तावना का सार* सीखने की दिलचस्पी जाग उठी हो।

इस अभियान के कारण विद्यार्थियों के मन से लैंगिक मानदण्डों और जाति-आधारित भेदभाव से सम्बन्धित कई रूढ़ियाँ दूर हुईं। इससे पहले कुछ विद्यार्थी ऐसे विद्यार्थियों से बात नहीं करते थे जो उनकी आर्थिक स्थिति के बराबर न हों, लेकिन ये बातें अब पुरानी हो चुकी हैं।

- गवर्नमेंट बॉयज़ सीनियर सेकेंडरी स्कूल, नई दिल्ली के शिक्षक

निष्कर्ष

दुनियाभर में जो अध्ययन हुए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि नागरिक शिक्षा प्रदान करना अवरोध मुक्त नहीं है। भारतीय सन्दर्भ में, सबसे बड़ी चुनौती रही है कि एक विषय के रूप में नागरिकशास्त्र को रटने वाले तरीक़ों से दूर करके सीखने की एक दिलचस्प प्रक्रिया कैसे बनाया जाए। इस चुनौती को ध्यान में रखते हुए, *वी, द पीपल अभियान,* स्कूलों के साथ मिलकर काम करता है ताकि नागरिकशास्त्र सीखने के तरीक़ों का संवर्धन इस तरह से किया जाए कि जिससे यह विषय रोचक, व्यावहारिक और हमारे जीवन के लिए प्रासंगिक बन जाए। लेकिन, इसकी सफलता के लिए यह ज़रूरी है कि शिक्षकों की क्षमता का निर्माण किया जाए और उनके अन्दर प्रयोग करने की इच्छा हो।

References

For the study in Maharashtra schools, NCERT's 'Journal of Indian Education' (Volume XLV, Number 2, August 2019) https://ncert.nic.in/pdf/publication/journalsandperiodicals/journalofindianeducation/JIE_AUGUST2019.pdf

Film: https://youtu.be/u6EB6lNiJ3M

नेहा यादव वी, द पीपल अभियान में पार्टनरशिप्स की प्रोग्राम लीड हैं। उनका यह जुनून है कि वे लोगों को अपने अधिकारों को बनाए रखने में, और उनके रोज़मर्रा के जीवन में संवैधानिक मूल्यों का उपयोग एक लेंस के रूप करने में सक्षम कर सकें। उनका मुख्य लक्ष्य है कि नागरिकों के रूप में अपनी भूमिका को समझने के लिए लोगों की क्षमताओं का निर्माण किया जाए और इसके लिए वे भागीदारी केन्द्रित कार्यक्रमों का रणनीतिकरण, डिज़ाइनिंग और कार्यान्वयन करती हैं। नेहा ने क्लेम्सन यूनिवर्सिटी से इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त की है। उन्होंने स्कूल ऑफ़ इंस्पायर्ड लीडरशिप से एमबीए किया है। उनसे nyadav.ba@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अस्मिता तिवारी *वी, द पीपल अभियान* में प्रोग्राम मैनेजर, कंटेंट हैं। अस्मिता पिछले तीन वर्षों से विकास के क्षेत्र में कार्यरत हैं। उन्होंने राजनीति विज्ञान में स्नातक और शिक्षा में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की है। *वी, द पीपल* अभियान में वे मुख्य रूप से विविध तरह के दर्शकों तथा श्रोताओं के लिए प्रासंगिक, चिन्तनशील और दिलचस्प सामग्री विकसित करने के साथ ही उसके प्रभाव का अध्ययन करती हैं। उनसे asmyta.tiwari@wethepeople.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

समावेशन | एक मूल अधिकार

आदिवेप्पा कुरी

जैसे ही उसका नाम पुकारा जाता है, वह चाहे कहीं भी हो, माधव दौड़ा-दौड़ा अपने शिक्षकों के आगे आकर खड़ा हो जाता है। शिक्षक उसे हर कार्य के लिए बुलाना पसन्द करते हैं। न तो वह धाराप्रवाह बोल पाता है और न ही पढ़ने-लिखने में कुशल है पर फिर भी वह पूरे स्कूल का लीडर है।

कक्षा एक में भर्ती होने के समय, इस बच्चे को अपने रोज़मर्रा के काम करने में भी दिक़्क़त आती थी। पर अब वह किसी भी दूसरे बच्चे की तरह अपना सारा काम स्वयं करता है और सभी के साथ मिल-जुलकर रहता है। अब स्कूल का दौरा करने वाले लोगों से बात करने का आत्मविश्वास आ गया है माधव में।

समावेशन से बदलाव

माधव एक विशेष आवश्यकताओं वाला बच्चा है। उसमें यह परिवर्तन, उसके शिक्षकों के प्यार, स्नेह और उनके द्वारा दिए गए अवसरों के कारण सम्भव हुआ है। यह इस बात का भी प्रमाण है कि यदि सही अवसर और सहायता दी जाए तो सभी बच्चों को साथ लेकर आगे बढ़ना मुमकिन है। और समानुभूति से कहीं अधिक यह उनका अधिकार है कि उन्हें ऐसे अवसर मिलें। केवल समानुभूति ही पर्याप्त नहीं है, सीखने या शारीरिक अक्षमता से जूझ रहे बच्चों को विकसित होने के अवसर दिए जाने चाहिए। उनसे धैर्य, प्रेम और सम्मान के साथ व्यवहार करने की आवश्यकता है जो उन्हें सीखने की प्रक्रिया में मदद करेगी और यह संविधान में निहित समानता और न्याय के उनके अधिकार का हिस्सा है।

कुछ साल पहले हमने विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए सुरपुर में एक मेले का आयोजन किया था। इसे सफल बनाने के लिए हमारी टीम ने लगभग दो महीने बड़ी कड़ी मेहनत की। मेले के दिन जिस तरीक़े से हर बच्चे ने अपने टॉपिक को प्रदर्शित किया, उसे देखकर शिक्षक और माता-पिता मंत्रमुग्ध हो गए थे और असीम प्यार और सराहना से भर उठे थे। उस दिन हमें कुछ ऐसा कर गुज़रने का एहसास हुआ जिसे हम शब्दों में बयां नहीं कर सकते। बच्चों के कारण हमें ख़ुद पर गर्व हो रहा था!

हम लोगों के बीच अभी भी यह धारणा बैठी हुई है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे, परिवार व समाज पर बोझ होते हैं। इन बच्चों में अन्तर या कमियाँ देखने के बजाय हमें इस बात पर ग़ौर करना चाहिए कि हमारी व्यवस्था में उनके शिक्षा के अधिकार को कैसे सुनिश्चित किया जाए। यह मेरा विश्वास है कि यदि शिक्षक अपना मन बना लेते हैं, तो हर बच्चे को अच्छी शिक्षा दी जा सकती है। जब एक विशेष आवश्यकताओं वाली 7 वर्षीय बच्ची के माता-पिता को माधव की प्रगति के बारे में पता चला, तब उन्होंने भी अपनी बच्ची को उसी स्कूल में भर्ती कराया। अब वह बच्ची भी अपने रोज़मर्रा के कार्य स्वतंत्र रूप से करने में सक्षम हो गई है और बच्ची के माता-पिता उसके इस परिवर्तन से बहुत ख़ुश हैं।

विविध सामाजिक समूह

राजकीय प्राथमिक विद्यालय, शादीमहल (मुद्गल, ब्लॉक-लिंग्सगुर, ज़िला-रायचूर) में विविध सामाजिक पृष्ठभूमि के बच्चे आते हैं। वर्तमान में 42 बच्चे यहाँ पढ़ाई कर रहे हैं, जिनकी मातृभाषा अलग-अलग है (इनमें से 18 तेलुगू, 5 मराठी, 8 उर्दू बोलते हैं और 1 बच्चे की मातृभाषा कुंचाटी है (*कूँचिकोरवास* लोगों की भाषा), और बाक़ी बच्चों की मातृभाषा कन्नड़ है। इन बच्चों के माता-पिता नाट्य कलाकार (*हगालू वेशगारारू*), राजमिस्त्री (*कल्लू कुटिगारू*), टोकरी बुनने, चूड़ी बेचने, रसोई के छोटे सामान बेचने आदि का काम करते हैं। वहीं कुछ अभिभावक भीख माँग कर जीवनयापन करते। वे झुग्गी-झोपड़ियों में रहते हैं। और इनमें से कुछ बच्चे स्कूल के बाद भीख माँगने जाते हैं। जिन बच्चों की मातृभाषा कन्नड़ नहीं है, वह भी कन्नड़ अच्छी तरह बोलते हैं क्योंकि यह उनकी आजीविका की भाषा है।

इसके बावजूद भी, शिक्षकों में निहित समानता और सामाजिक न्याय की भावना के कारण, ऐसी विविध सामाजिक पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों में किसी भी प्रकार की हीन भावना नहीं है। एक बात जो स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आती है वह यह है कि बच्चे खुल कर एक-दूसरे के साथ खेलते, भोजन साझा करते, एक साथ काम करते, और एक-दूसरे की मदद करते हैं। शिक्षकों में बच्चों के लिए प्यार और करुणा है।

शिक्षकों की भूमिका

बच्चे स्कूल में जब पहली कक्षा में भर्ती होते हैं उस समय उन्हें स्कूल की प्रक्रियाओं से सामंजस्य बैठाने में कठिनाइयाँ आती हैं। वे अक्सर बाहर जाना चाहते हैं और दूसरों से मिलने-

जुलने में भी हिचकिचाते हैं। एक शिक्षिका, सुश्री प्रमिला न केवल बच्चों के जीवन का सम्मान करती हैं बल्कि स्कूल में कुछ समय के लिए वरिष्ठ विद्यार्थियों को छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के साथ बातचीत का मौक़ा देती हैं। चूँकि वे बच्चों की भाषा में बातचीत कर सकती हैं, इस कारण बच्चे उनसे खुलकर अपनी भावनाएँ साझा करते हैं। वह बच्चों को गीत गाने और कहानियाँ सुनाने के लिए प्रोत्साहित करने के साथ-साथ उन्हें अपने दैनिक जीवन को व्यापक सन्दर्भों में समझने मदद करती हैं। बच्चों के सामाजिक परिवेश सम्बन्धी पूर्व-ज्ञान का भी वे अच्छा उपयोग करती हैं। बच्चों द्वारा किए गए छोटे-से-छोटे काम को भी पहचान और सराहना मिलती है। शिक्षिका के लोकतांत्रिक दृष्टिकोण के कारण बच्चों में आत्म-मूल्य की भावना विकसित होती है। शिक्षिका से बात करने पर, यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि वे प्रत्येक बच्चे को अच्छी तरह से जानती हैं और यह भी जानती हैं कि हर एक विद्यार्थी क्या और कैसे सीख रहा है।

प्रमिला इन बच्चों की क्षमताओं को अच्छी तरह जानती हैं। वह बच्चों के रोज़मर्रा के अनुभवों को और समृद्ध करने के लिए नली-कली पद्धति का उपयोग करती हैं। वह बच्चों को बात करने, एक-दूसरे के साथ चर्चा करने और अपनी बात खुलकर व्यक्त करने का मौका देती हैं। ज़्यादातर बच्चों को कहानी सुनाना, चित्र बनाना और मिट्टी से खिलौने बनाना पसन्द है। ऐसा इसलिए है क्योंकि स्कूल में आने से पहले भी कई बच्चों के पास, आस-पास के गाँवों के स्थानीय मेलों में अपने माता-पिता के साथ खिलौने और बरतन बेचने का अनुभव होता है। इस कारण, इस स्कूल के बच्चे हर साल आयोजित होने वाले टैलेंट शो (प्रतिभा करंजी) में चित्र बनाने और कहानी सुनाने जैसे कार्यक्रमों में भाग लेते हैं।

संक्षेप में कहें तो इस स्कूल में, बच्चे साक्षरता प्राप्त करने के साथ ही जीवन के बारे में भी सीखते हैं। बच्चे हर दिन स्वेच्छा से स्कूल आते हैं। स्कूल एक परिवार की तरह है और सीखना हर उस चीज़ का एक हिस्सा है जो बच्चे स्कूल में करते हैं। यह तथ्य कि बच्चे स्वतंत्र रूप से बात करने में सक्षम हैं और उनकी प्रतिभाओं को यहाँ प्रोत्साहन मिलता है, यह दर्शाता है कि संवैधानिक संकल्पनाओं को लागू करना सम्भव है और सभी स्कूलों में इसे वास्तविकता में बदला जा सकता है।

बच्चों की पहचान सुरक्षित रखने के लिए नाम बदले गए हैं।

आदिवप्पा कुरी पिछले दस वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला संस्थान, रायचूर, कर्नाटक के साथ काम कर रहे हैं। उन्होंने डीएसईआरटी, बेंगलूरु द्वारा आयोजित गुरुचेतना कार्यक्रम में योगदान दिया है। उनसे adiveppa.kuri@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

बच्चों को ज़िम्मेदारी सौंपना

अनिल एस अंगडिकि

हमारे ज़्यादातर शैक्षिक लक्ष्य या पाठ्यचर्यात्मक दिशा-निर्देश, शिक्षा के माध्यम से तार्किक सोच रखने वाले व्यक्तियों का विकास करने की बात करते हैं। यह बात साफ़ है कि इसकी ज़िम्मेदारी काफ़ी हद तक विद्यालय और उसके सभी हितधारकों के सामूहिक प्रयासों पर निर्भर करती है। लेकिन, जैसा कि कई शिक्षकों ने अनुभव किया है, इस विचार को अमली जामा पहनाना इतना आसान नहीं है। हममें से ज़्यादातर लोग इस बात से सहमत होंगे कि बच्चों के विचारों को आकार देने में मदद करने वाले कई अभ्यासों को सुगम बनाने में शिक्षकों की एक अहम भूमिका है। हालाँकि देखभाल करने वाले लोग और संगी-साथी भी इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, लेकिन वह भी नियमित बातचीत के ज़रिए शिक्षकों से प्रभावित होते हैं। स्कूलों में आमतौर पर एक समग्र योजना होती है और इसे क्रियान्वित करने के लिए विभिन्न प्रक्रियाएँ और कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

अज़ीम प्रेमजी स्कूल, यादगीर में हमने एक प्रक्रिया शुरू करने की कोशिश की, जिससे मेरे विचार में, विद्यालय के कई अन्य अभ्यासों को समर्थन मिला। जब हमने बच्चों के लिए एक स्वतंत्र और भयमुक्त वातावरण बनाना शुरू किया, हमें कई रूप में इसके लाभ मिलने लगे। जैसे बच्चों के साथ अच्छे सम्बन्ध; खुले विचार रखने वाले, आत्म-विश्वास से भरे बच्चे जो स्वतंत्र रूप से ख़ुद को अभिव्यक्त करने लगे और कक्षा में जो बात समझ में नहीं आती उसके बारे में सवाल पूछने लगे हैं। पर धीरे-धीरे, बच्चों के व्यवहार को सम्भालने में हमें कुछ चुनौतियाँ भी आने लगीं। जैसे बच्चों द्वारा अपने साथियों या उनके कार्य का सम्मान न करना, माता-पिता से ठीक से बात नहीं करना, कक्षा का काम पूरा न करना, कक्षा या सुबह की सभा में खलल डालना, विद्यालय के कार्यक्रमों में भाग लेने में दिलचस्पी नहीं दिखाना या दूसरों का सहयोग नहीं करना आदि आदि।

इन चुनौतियों पर आपस में चर्चा व दूसरे स्कूलों की विशेषज्ञता और अवलोकनों की मदद से हम पहले से चल रही संवाद-प्रक्रिया को और बढ़ाने एवं सुधारने में लग गए। इसके लिए बच्चों के साथ व्यक्तिगत रूप से, उनके माता-पिता, साथियों और कभी-कभी समूहों में बातचीत की जाती थी और इसके लिए विभिन्न तरीक़े अपनाए गए। कुछ हद तक, हमें इससे मदद मिली। लेकिन वे कक्षा में, असेम्बली या अन्य कार्यक्रमों में काफ़ी वक़्त लगाया करते थे। जब कुछ बच्चों ने इन संवादों को हल्के में लेना शुरू किया, तो कुछ और क़दम उठाए गए जैसे बच्चों द्वारा कक्षा के नियम बनाना और उनकी नियमित रूप से समीक्षा करना। बच्चों व उन अभिभावकों से मिला फ़ीडबैक जो अपने बच्चों के व्यवहार को दण्ड (वे घरों में ज़्यादातर ऐसा करते हैं) द्वारा नियंत्रण में रखने में असमर्थ हैं। कक्षा व दूसरी गतिविधियों में क़ीमती समय खोने जैसे हमारे अनुभव से हमें यह महसूस होने लगा कि बच्चों के साथ बातचीत के अलावा और भी कुछ करने की ज़रूरत है जिससे हमारा समय बचे। और सबसे ज़रूरी बात यह कि बच्चों में एक ज़िम्मेदारी की भावना आए।

अन्य स्कूलों में ऐसी चुनौतियों को दूर करने के लिए अपनाए गए लोकतांत्रिक अभ्यासों को देख, हमारे मन में भी कुछ विचार आए। प्रभावी अभ्यासों में से एक को मैं यहाँ ज़रूर बताना चाहूँगा। यह है प्रभावी ढंग से चुनाव कराना जिसमें सभी कक्षाओं से प्रतिनिधि चुने जाते हैं और फिर निर्वाचित समिति की बैठकों के माध्यम से नियम बनाए जाते हैं। इस समिति द्वारा विद्यालय की दिनचर्या, चुनौतियों और ज़्यादातर व्यवहार सम्बन्धी पहलुओं पर चर्चा की जा सकती है। बच्चों को विद्यालय में प्रक्रियाओं और अनुशासन स्थापित करने की ज़िम्मेदारी वाली भूमिका में लाने का यह तरीक़ा अच्छा है और कई विद्यालय इसका उपयोग कर बच्चों में लोकतांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने में सफल भी हुए होंगे। विद्यालय प्रशासन के इस मॉडल के कई फ़ायदे हैं।

हमने उन सभी अभ्यासों पर चर्चा करना शुरू की जिन्हें इस मॉडल को अपनाकर, प्रभावी ढंग से व्यवहार में लाया जा सकता है। इस बात पर हमारा विशेष ध्यान था कि कैसे हर एक बच्चे को विद्यालय की गतिविधियों में शामिल किया जाए। हमें लगा कि यह तरीक़ा अधिक प्रभावी होगा बनिस्बत चुनावी पद्धति के, जिसमें वोट डालने और प्रतिनिधियों को चुनने की ज़िम्मेदारी के बाद, बाक़ी विद्यार्थी लगभग निष्क्रिय हो जाते हैं।

लोकतंत्र जीवन जीने का एक तरीक़ा है और मानव-स्वभाव में, मानव में और दूसरों के साथ कार्य करने में विश्वास पर बनाया गया अनुभव है। यह एक नैतिक आदर्श है जिसे बनाने के

लिए लोगों द्वारा प्रयास की आवश्यकता है। यह एक संस्थागत अवधारणा नहीं है जो हमसे अलग मौजूद हो। लोकतंत्र का कार्य हमेशा एक स्वतंत्र और बेहतर मानवीय अनुभव का निर्माण होता है जिसे सभी साझा करते हैं और जिसमें सभी योगदान देते हैं। (जॉन डिवी, रचनात्मक लोकतंत्र)

ऐसा करने के लिए, हमने ऐसी समितियों के गठन का फैसला किया, जिसमें विद्यालय के प्रत्येक सदस्य का प्रतिनिधित्व हो। इसमें विद्यालय संचालन के सभी क्षेत्रों को शामिल किया गया। उस वक़्त, यानि की लगभग छह साल पहले हमने एक अच्छा काम यह किया कि प्रत्येक समिति में सभी कक्षाओं के प्रतिनिधि शामिल थे, ताकि हर एक बच्चा और शिक्षक किसी-न-किसी समिति का हिस्सा ज़रूर हो। विद्यालय प्रक्रियाओं के प्रभावी कामकाज में सदस्यों की भूमिका, ज़िम्मेदारियों पर चर्चा करने और समझ बनाने के लिए हर हफ़्ते समितियों की बैठक होती, साथ ही इन बैठकों में नियम बनाए जाते, जिनका पालन सभी को करना होता था। शिक्षक समितियों का हिस्सा तो थे लेकिन उनका संचालन नहीं करते, केवल बैठकों के दौरान चर्चा का मार्गदर्शन करते, समिति के सदस्यों के बीच ज़िम्मेदारियाँ सौंपते और विद्यालय असेम्बली में समिति द्वारा लिए निर्णय और कार्य-प्रगति के बारे में सूचना देते।

समितियों के निर्माण व उसे कार्यशील बनाने हेतु बच्चों को लोकतांत्रिक प्रणाली में ढालने के लिए ज़रूरी प्रयासों को देखते हुए, इस विचार को लागू करना शुरूआत में हमें चुनौतीपूर्ण लगा था। हमने लॉटरी का तरीक़ा अपनाया ताकि प्रक्रियाओं को पारदर्शी बनाया जा सके और यह भी सुनिश्चित किया जा सके कि हर एक व्यक्ति को सभी क्षेत्रों में काम करने का अनुभव प्राप्त हो। समूहों का गठन दस कार्यों के अनुसार किया गया था। समूह हेतु समिति चुनने के लिए लॉटरी प्रणाली का उपयोग किया गया। विद्यालय की मासिक बैठकों में, समूहों के बीच कार्यों को आपस में बदल दिया जाता था। इससे वर्ष के अन्त तक, हर व्यक्ति को सभी दस समितियों में काम करने का अवसर मिला। एक समिति के अन्तर्गत, एक विशेष ज़िम्मेदारी के साथ छोटे समूहों में साथ बैठना और फिर उस समिति को सुचारू रूप से चलाने पर काम करना, बच्चों और शिक्षकों के लिए बहुत रोमांचक था।

विद्यालय के विभिन्न क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए समितियों का गठन किया गया था। इन क्षेत्रों को चुनने का उद्देश्य था, नए विचारों व सभी बच्चों की भागीदारी (हर कक्षा से) से इन क्षेत्रों में कार्यकुशलता लाना और इन कामों को डिज़ाइन करते हुए बच्चों को अधिक ज़िम्मेदार बनाना। दस समितियाँ और उनके कार्य निम्नलिखित हैं –

1. सभा समिति : विद्यालय में दैनिक सभाओं के लिए ज़िम्मेदार- सुबह की सभा, कक्षा की सभा, शिक्षकों की सभा, शाम की सभा।
2. भोजन समिति : बच्चों के लिए मिड-डे-मील (MDM) और अण्डे /दूध के लिए ज़िम्मेदार।
3. पुस्तकालय समिति : विद्यालय और कक्षा-पुस्तकालयों का प्रबन्धन।
4. विद्यालय उद्यान समिति : पेड़ों का रोपण और किचन-गार्डन का रख-रखाव।
5. खेल समिति : खेल-कूद के लिए ज़िम्मेदार।
6. स्वास्थ्य और सफ़ाई समिति : कक्षाओं, वॉशरूम, परिसर के अन्य क्षेत्रों की सफ़ाई और व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए ज़िम्मेदार।
7. कार्यक्रम और उत्सव समिति : राष्ट्रीय त्यौहारों, विद्यालय के कार्यक्रमों जैसे *बाल-शोध मेला*, विषय-सप्ताह इत्यादि का प्रबन्धन।
8. सुरक्षा समिति : बच्चों की शारीरिक सुरक्षा के लिए ज़िम्मेदार, उदाहरण के लिए, गलियारे में चलते समय।
9. विद्यालय नियम समिति : विद्यालय और कक्षाओं में नियमों को बनाने और उनके क्रियान्वयन पर निगरानी रखने के लिए ज़िम्मेदार।
10. विद्यालय पर्यावरण समिति : कक्षा और बाहर के सुन्दरीकरण व सफ़ाई के लिए ज़िम्मेदार।

पिछले साल, दो समितियों - संख्या 9 और 10 को विलय करने का निर्णय लिया गया क्योंकि उनके काम लगभग समान थे। इसलिए, वर्तमान में केवल नौ कार्य-समितियाँ हैं।

हम कैसे लाभान्वित हुए

विद्यालय संचालन सुचारू हो गया। उदाहरण के लिए, परिसर को साफ़ रखने और सफ़ाई बनाए रखने के लिए, समिति के सदस्य, जो सभी कक्षाओं से थे, अपनी कक्षा में दूसरों को सफ़ाई बनाए रखने के लिए कहने लगे, उदाहरण के लिए - पेंसिल छीलते हुए डस्टबिन का उपयोग करने को कहना।

भोजन समिति के सदस्यों ने खाने के समय बैठने की व्यवस्था देखना शुरू कियाI वे भोजन बर्बाद करने वाले बच्चों पर निगरानी रखते, उनसे चर्चा करते व उन्हें सब्ज़ियाँ खाने के लिए प्रेरित करते। यह देखना दिलचस्प था कि छोटी कक्षाओं के बच्चे भी उच्च प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों व शिक्षकों पर निगरानी रखते कि वे सब्ज़ियाँ बर्बाद न करें। व्यंजन-सूची,

भोजन में इस्तेमाल सामग्री की मात्रा, विद्यार्थियों और स्टाफ़ की उपस्थिति और उस दिन बर्बाद हुए खाद्य पदार्थ को प्रदर्शित करने के अभ्यास ने जागरूकता पैदा की।

प्रतियोगिताओं और समारोहों से पहले चर्चा करना कि उन्हें सार्थक रूप से कैसे मनाया जा सकता है, दैनिक सभाओं की गतिविधियों में विविधता लाने पर चर्चा और सुरक्षा से सम्बन्धित प्रक्रियाओं पर चर्चा और उन पर निर्णय लेना, यह सभी बहुत उपयोगी थे। विद्यालय की नियम समिति द्वारा विद्यालय में सभी मौजूदा चुनौतियों और समाधानों पर चर्चा के लिए मासिक बैठक आयोजित की जाती थी जो *महासभा* कहलाती। इन बैठकों में बच्चों के व्यवहार के बारे में शिकायतों के साथ-साथ, बच्चों द्वारा कुछ दिलचस्प चर्चाएँ और माँगें भी सामने आती थीं। उदाहरण के लिए, गुरुवार को परोसा जाने वाला *बीसी बेले भात*, जो किसी भी बच्चे को पसन्द नहीं था, उसे व्यंजन-सूची से हटाने की माँग; या फिर यह पूछना कि सैंडल के बजाय जूते क्यों नहीं दिए जाते हैं; या बच्चों को हिन्दी केवल कक्षा छह से ही क्यों सिखाई जाती है, शुरुआती कक्षा में क्यों नहीं; और सप्ताह में पुस्तकालय और खेल की ज़्यादा कक्षाओं की भी एक माँग आई।

हमें बच्चों में सहयोग, समन्वय, स्वामित्व, ज़िम्मेदारी, भागीदारी और प्रतिबद्धता आदि से सम्बन्धित सकारात्मक बदलाव दिखने लगे, और देश के एक ज़िम्मेदार नागरिक से यही सब गुण अपेक्षित हैं। हाल ही में हमारे विद्यालय में गणतंत्र दिवस समारोह के दौरान एक विद्यार्थी का भाषण सुनकर मुझे बड़ी ख़ुशी हुई, वह हमारे विद्यालय में नियमों की स्थापना और समितियों के कामकाज की तुलना भारतीय संविधान से कर रहा था। यह दर्शाता है कि हमारे प्रयास सही दिशा में हैं।

अनिल एस अंगडिकि, 2012 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ हैं। वे अज़ीम प्रेमजी स्कूल, यादगीर,कर्नाटक में काम करते हैं। उनसे anil.angadiki@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : सात्विका ओहरी

नागरिकता की शिक्षा कम समय में नहीं दी जा सकती। इसे समय के साथ लगातार और बार-बार करना पड़ता है। अलग-अलग समूहों में अलग-अलग विचार/अवधारणाएँ कारगर होती हैं। कौन-सा तरीक़ा सफल होगा, कौन-सा नहीं, इसका कोई पैटर्न नहीं है।

- उमाशंकर पेरिओडी, रचनात्मक कार्यशालाओं के माध्यम से नागरिकता, पेज 113

विद्यालय में नागरिक | अभ्यास और चिन्तन

अनिल औष और संजय डेनियल

आधुनिक भारत के निर्माताओं जैसे, बाबा साहेब अम्बेडकर और रवींद्रनाथ टैगोर का दृढ़ मत था कि भारत तब तक एक राष्ट्र नहीं बन सकता जब तक कि इसे ऐसा बनाया नहीं जाता। दूसरे शब्दों में, वे मानते थे कि भारत एक बनता हुआ राष्ट्र है। इस अर्थ में, राष्ट्र केवल भौगोलिक सीमाओं, सेनाओं या निर्वाचित प्रतिनिधियों से नहीं, बल्कि नागरिकों से बने होते हैं : वे नागरिक जो अच्छे होते हैं और समीक्षात्मक विचारों के होते हैं, जो किसी देश में केवल पैदा नहीं होते, बल्कि बनाए जाते हैं।

कुछ संस्थाएँ जैसे परिवार, धर्म, स्कूल, समवयस्क समूह, राजनीतिक संगठन, मीडिया आदि हमारे दैनिक जीवन को प्रभावित करते हैं। हम अक्सर नागरिकता की अवधारणा को बड़े राजनीतिक विचारों, जैसे राष्ट्रवाद, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार और चुनावों के साथ जोड़कर देखते हैं, लेकिन हम अपने परिवारों और स्कूलों के ज़िम्मेदार सदस्य बनने के बारे में भूल जाते हैं। यह लेख इस बात पर प्रकाश डालता है कि विद्यालयों की कुछ प्रक्रियाएँ कैसे एक अच्छे नागरिक के गुणों को पोषित करती हैं।

बच्चे एक विकासशील नागरिक के रूप में

बल्लारी ज़िले के सरकारी विद्यालय में एक विद्यालय-संसद बनाने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। इसमें प्रत्येक बच्चे को एक भूमिका दी जाती है ताकि वे सब, विद्यालय से सम्बन्धित मामलों पर चर्चा, बहस करने के साथ उन मामलों का निपटारा कर सकें। विद्यालयों ने अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ *आरोग्य सुरक्षा अभियान* नामक एक परियोजना पर काम किया, जिसके परिणामस्वरूप ग्राम पंचायत पुस्तकालयों के साथ मिल कर काम करने के अवसर पैदा हुए। *ओधुवा बेलाकू*, ग्रामीण विकास विभाग और पंचायतों का एक संयुक्त कार्यक्रम है। इसके अन्तर्गत ग्रामीण कर्नाटक के सार्वजनिक पुस्तकालयों में पढ़ने और सीखने के लिए सरकारी स्कूलों के बच्चों को जोड़ा गया। इससे हमें संविधान से जुड़ी सामग्री वाली किताबों को पंचायत के साथ साझा करने का मौक़ा मिला। इसके फलस्वरूप हममें से कई शिक्षक, इस अनोखे मौक़े का फ़ायदा उठाते हुए, विद्यार्थियों में नागरिकता के मूल्यों का विकास करने के लिए नई शिक्षण प्रक्रियाओं को निर्मित करने के लिए प्रोत्साहित हुए।

होसुर उच्च प्राथमिक विद्यालय, होस्पेट, के मंजप्पा नाम के शिक्षक ने एक विद्यालय-पंचायत के गठन का कार्यक्रम शुरू किया। उन्होंने विनोबा भावे क्लस्टर के विभिन्न स्कूलों के बच्चों की एक टीम बनाई और उन्हें अपने इलाके की समस्याओं, जैसे खुले नाले, रिसते हुए नल, सार्वजनिक स्थानों पर फेंके गए कचरे आदि का अवलोकन करने के लिए कहा। बच्चों ने समुदाय से यह जानकारी इकट्ठा की जिसके परिणामस्वरूप बच्चों, शिक्षकों और *पंचायत* अधिकारियों के बीच चर्चाएँ हुई। उनकी चर्चाओं ने, न केवल बच्चों को स्थानीय शासन की समझ दी बल्कि उनके परिवेश के मुद्दों की भी समझ बनाई। हर बच्चे की बात सम्मान और गरिमा के साथ सुनी गई। अधिकारियों की मदद से बच्चों ने संगठित होकर विद्यालय परिसर की सफ़ाई और रिसते हुए नलों की मरम्मत कराकर, गाँवों की समस्याओं का समाधान किया।

बच्चे एक चिन्तनशील पेशेवर (रिफ्लेक्टिव प्रैक्टिशनर) के रूप में

अम्बेडकर निम्न प्राइमरी स्कूल, कोट्टूर, कुडलिगी ब्लॉक के शिक्षक शिवकुमार और अक्कमहादेवी ने एक छोटा-सा नाटक तैयार किया। इसमें बच्चों को एक रेलवे स्टेशन और पोस्ट ऑफिस के कर्मचारियों और एक सरकारी अस्पताल के डॉक्टरों के रूप में दिखाया गया। नाटक करते समय, बच्चों ने अस्पताल में स्वच्छता और साफ़-सफ़ाई के पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया। उनके अभिनय में उनका यह दृढ़ विश्वास झलक रहा था कि एक अस्पताल को लोगों की मदद करनी चाहिए।

शिक्षक इन बच्चों को स्थानीय अस्पताल और रेलवे स्टेशन ले गए और बच्चे यह देखकर चौंक गए कि वह जगहें, उतनी साफ़ नहीं थीं जितनी कि कक्षा में उन्होंने कल्पना की थी। शिक्षकों ने उन्हें ध्यानपूर्वक अवलोकन करने और इस बात पर विचार करने को कहा कि क्यों इन स्थानों को साफ़ नहीं रखा गया है। विद्यालय वापस लौटने के बाद बच्चों का जवाब था कि लोगों में इन जगहों के प्रति स्वामित्व की भावना नहीं है, उन्हें यह नहीं लगता कि अस्पताल और स्टेशन उनके अपने हैं।

इससे शिवकुमार और अक्कमहादेवी को बच्चों में विद्यालय को अपना मानने की सोच पर पहल करने में मदद मिली। यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यह बात समझ आने के बाद बच्चों ने अपने विद्यालय परिसर को साफ़ रखना शुरू कर दिया।

और वयस्कों से भी कहा कि वह उनके विद्यालय परिसर में कचरा डालना बन्द करें। स्वामित्व की इस भावना ने उन्हें अपने स्कूलों का वास्तविक 'नागरिक' बना दिया।

कार्यक्षेत्र में प्रभावी होना

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन द्वारा आयोजित सामाजिक विज्ञान कार्यशाला में भाग लेने के कारण, हम 'नागरिकता' की अवधारणा पर चर्चा कर पाए। नागरिकता विषय पर स्वैच्छिक शिक्षक मंच (VTF) का आयोजन किया गया। बेवूर उच्च प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक रवीन्द्र बी ने कक्षा में 'चर्चा' को अपने शिक्षणशास्त्र के रूप में चुना। छठी और सातवीं कक्षा में, नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तक से सार्वजनिक सम्पत्ति का पाठ पढ़ाते हुए उन्होंने बच्चों से कुछ सवाल पूछे, जैसे - जनता में कौन-कौन शामिल होते हैं? सार्वजनिक सम्पत्ति क्या है? करदाता कौन हैं? बच्चों ने सवालों पर चर्चा करते हुए कहा कि सभी लोग जनता हैं और जब सभी कर का भुगतान करते हैं तो सम्पत्ति भी अपने आप हर किसी की हो जाती है।

अगले दिन बच्चे शिक्षक के साथ अपने विद्यालय के क़रीब, गाँव के सार्वजनिक बस स्टैंड पर गए और उसकी सफ़ाई की। उन्होंने उपस्थित लोगों से अनुरोध किया कि चूँकि यह जनता की जगह है इसलिए इसे स्वच्छ रखें। गाँव में बेवूर उच्च प्राथमिक विद्यालय के परिसर को अपने मवेशी चराने की ज़मीन के रूप में इस्तेमाल करना आम था जिसके कारण विद्यालय परिसर के अन्दर उगने वाले पेड़-पौधे नष्ट हो जाया करते थे। पर इन सीखों के मिलने के बाद विद्यालय का समय पूरा होने के बाद भी बच्चों ने रुक कर, शिक्षक की मदद से पेड़ों की बाड़ लगाई और विद्यालय की सम्पत्ति को सुरक्षित करने के लिए फाटकों पर ताले लगा दिए। इसके बाद गाँव वालों ने विद्यालय परिसर में अपने मवेशी लाना बन्द कर दिए। *ओडुवा बेलाकू* कार्यक्रम के तहत इन्हीं शिक्षक ने *मक्कला ग्राम सभा* (बाल ग्राम सभा) में बच्चों के साथ-साथ अभिभावकों को तैयार किया। माता-पिता को बाल-अधिकारों और परिवार में लिए गए निर्णयों में बच्चों से परामर्श के महत्त्व के बारे में समझाया। उन्होंने अभिभावकों से कहा कि वे अपने बच्चों के अनुभवों को सुनें। सभा में मौजूद अभिभावकों ने पूरे मन से सहमति जताई और इस बात पर भी सहमति जताई कि वे अपने बच्चों को बैंक, पुलिस स्टेशन और ग्राम पंचायत जैसे सार्वजनिक संस्थानों में ले जाएँगे।

निष्कर्ष

बच्चों को विचारपूर्ण ढंग से अपने अधिकारों और कर्तव्यों का प्रयोग करने में सक्षम बनाना हर शिक्षण संस्थान का व्यापक उद्देश्य होना चाहिए। हमारा मानना है कि हमारे संविधान द्वारा अधिस्थापित मूल्यों को विकसित करने के लिए, हर विद्यालय को इस तरह की गतिविधियाँ बनानी चाहिए। इससे अच्छे नागरिक बनाने की प्रक्रिया में मदद मिलेगी और एक आधुनिक, लोकतांत्रिक देश के संस्थापकों के सपने हक़ीक़त बन सकेंगे। जैसा कि परिचय में उल्लेख किया गया है, राष्ट्र अपने आप नहीं बनते उनका निर्माण करना पड़ता है और इसी तरह अच्छे नागरिक भी निर्मित करने पड़ते हैं। उन्हें जानकारी से लैस कर सशक्त बनाना और एक आधुनिक, समानुभूतिपूर्ण और उदार नागरिक बनने से जुड़े विभिन्न आयामों के बारे में शिक्षित करना, एक सरकारी विद्यालय के सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों में से एक होना चाहिए।

अनिल औष पिछले चार साल से बल्लारी ज़िले के कुडलिगी ब्लॉक में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में एसोसिएट हैं। उन्होंने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से एमए (विकास) की उपाधि प्राप्त की है। उन्हें पढ़ना, खाना बनाना और फ़िल्में देखना पसन्द है। उनसे anil.ausha@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

संजय डेनियल ने पुरातत्व में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की है। वह 2016 में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में एसोसिएट के रूप में जुड़े। उनसे sanjaydaniel1993@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

गतिविधियों के माध्यम से संवैधानिक मूल्यों को सीखना

अंकित शुक्ला

एक लोकतंत्र में, किसी नागरिक का सबसे कठिन और चुनौतीपूर्ण काम होता है नागरिकता। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक नागरिक पर सरकार का चयन करने की ज़िम्मेदारी होती है और इस अधिकार का प्रयोग करने के लिए व्यक्ति में निर्णय-क्षमता का होना ज़रूरी है। शिक्षा, इस क्षमता को विकसित करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके द्वारा हमें स्पष्ट रूप से सोचने और नए विचारों को समझने की क्षमता का विकास करने में मदद मिलती है।

एक आदर्श और विवेकशील सार्वजनिक संवाद के लिए सभी नागरिकों के हितों, सभी के पास प्रासंगिक जानकारी की उपलब्धता और सुविकसित समीक्षात्मक चिन्तन-क्षमता का होना ज़रूरी है। शिक्षा का उद्देश्य है नागरिकों में इस समालोचनात्मक चिन्तन की क्षमता को विकसित करना जहाँ प्रत्येक नागरिक विवेक के आधार पर अपने निर्णय ले सके, बौद्धिक अखण्डता को समझ सके और साथ ही पक्षपात और कट्टरपन्थ को अस्वीकार कर, झूठ से सच्चाई, प्रचार से तथ्य, को अलग कर सके। एक शिक्षित मस्तिष्क वैज्ञानिक स्वभाव का होता है जो तथ्य आधारित परिणामों पर विश्वास रखता है। उसके पास नए विचारों को ग्रहण करने और उन्हें समझने की क्षमता होती है।

गतिविधि 1 : स्थिति-विश्लेषण और सभी की भलाई

एक स्कूल में मुझे आमंत्रित किया गया था। लोकतंत्र और नागरिकता की मेरी समझ के आधार पर मैंने वहाँ एक गतिविधि की। शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ चर्चा करने के बाद, संवैधानिक मूल्यों पर भाषण देने के बजाय, मैंने बुनियादी बातों को समझने में मदद करने के लिए विद्यार्थियों के सामने एक गतिविधि प्रस्तावित की। मैंने उन्हें कुछ प्रश्न दिए, जिनमें से दो पर यहाँ चर्चा की गई है। विद्यार्थियों को प्रश्नों का विश्लेषण कर उनका जवाब देना था।

स्थिति 1 : मान लीजिए कि आस-पास के पाँच गाँवों के तीन सौ किसान परिवारों को पानी उपलब्ध कराने के लिए एक जगह सार्वजनिक ट्यूबवेल है। आप पानी के नियोजन और वितरण के लिए क्या इन्तज़ाम करेंगे ताकि सभी किसान परिवारों को सिंचाई का लाभ मिल सके?

स्थिति 2 : आप अपने गाँव का सरपंच किसको चुनेंगे?

विद्यार्थियों ने अपने-अपने समूहों में इन सवालों पर काम किया और अपने उत्तर को बड़े समूह के सामने प्रस्तुत किया। एक समूह द्वारा उपरोक्त स्थितियों पर साझा किए गए विचार इस प्रकार थे :

उत्तर 1 : हम कुओं, झीलों और जल-भण्डारण के अन्य साधनों की खुदाई करेंगे और पानी के भण्डारण के लिए ट्यूबवेल का उपयोग करेंगे। चाहे अमीर हो या ग़रीब, एक संसाधन के रूप में पानी को सभी के बीच ठीक से वितरित किया जाएगा।

उत्तर 2 : सरपंच के लिए मतदान : गाँव में लोगों द्वारा किए गए काम या गाँव के लिए ज़रूरी कामों को करने के वादों के आधार पर वह सरपंच का चयन करेंगे।

गतिविधि 2 : सभी का कल्याण

लोकतंत्र, लोकहित के विचार पर आधारित है, अर्थात सभी नागरिकों के सामान्य हितों को सुनिश्चित किया जाना चाहिए। यह वैचारिक स्तर पर सम्भव है कि जब भी कोई निर्णय लिया जाए तब लोगों के सामान्य हितों को ज़रूर सुनिश्चित किया जाए। लेकिन यह व्यवहार में तब्दील हो इसे सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक नागरिक को अपने अधिकारों और कर्तव्यों की समझ होनी चाहिए। हमें कम उम्र में ही बच्चों में नागरिकता के बीज बोने की कोशिश करनी चाहिए। मुझे इसका एहसास बच्चों के साथ *हैरी पॉटर* और *पारस का पत्थर* फ़िल्म देखने के बाद उनसे हुई बातचीत के ज़रिए हुआ। फ़िल्म देखने के बाद मैंने उनसे एक साधारण-सा सवाल पूछा। 'अगर आपको हैरी पॉटर की तरह शक्तियाँ मिलती हैं तो आप क्या करेंगे?'

बच्चों के जवाब अलग-अलग थे। शुरुआत में ज़्यादातर जवाब थे कि वे खूब सारे पैसे इकट्ठा कर अमीर बनेंगे। उनकी आर्थिक परिस्थितियों को देखते हुए यह बात स्वाभाविक लगती है। हम हमेशा उन चीज़ों के बारे में सोचते हैं जो हमारे पास नहीं है और ज़्यादा पैसे पाने की इच्छा उनके लिए एक स्वाभाविक चुनाव है क्योंकि उनका सोचना है कि धन उनके दैनिक जीवन की ज़्यादातर परेशानियों को दूर कर सकता है। लेकिन थोड़ी और बात करने पर हमने पाया कि वे केवल अपने लिए नहीं बल्कि अपने गाँव व आस-पास के लोगों के कल्याण के लिए धन चाहते हैं। यह बात मेरे मन को छू गई।

यहाँ उनकी कुछ प्रतिक्रियाएँ दी गई हैं :

- गाँव की सफ़ाई
- सभी को पानी उपलब्ध कराना
- एक महल बनाना
- पैसे कमा के सरकार को देना जो इन पैसों को फिर ग़रीबों को देगी
- एक जादुई बस बनाना जिससे लोग मुफ़्त में यात्रा कर सकें

विद्यार्थियों में सहयोग की भावना का विकास और इसे व्यवहार में तब्दील करने के मौक़े विद्यालय में बनाए जाने चाहिए। लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास रातों-रात नहीं हो सकता। इसके लिए शिक्षकों द्वारा निरन्तर प्रयास और कड़ी मेहनत की ज़रूरत है। हमें हमारे बच्चों के दिलो-दिमाग़ में सामाजिक न्याय के प्रति जुनून एवं सामाजिक बुराइयों और शोषण के प्रति संवेदनशीलता की ज्योत जलानी चाहिए और इस बदलाव की बुनियाद विद्यालय में ही रखी जानी चाहिए।

References

Deliberative Democracy and Education by Rohit Dhankar

Aims of Secondary Education (Secondary Commission Education 1952-53 Report)

अंकित शुक्ला 2017 में फेलो के रूप में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़े। उन्होंने एमबीए एवं बीटेक किया है। वर्तमान में वे रायगढ़ ब्लॉक (छत्तीसगढ़) में कार्यरत हैं और गणित विषय से जुड़े हुए हैं। इससे पहले, उन्होंने भटिंडा में कार्यक्रम प्रबन्धक और भारत के तीन राज्यों में जागरण पहल के जिला परियोजना समन्वयक के रूप में काम किया है। उनसे ankit.shukla@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

बच्चों को अपने बिल्कुल नज़दीक के दायरे की स्थितियों से निपटने के दौरान कुछ विकल्पों का चुनाव करना होता है। उन्हें सबसे अधिक प्रभावित करने वाले उनके बिल्कुल निकट के दायरे में उनका ध्यान रखने वाले लोग, उनके प्रति उदासीन रहने वाले और उनके साथ हेर-फेर करने वाले या उनका फ़ायदा उठाने वाले लोग भी हो सकते हैं। एक बच्चे को इनके बीच अन्तर करना और प्रत्येक को उचित प्रतिक्रिया देना सीखना होता है।

- हृदय कान्त दीवान, नागरिकता के आदर्श, पेज 11

कक्षा में संविधान की प्रस्तावना

अस्मिता तिवारी

भारतीय संविधान हम सभी के लिए जीवन की एक रूपरेखा के रूप में मौजूद है और हम सभी नागरिकों को, चाहे वह युवा हो या बुज़ुर्ग, इसका इस्तेमाल करना चाहिए। इसके कुछ शुरुआती शब्द – *हम, भारत के लोग* – नागरिकता के नज़रिए से गहरे मायने रखते हैं। यह हम नागरिकों को सुनिश्चित करना है कि हम अपना दैनिक जीवन अपने संविधान के आदर्शों के अनुसार जिएँ। प्रस्तावना, संविधान का सार है और इस कारण वह आगे का मार्ग प्रशस्त करती है। हम सभी भारतीयों के लिए यह विज़न स्टेटमेंट या लक्ष्यों का एक विवरण है।

यह एक पन्ने का वाक्य, जीवन के मूल मानवीय मूल्यों पर आधारित है जो सभी भारतीयों को एक सूत्र में बाँधता है। यह मूल्य हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा हैं और हमारे अनुभव इन्हीं मूल्यों के आधार पर बनते हैं। पर हममें से कितनों ने पाठ्यपुस्तकों के पहले पन्ने पर छपी *प्रस्तावना* को पढ़ा है?

हमें प्रस्तावना में जान फूँकने और युवा नागरिकों यानी हमारे विद्यार्थियों के दिन-प्रतिदिन के अनुभवों से इसे जोड़ने की कोशिश करनी चाहिए। *वी, द पीपल अभियान* संस्था में हमारा उद्देश्य है हर नागरिक को उनकी भूमिका समझने और शक्ति एवं ज़िम्मेदारी के साथ कार्य करने में सक्षम बनाना। हमारा मानना

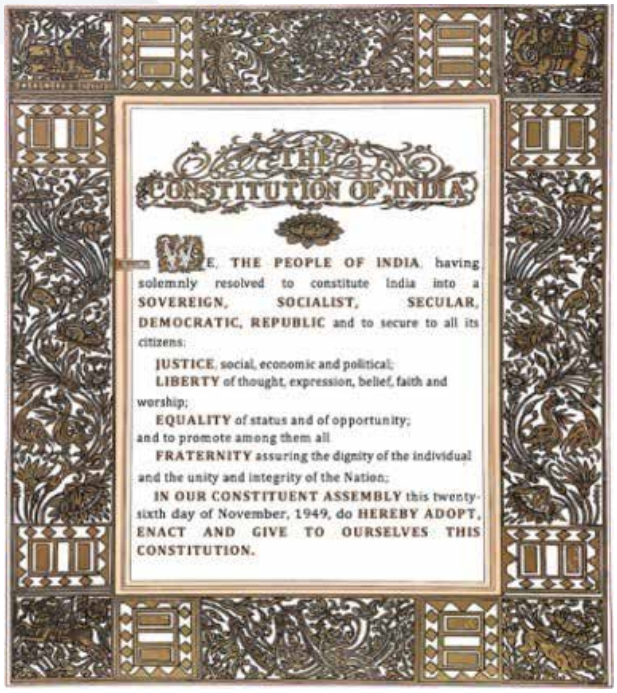

है कि किसी का प्रभाव-क्षेत्र (sphere of influence) चाहे बड़ा हो या छोटा, महत्त्वपूर्ण यह है कि नागरिक अपने प्रभाव-क्षेत्र के भीतर कुछ ठोस कदम उठाएँ जो कि भारत के संविधान की प्रस्तावना में प्रतिष्ठापित न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के मानवीय मूल्यों पर आधारित हों।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद की कक्षा IX की सामाजिक और राजनीतिक जीवन (एसपीएल) पाठ्यपुस्तक में प्रस्तावना के बारे में विस्तार से बात की गई है। पिछले कुछ वर्षों में, भारत के विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ किए कार्य ने हमें उनके साथ मिलकर, प्रस्तावना को और बेहतर समझने में सक्षम बनाया। इसके साथ ही हमें इस एक पन्ने के दस्तावेज़ को नागरिकों के दृष्टिकोण से देखने और इन मूल्यों को हमारे दैनिक जीवन से जोड़ने का एक नया नज़रिया दिया है।

कार्यप्रणाली और दृष्टिकोण

2019 में शिक्षा निदेशालय, नई दिल्ली के सहयोग से *कोंस्टिट्यूशन ऐट 70* (Constitution at 70) नामक तीन महीने के एक अभियान का आयोजन किया गया। यह दिल्ली के सभी 1,200 सरकारी स्कूलों के शिक्षकों, और छठी से नौवीं और ग्यारहवीं कक्षा के एक लाख से अधिक विद्यार्थियों के साथ जुड़ने का अवसर था। अभियान का उद्देश्य, प्रस्तावना के बारे में जागरूकता फैलाना और चेतना विकसित करना था ताकि विद्यार्थी स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के मानवीय मूल्यों को अपने दैनिक जीवन से जोड़ सकें।

इसकी ज़रूरत, आठवीं से दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों की इस धारणा से उत्पन्न हुई कि एसपीएल पाठ्यक्रम न केवल 'उबाऊ' है, बल्कि 'अप्रासंगिक' और 'अव्यावहारिक' भी है। इन प्रतिक्रियाओं ने शिक्षण-अधिगम सामग्री को विद्यार्थियों के जीवन के अनुभवों से जोड़ने की ज़रूरत की ओर इशारा किया। जीवन-अनुभव व्यक्ति के विकास में एक प्रमुख भूमिका निभाने के साथ ही सीखने के स्रोत के साथ एक सहज सम्बन्ध बनाने में मदद करते हैं। अपने कार्यों पर चिन्तन से मिली सीख, सीखने के अनुभवों को और समृद्ध करती है। इस अभियान के तहत युवा नागरिकों के लिए ऐसे अनुभव तैयार किए गए जिससे वे अपने प्रभाव-क्षेत्र में शामिल मित्रों, परिवार और आस-पड़ोस के लोगों से जुड़ सकें। इसका उद्देश्य

यह था कि वे अपने रोज़मर्रा के जीवन में संवैधानिक मूल्यों को स्वीकार और आत्मसात कर सशक्त नागरिक बन सकें।

इस योजना के आधार पर शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए मासिक शिक्षण-अधिगम सामग्री विकसित की गई। इसमें शिक्षकों के लिए पाठ्य और ऑडियो सामग्री और विद्यार्थियों के लिए पाठ्य-सामग्री शामिल थी। हर महीने के अन्त में, स्कूल, *संविधान-मेलों* का आयोजन करते, जिसमें सहयोगात्मक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए नुक्कड़ नाटक, पैनल में चर्चा, जेंडर और वर्ग-भेद जैसे विषयों पर बहस जैसी विभिन्न गतिविधियाँ आयोजित की जाती थीं। रुचिकर, अनुभवात्मक, चिन्तनशील, विचारोत्तेजक द्विभाषी सामग्री बनाई गई। संवैधानिक मूल्यों पर व्यापक जागरूकता फैलाने के लिए सामग्री को छोटे सत्रों में बाँटा गया था।

शिक्षकों को हर महीने, एक संवैधानिक मूल्य से सम्बन्धित सामग्री दी जाती थी। ऑडियो सामग्री में पॉडकास्ट शामिल थे जिनमें दैनिक अनुभवों के सन्दर्भ में प्रत्येक मूल्य की व्याख्या की गई थी। पाठ्य सामग्री में पाठ-योजनाएँ और टीचर कम्पैन्यन शीट्स (टीसीएस) शामिल थीं। टीसीएस में एक मूल्य पर गहरी समझ के लिए अवधारणा मानचित्र (कॉन्सेप्ट मैप) व कक्षा में गतिविधियों को क्रियान्वित करने के लिए दिशा-निर्देश शामिल थे।

वैल्यू-डायरी और खेल-पुस्तिकाएँ

वैल्यू-डायरियों में आत्म-अन्वेषण के लिए सर्वेक्षण-प्रश्न शामिल थे। आत्म-चिन्तन के लिए दिए गए प्रश्नों ने, विद्यार्थियों को अपने आस-पास के अनुभवों और आपस में की गई बातचीत के आधार पर संवैधानिक मूल्यों की समझ बनाने की प्रक्रिया में मदद की। विद्यार्थियों ने अपने नज़दीकी लोगों में से एक सदस्य का चयन किया जिन्हें वे इन मूल्यों के उदाहरण के रूप में देखते थे।

वैल्यू-डायरियों को *खेल-पुस्तिकाओं* द्वारा पूरित किया गया था। यह क्रिया-उन्मुख थीं और इनमें आवश्यक मूल्यों को जीवन्त करने के लिए गतिविधियाँ शामिल थीं। इसने विद्यार्थियों को आत्म-अन्वेषण की ओर प्रेरित किया और करके सीखने पर आधारित अनुभवात्मक शिक्षण में मदद की। प्रत्येक मूल्य की प्रासंगिकता को अनुभव करने व उसे समझने के लिए विद्यार्थी हर महीने चार गतिविधियों का चयन कर सकते थे।

एरिक एरिकसन (Erik Erikson) के मनोवैज्ञानिक विकास के सिद्धान्त के अनुसार, किशोर अवस्था के दौरान, पहचान की भावना विकसित होती है क्योंकि किशोर ख़ुद को एक सामाजिक और सांस्कृतिक समूह के साथ जोड़ना शुरू कर देते हैं। एरिकसन ने इसे एक संकट कहा है, जिसका अर्थ प्रतिकूलता नहीं है : यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का क्षण है। यह परिवर्तन व्यक्ति के अपने सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण से सम्पर्क पर निर्भर करता है। शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास के ऐसे चरण में, समानता, स्वतंत्रता और बन्धुत्व के मूल्यों से परिचय, एक व्यक्ति के विकास में मदद करता है।

इस अभियान के दौरान विद्यार्थियों के साथ कई बार की गई बातचीत में, मूल्यों के साथ उनके अविश्वसनीय अनुभवों के बारे में पता चला। मैंने इन प्रसंगों को तीन विषयों में बाँटा है :

- स्वतंत्रता की ताक़त
- अपने द्वारा किए गए न्यायोचित कार्य का बोध
- अपने द्वारा किए गए अन्याय का बोध

यह, विद्यार्थियों को प्रस्तावना पढ़ाने के ज़बरदस्त प्रभावों को दर्शाते हैं और मूल्यों के साथ उनके अनुभवों को सामने लाते हैं साथ ही मूल्यों को उनके दैनिक जीवन से भी जोड़ते है। कुछ प्रतिक्रियाएँ इस प्रकार थीं :

स्वतंत्रता की ताक़त

- वोट देने और अपनी सरकार चुनने की ताकत, स्वतंत्रता के मूल्य का फल है। मैंने चुनने की स्वतंत्रता के बारे में सीखा है।
- मेरे माता-पिता ने मुझे अपनी पसन्द का विषय चुनने की स्वतंत्रता दी। किसी विषय-विशेष के चयन के लिए बाध्य करने से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है शिक्षा।
- हाल ही में, मैं और मेरे दोस्त मेरा जन्मदिन मनाने एक रेस्तरां गए थे। वह थोड़ा महँगा ज़रूर था लेकिन हमें ऐसा नहीं लगा कि वह जगह हमारे लिए नहीं है। किसी ने भी हमसे यह नहीं पूछा कि हम वहाँ क्यों आए हैं। हमें वहाँ समय बिताना और मेरा जन्मदिन मनाना अच्छा लगा।

अपने द्वारा किए गए न्यायोचित कार्य का बोध

- मैने कभी किसी की पसन्द या स्वतंत्रता को बाधित नहीं किया क्योंकि हमारा कोई अधिकार नहीं है कि हम दूसरों को रोक-टोक करें। हम सब स्वतंत्र हैं।

अपने द्वारा किए गए अनुचित कार्य का बोध

- हाँ, मैंने दूसरों को बाधित किया और पहले मुझे अच्छा लगा। पर अब मुझे अच्छा नहीं लग रहा है क्योंकि मेरा अधिकार नहीं है कि मैं दूसरों की स्वतंत्रता बाधित करूँ।
- कोई अगर अनुसूचित जाति का है या 'सामान्य' है तो उसे ऐसा नहीं करना चाहिए कि बस अनुसूचित जाति का दोस्त रहे या 'सामान्य' का। उसे दूसरे लोगों के साथ भी रहना चाहिए।

इन अनुभवों के आधार पर हम युवा नागरिकों के लिए, सक्रिय नागरिकता के और अधिक ऐसे अनुभव बनाने में सक्षम हुए हैं। हालाँकि विद्यार्थी अपने एसपीएल पाठ्यक्रम की अवधारणाओं से जुड़े हुए थे, लेकिन आत्म-चिन्तन करने, परिवार और आस-पड़ोस के लोगों के साथ बातचीत से उन्हें मानवीय और संवैधानिक मूल्यों का अनुभव करने का मौका मिला। इस तरह उन्होंने संविधान और प्रस्तावना को अपने जीवन से अलग नही समझा। अभियान के दौरान उनके साथ साझा की गई पूरक सामग्री ने उन्हें इन मूल्यों को जीने का मौक़ा दिया। उन्होंने महसूस किया कि प्रस्तावना केवल उनकी किताबों में छपा एक दूरस्थ विचार नहीं बल्कि कुछ ऐसा है जिसका सामना वे विभिन्न परिस्थितियों में नियमित रूप से करते हैं।

अन्य उपयोग

यह अभियान इस बात का प्रमाण है कि इस पद्धति का इस्तेमाल, एसपीएल पाठ्यक्रम की सामग्री के शिक्षण के एक वैकल्पिक तरीक़े के रूप में भी किया जा सकता है। साथ ही, इस अभियान को एक कार्यप्रणाली के रूप में इस्तेमाल करते हुए, हम शिक्षकों के लिए संवैधानिक दृष्टिकोण से जुड़ना ज़रूरी हो जाता है। इससे हमारी कक्षाओं में ऐसी विधियों द्वारा कार्य करने में मदद मिल सकती है।

नागरिकता के मूल में, संविधान की प्रस्तावना के मूल्य ही बसे हैं। यहाँ तक कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 (एनईपी 2020) कहती है कि, प्रस्तावना में वर्णित मूल्य 'उन मूलभूत सिद्धान्तों में से एक हैं जो व्यापक शिक्षा प्रणाली, के साथ-साथ इसमें स्थित व्यक्तिगत संस्थाओं को भी मार्गदर्शित करेंगे।'

इस नज़रिए से देखा जाए तो यह ज़रूरी है कि हम अपनी कक्षाओं में प्रस्तावना को पढ़ें, सीखें और उसका पाठ करें एवं संवादात्मक और अनुभवात्मक पद्धतियों के माध्यम से इसे समझना शुरू करें। विभिन्न परिवेशों में युवा नागरिकों की परिस्थितियों और अनुभवों के साथ सक्रिय रूप से जुड़कर ही प्रस्तावना और उसके मूल्यों को जीवन्त किया जा सकता है।

Resources

A short film on the campaign – Constitution at 70 campaign: https://youtu.be/jXxQYZ9KayA

Find more resource materials here: https://www.wethepeople.ooo/resource-center

अस्मिता तिवारी *वी, द पीपल अभियान* में प्रोग्राम मैनेजर, कंटेंट हैं। अस्मिता पिछले तीन वर्षों से विकास के क्षेत्र में कार्यरत हैं। उन्होंने राजनीति विज्ञान में स्नातक और शिक्षा में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की है। *वी, द पीपल* अभियान में वे मुख्य रूप से विविध तरह के दर्शकों तथा श्रोताओं के लिए प्रासंगिक, चिन्तनशील और दिलचस्प सामग्री विकसित करने के साथ ही उसके प्रभाव का अध्ययन करती हैं। उनसे asmyta.tiwari@wethepeople.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

मंत्रिमण्डल के माध्यम से नागरिकता की शिक्षा

गुरुराजराव के

स्कूल एक ऐसी संस्था है जिसका मूल उद्देश्य, अपनी सभी नियोजित और व्यवस्थित प्रक्रियाओं के माध्यम से नागरिकता-शिक्षा प्रदान करना है, जिसमें पाठयक्रम और पाठयक्रम-सहगामी गतिविधियाँ भी शामिल हैं। मैं इमालपुर में अपने स्कूल के अनुभव साझा कर रहा हूँ, यह स्कूल कुछ अनूठे तरीक़ों से नागरिकता-शिक्षा प्रदान करने में सफल रहा है।

हमारा प्रयोग

राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय इमालपुर (ज़िला यादगीर) में कक्षा 1 से 7 वीं तक के क़रीब 200 विद्यार्थी पढ़ते हैं। यह कर्नाटक के सीमावर्ती स्कूलों में से एक है, जहाँ अधिकांश विद्यार्थियों की मातृभाषा तेलुगू है। 2012 से 2015 तक, मैंने प्रधान शिक्षकों के लिए गठित स्कूल नेतृत्व विकास कार्यक्रम (SLDP) के साथ काम किया। कार्यक्रम के एक हिस्से के रूप में, प्रत्येक प्रधान शिक्षक को अपने स्कूल में एक परियोजना का चुनाव कर, इस पर स्कूल में सभी हितधारकों को साथ लेकर काम करना था। उन्हें इस अनुभव से सीख भी लेनी थी।

बसप्पा स्कूल में प्रधान शिक्षक के पद पर कार्यरत थे। उन्हें सहायक अध्यापक के रूप में 20 साल और प्रधान शिक्षक के रूप में 8 साल कार्य करने का अनुभव था। उनकी परियोजना थी - एक मंत्रिमण्डल के गठन और कार्यान्वयन के माध्यम से स्कूल में एक लोकतांत्रिक परिवेश बनाना। ब्लॉक के अन्य सभी प्रधान शिक्षकों की तुलना में यह एक अनूठी पहल थी क्योंकि यह संवैधानिक मूल्यों और नागरिकता-शिक्षा को बढ़ावा देने से सम्बन्धित थी। उस स्कूल में इस पर कार्य पहले ही शुरू हो चुका था और प्रधान शिक्षक SLDP कार्यक्रम के माध्यम से इसे जारी रखना चाहते थे।

मज़बूत मंत्रिमण्डल के गठन को लेकर प्रधान शिक्षक व अन्य शिक्षकों ने सभी बच्चों के साथ विस्तृत बैठक की। उन्होंने बच्चों को भरोसा दिलाया कि मंत्रिमण्डल के सदस्य के रूप में कर्तव्य निर्वहन और निर्णय लेने के लिए उन्हें एक स्वतंत्र और भयरहित वातावरण प्रदान करेंगे। उन्होंने यह भी बताया कि यह मंत्रिमण्डल ही स्कूल की प्रक्रियाओं को चलाएगा और इसके पास स्कूल में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को लागू करने का अधिकार होगा। इसमें विद्यार्थियों को सवाल पूछने, राय व्यक्त करने और स्कूल की सभी प्रक्रियाओं में बराबर के भागीदार बनने के अधिकार शामिल थे।

नामांकन और वोटों के साथ उचित ढंग से चुनाव हुआ और प्रधानमंत्री एवं शिक्षा, संस्कृति, स्वच्छता, पर्यावरण, वित्त मंत्री और अन्य सदस्यों के साथ मंत्रिमण्डल का गठन किया गया। सभी सदस्यों को उनकी भूमिकाओं और ज़िम्मेदारियों से परिचित कराया गया। जल्दी ही, निर्वाचित सदस्यों ने अपने कर्तव्यों का निर्वहन शुरू कर दिया। बसप्पा और वेंकटेश (सहायक अध्यापक) ने विद्यार्थियों की भूमिकाओं से सम्बन्धित शंकाओं को दूर करते हुए उनकी मदद की। बच्चों को अपनी भूमिकाओं को बेहतर समझने में लगभग छह महीने लग गए। पर तब तक इसका असर स्कूल में दिखने लगा था। बच्चों ने अपने शिक्षकों से सवाल करना शुरू कर दिया था। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

- स्कूल देर से आने वाले शिक्षकों से बच्चों ने सवाल करना शुरू कर दिया।
- उन्होंने स्कूल में संसाधनों की कमी के बारे में प्रधान शिक्षक को आधिकारिक शिकायत की। उदाहरण के लिए, चॉक, डस्टर, पीने के पानी के बर्तन और शिक्षकों के लिए सामग्री की कमी।
- कई बार याद दिलाने के बाद भी स्कूल परिसर में कक्षाओं और पीने के पानी के बर्तन की सफ़ाई नहीं करने के लिए सुबह की सभा में स्कूल परिचारक से जवाब माँगा गया।
- बच्चों को कठोर दण्ड देने वाले (या मारने वाले) या किसी भी तरह से अपमानित करने वाले शिक्षकों को भी चिन्हित किया गया।

बच्चों ने स्कूल में वास्तविक लोकतंत्र का आनन्द लेना शुरू कर दिया। मासिक बैठकें की जाती थीं जिसमें सभी निर्वाचित सदस्य मिलते और स्कूल के मुद्दों और किए जाने वाले कार्यों पर चर्चा करते। प्रधान शिक्षक के मुताबिक बच्चों में आत्मविश्वास बढ़ा और शिक्षकों और बड़ों के सामने ख़ुद को अभिव्यक्त करने का डर कम हुआ। विद्यार्थियों का व्यवहार कई मायनों में बेहतर हुआ; वे नियमित रूप से स्कूल आने लगे, कार्य पूरा करने लगे, कक्षा में ध्यान देते हुए सक्रिय रूप से भाग लेने लगे।

हितकारी परिणाम

मंत्रिमण्डल के सदस्य बनने की माँग हर साल बढ़ती गई। अनुभवी विद्यार्थियों ने जूनियर सदस्यों को अपनी भूमिका निभाने के लिए साथ जोड़ना करना शुरू कर दिया। सवाल करना, बच्चों में विकसित होने वाली प्रमुख क्षमता थी। वे स्कूल में हर बात पर सवाल करने लगे। इससे शिक्षक और विद्यार्थी दोनों अपने काम में ज़्यादा जवाबदेह और समय के पाबन्द हो गए। इस वजह से, स्कूल ने आस-पास के क्षेत्रों में प्रसिद्धि प्राप्त की। शिक्षकों, ब्लॉक रिसोर्स पर्सन (BRP) और आस-पास के स्कूलों के बच्चों ने विद्यार्थियों के बढ़े हुए आत्मविश्वास और स्कूल के सभी निर्णय ले रहे मंत्रिमण्डल को देखने के लिए स्कूल का दौरा करना शुरू कर दिया। उनके द्वारा तीन वर्षों में किए गए कार्यों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

- पाठ्यपुस्तकों की कमी थी और बच्चे इस समस्या को सुलझाने के लिए प्रधान शिक्षक से लगातार शिकायत कर रहे थे। एक दिन, ब्लॉक रिसोर्स पर्सन (BRP), जो पाठ्यपुस्तक वितरण के लिए ज़िम्मेदार थे, अपने नियमित कार्य के सन्दर्भ में विद्यालय आए। बच्चे उनके चारों ओर खड़े हो गए और उनसे सवाल करने लगे। उन्होंने बच्चों से वादा किया कि वह इस मुद्दे को सुलझाएँगे और तीन दिनों के भीतर ही सभी बच्चों को उनकी पाठ्यपुस्तकें मिल गईं। वह ब्लॉक रिसोर्स पर्सन बाद में इस घटना को विभिन्न शिक्षक-प्रशिक्षण प्लेटफार्मों पर साझा करते और शिक्षकों को अपने स्कूलों में इस तरह की पहल करने के लिए प्रेरित करते ।
- विद्यालय में केवल एक शौचालय था जो सभी 200 बच्चों के उपयोग के लिए पर्याप्त नहीं था। लड़कियाँ अवकाश के दौरान अपने घर शौचालय का इस्तेमाल करने जातीं और लड़के स्कूल के बाहर, खुले में शौच के लिए जाते थे। मंत्रिमण्डल ने प्रधान शिक्षक के समक्ष इस मुद्दे को उठाया और स्कूल की टीम ने स्थानीय ग्राम-पंचायत से स्कूल विकास एवं निगरानी समिति (SDMC) के साथ मिलकर बच्चों के लिए शौचालय बनाने का अनुरोध किया। तीन माह बाद भी जब समस्या का समाधान नहीं हुआ तो विद्यार्थियों ने शान्तिपूर्ण विरोध का रास्ता अपनाया और ग्राम-पंचायत के बाहर एकत्रित होकर स्कूल में शौचालय निर्माण की माँग की। दस दिन के भीतर ही अस्थायी शौचालय की व्यवस्था की गई और छह माह के भीतर नए शौचालयों का निर्माण करवा दिया गया।
- एक अन्य घटना में, बच्चे, ब्लॉक शिक्षा अधिकारी (BEO) को यह समझाने में सफल रहे कि कैसे परिसर की सफ़ाई के लिए नियुक्त अस्थायी स्कूल अटेंडेंट ने अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया और प्रधान शिक्षक को धमकाया। इसके चलते लापरवाही करने वाले अटेंडेंट के ख़िलाफ़ कार्यवाही की गई। बच्चों द्वारा स्थिति को सही ढंग से, आत्मविश्वास के साथ और बिना किसी पूर्वाग्रह के समझाते देख BEO बच्चों से प्रभावित हुए।

मंत्रिमण्डल के माध्यम से स्कूल में लोकतांत्रिक प्रक्रिया स्थापित करने के लिए शुरू की गई इस पहल का विद्यार्थियों

पर काफ़ी असर पड़ा। वे सवाल करने, भेदभाव के खिलाफ़ आवाज़ उठाने और अपने अधिकारों के लिए लड़ने में सक्षम थे। इससे उन्हें सही और ग़लत को बेहतर आँकने और अपने कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों के बारे में जागरूक होने में भी मदद मिली।

इसी तरह बच्चे नागरिकता के बारे में सीखते हैं और समाज के बेहतर नागरिक बनते हैं। हो सकता है कुछ स्कूल इस तरह से काम कर भी रहे हों, लेकिन सभी स्कूलों में हमें इसी तरह लोकतंत्र का अभ्यास करने की ज़रूरत है। यदि बच्चे अपने स्कूलों, घरों और गाँवों में मुद्दों से जूझने के लोकतांत्रिक तरीक़ों का उपयोग करना सीख जाते हैं, तो वे बड़े होकर लोकतंत्र का सम्मान करेंगे और सक्रिय नागरिक बनेंगे। यह स्कूल के विद्यार्थियों, शिक्षकों और अभिभावकों के निरन्तर व नियमित प्रयासों से हासिल किया जा सकता है।

गुरुराजराव के अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला संस्थान, मांड्या, कर्नाटक में रिसोर्स पर्सन हैं। उन्हें शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों और शैक्षिक पदाधिकारियों के साथ काम करने का समृद्ध अनुभव है। उनके अधिकांश प्रयास शिक्षण-अभ्यासों में बदलाव लाने और सरकारी स्कूलों में बच्चों के अधिगम को बेहतर बनाने पर केन्द्रित हैं। उनसे gururajrao.k@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

नागरिकता से सम्बद्ध शिक्षा की विषयवस्तु और लक्ष्य क्या हों? यह कोई सादा-सरल सवाल नहीं है। इसका जवाब कई तरह से दिया जा सकता है। अलग-अलग सम्भव दृष्टिकोणों के बीच गम्भीर असहमतियाँ भी हो सकती हैं। और यह सवाल ख़तरनाक भी है। लेकिन अगर स्कूलों और शिक्षकों को अपने समयकाल में प्रासंगिक रहना है और अपने विद्यार्थियों को कुछ सार्थक, अर्थपूर्ण शिक्षा देनी है, तो उन्हें यह सवाल उठाना ही होगा।

- अमन मदान, नागरिकता की विभिन्न संस्कृतियाँ : किसका शिक्षण हो?, पेज 1

लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार

नन्दा शर्मा

प्राथमिक शाला के बच्चों के साथ काम करते समय हम अक्सर एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम द्वारा तैयार *ख़ुशी-ख़ुशी* पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करते हैं। साथ ही शब्द-कार्ड, चित्र-शब्द-कार्ड, कविता-पोस्टर आदि टीएलएम का इस्तेमाल भी करते हैं।

आमतौर पर हम कक्षा एक, दो, तीन में बच्चों की बोलने की झिझक तोड़ने, शब्दों की पहचान करवाने, वाक्य की पहचान करवाने व पढ़े हुए पाठ की समझ बनाने में कविता-पोस्टर का काफ़ी उपयोग करते हैं। बच्चे पोस्टर में रंग भरने, शब्द पहचानने, पहचाने शब्द में गोला लगाने, नोटबुक में वाक्य लिखने और अपनी ओर से कविता को आगे बढ़ाने की गतिविधियाँ सहजता से करते हैं।

यहाँ मैं होशंगाबाद के खेड़ला गाँव की प्राथमिक शाला में कविता-पोस्टर के प्रयोग से मिले अनुभव के बारे में बताने वाली हूँ। इस अनुभव ने न सिर्फ़ कक्षा में लैंगिक भेदभाव व समानता जैसे मानवीय और संवैधानिक मूल्यों पर चर्चा के रास्ते खोले वरन् प्राथमिक कक्षाओं में ऐसी चर्चाओं की सम्भावना की ओर भी मेरा ध्यान आकृष्ट किया।

इस गाँव की दो शिक्षिकाएँ, सुश्री कला मीणा व सुश्री प्रज्ञा शर्मा, कोविडकालीन '*हमारा घर-हमारा विद्यालय*' योजना के तहत गाँव के ही एक घर में कुछ बच्चों को पढ़ाने का काम कर रही हैं। एक दिन मैं हमेशा की तरह खेड़ला गाँव गई थी। वहाँ दोनों ही शिक्षिकाओं ने बच्चों को दो समूहों में बाँटकर पढ़ाने का काम शुरू किया। पहले समूह में शिक्षिका (कला मीणा) कक्षा 1 व 2 के बच्चों को गणित पर काम करवा रही थीं। वहीं दूसरी शिक्षिका (प्रज्ञा) कक्षा 3 से 5 तक के पाँच बच्चों के साथ भाषा-शिक्षण पर काम करने वाली थीं। चूँकि इस समूह में काम शुरू हो ही रहा था तो मैं साथ बैठ गई।

शिक्षिका के पास *लालाजी लड्डू दो* कविता का एक पोस्टर रखा हुआ था। शिक्षिका बच्चों के साथ एक गोल घेरे में बैठ गईं। वे बार-बार बच्चों को बोल रही थीं 'ठीक से पकड़ो, सबको दिखना चाहिए।' शिक्षिका का ध्यान कक्षा तीन के दो बच्चों पर ज़्यादा था क्योंकि दोनों ही बच्चों को पढ़ना नहीं आता था। शिक्षिका ने ज़ोर से कविता का शीर्षक पढ़ा - *लालाजी लड्डू दो* । इसके बाद बच्चों को निर्देश देते हुए कहा, "पहले इस कविता-पोस्टर में दिए गए चित्रों में रंग भर दो, ताकि पोस्टर सुन्दर दिखाई दे और इसे पढ़ने में और मज़ा आए।" शिक्षिका ने बच्चों के सामने मोम-कलर बिखेर दिए। बच्चे कविता-पोस्टर के चित्र को बड़े ध्यान से देख रहे थे और आपस में बातचीत भी कर रहे थे। कोई कहता 'मुझे रंग भरने दो', कोई कहता 'तू लड्डू को भर ले, मैं लाला जी को।' शिक्षिका ने बच्चों की बातचीत सुनकर उन्हें टोकते हुए कहा, "सब बारी-बारी से रंग भरना, कोई लड्डू में रंग भरे, कोई लाला जी के चेहरे पर रंग करे, कोई उनके कुर्ते पर रंग करे और कोई उनके बालों को, तो कोई उनकी मूँछों को।" 'मूँछ' शब्द सुनते ही बच्चे ज़ोर से हँस दिए।

एक लड़की ने झट से काले रंग का मोम-कलर उठाया और लालाजी के सर के बालों को रंगने लगी। उसका काम पूरा होने पर दूसरे बच्चे ने कुर्ते में लाल रंग करना शुरू कर दिया, तो तीसरे ने उनके लड्डू को पीला रंग। अब बारी आई लालाजी की मूँछों की, उसे भी काले रंग से रंगा गया। थोड़ी ही देर में पोस्टर के सभी चित्रों को रंगीन कर दिया गया था।

शिक्षिका ने एक बच्चे से पोस्टर सीधे पकड़कर खड़े होने को कहा। फिर हाव-भाव के साथ हर शब्द पर उँगली रखकर कविता सुनाती गईं। फिर सभी बच्चों को मौक़ा दिया कि वे कविता को उँगली रखकर पढ़ें। ऐसा लगा कि शिक्षिका चाह रही थीं कि कक्षा 3 के बच्चों को शब्दों की पहचान हो जाए, क्योंकि इन बच्चों को पढ़ना नहीं आता था। थोड़ी देर बाद शिक्षिका ने बच्चों से कुछ सवाल किए।

शिक्षिका ने पूछा, "लालाजी से बच्चे ने कितने लडडू माँगे?"

जवाब मिला, "चार।"

किसी ने कहा, "नहीं, एक।"

कविता-पोस्टर को एक बार फिर देखकर सही जवाब तक पहुँचा गया।

शिक्षिका ने सवाल किया, "हमारे गाँव में लालाजी किसको कहते हैं? "

एक बच्ची का जवाब आया, "जीजाजी को।"

शिक्षिका ने उसकी बात को दोहराते हुए कहा, "हाँ, जीजाजी

यानी दामादजी को भी लालाजी कहते हैं। पर यहाँ तो मिठाई बेचने वाले सेठजी को लालाजी कहा जा रहा है।''

शिक्षिका, ''बच्चा लालाजी की तारीफ़ कैसे कर रहा था? क्या आप भी किसी की तारीफ़ करते हो जब आपको कुछ माँगना होता है? ''

बच्चे, ''जी हाँ। मम्मी की तारीफ़ करते हैं, दादी की तारीफ़ करते हैं, पापा की तारीफ़ करते हैं।''

शिक्षिका, 'मम्मी की तारीफ़ कैसे करते हो? ''

बच्चे, 'मम्मी, आप बहुत-ही अच्छे गुलाबजामुन बनाती हो।''

शिक्षिका, ''दादी की तारीफ़ कैसे करते हो? ''

बच्चे, ''दादी, आप अच्छे भजन गाती हो, मज़ा आ जाता है।''

शिक्षिका, ''आपके घर में लडडू, गुलाबजामुन कौन बनाता है? ''

बच्चे, ''मम्मी।''

शिक्षिका, ''तो लालाजी के घर में लडडू कौन बनाता होगा?''

बच्चे, ''शायद उनकी पत्नी।''

शिक्षिका, ''बच्चे ने लालाजी की किस चीज़ की तारीफ़ की थी? ''

बच्चे, ''मूँछों की।''

शिक्षिका, ''वैसे मूँछ किसकी होती हैं?''

बच्चे, ''आदमियों की।''

शिक्षिका, ''क्या आदमियों के अलावा और किसी की मूँछ देखी है? ''

जवाब, ''हाँ, शेर की, बिल्ली की, चूहे की।''

तभी धीरे-से एक आवाज़ आई, ''औरत की'' यह जवाब उस बच्ची ने ही दिया था जो थोड़ी देर पहले शर्माते हुए लालाजी की मूँछों में रंग भर रही थी।

तभी सब बच्चे ज़ोर से हँस दिए।

शिक्षिका ने पूछा, ''क्या आपने ऐसी कोई औरत देखी है जिसकी मूँछ हो? ''

बच्चे थोड़ी देर चुप रहे रहे। फिर एक-दो बच्चों ने झिझकते हुए बताया कि घनी मूँछ वाली तो नहीं देखी, लेकिन हल्की-हल्की मूँछ वाली औरतें देखी हैं। शिक्षिका ने बच्चों को बताया कि शरीर पर बालों का आना या जाना तो हारमोन्स के कारण होता है। ये तो किसी को भी हो सकता है, चाहे आदमी हो या औरत।

ऐसा लग रहा था कि हम इस चर्चा में और गहराई में जाने वाले हैं। लेकिन उस दिन की कक्षा समाप्त हो गई। हम कक्षा 3 और 5 के बच्चों के साथ भाषा-शिक्षण की कुछेक गतिविधियाँ ही करवा पाए थे। कविता-पोस्टर से और क्या हासिल हो सकता है इसी उधेड़बुन में उलझी हुई मैं वापस आ गई। रह-रहकर ऐसा लग रहा था कि आज कुछ हासिल होते-होते रह गया था। लेकिन क्या हासिल नहीं हो पाया, यह समझ नहीं आ रहा था।

एनसीएफ 2005 के पूर्व की अधिकांश पाठ्यपुस्तकें, लिंग आधारित भेदभाव का चित्रण करती थीं। उनके पाठ्य-अभ्यासों में बहुत गहरे पूर्वाग्रह दिखाई पड़ते थे। जैसे पाठ्यपुस्तकों में पुरुष लेखकों का बाहुल्य होता था। विषयवस्तु भी पुरुष केन्द्रित होती थी। पुस्तकों में पाए जाने वाले अधिकतर विवरणों में महिला को माँ, बहन या गृहिणी के रूप में, जबकि पुरुषों को कमाने वाले के रूप में, या अन्य ज़िम्मेदार भूमिकाओं में दर्शाया जाता था।

इन्हीं मनोभावों में गोते लगाते हुए मैंने अपने एक मित्र को फोन लगाकर आज के इस अनुभव के बारे में बताया। मित्र ने बताया कि उन्होंने *लालाजी* की कविता पर बच्चों से बात करते हुए पूछा था कि मान लो आज लालाजी को पेटदर्द हो रहा है, इसलिए दुकान पर लालाजी की पत्नी बैठी हैं। तो लालाजी की पत्नी को ध्यान में रखते हुए कविता में बदलाव करो और हम सबको वह कविता सुनाओ। कुछ बच्चों ने तुरन्त *लालाजी* शब्द को बदल कर *ललाइन* कर दिया, लेकिन तारीफ़ किस बात की करें, इस पर जाकर रुक गए। कुछ बच्चों ने कहा लालाजी बीमार हैं तो उनका बेटा दुकान में बैठा दिया जाए। इस बदले हुए कविता-पोस्टर की पूरी बात न बताते हुए इसे यहीं रोक रही हूँ। मुझे दरअसल इस बातचीत से एक नई दिशा मिल गई थी।

इस बातचीत से समझ बनी कि लिंग आधारित भेदभावों को दूर करने में शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा पाठ्यचर्या 2009 [NCFTE 2009] के अनुसार -

''जेंडर, शान्ति और टिकाऊ विकास जैसे दृष्टिकोणों की रोशनी में जैसे-जैसे शिक्षक पाठ्यसामग्री और शैक्षिक अनुभवों का निर्माण करेंगे, वे सक्रिय भागीदारी के माध्यम से पाठ्यचर्या के सार्थक सम्पादन हेतु ज़रूरी तत्त्वों को पहचानने और तैयार करने के कौशलों को भी सीखेंगे।''

कुछ दिनों बाद, मैं एक बार फिर खेड़ला गाँव की प्राथमिक शाला के बच्चों के सामने लालाजी के कविता पोस्टर के साथ

थी। पिछली बार हमने पोस्टर में रंग भरने और शब्दों सम्बन्धी कुछ गतिविधियाँ कर ली थीं। मैंने चर्चा को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। मेरे साथ प्रज्ञा व कला मीणा शिक्षिकाएँ थीं।

यदि लालाजी बीमार हों और दुकान पर लालाजी की पत्नी बैठी हों तो क्या हो? इस सवाल से चर्चा शुरू हुई। बच्चे सहजता से इस बदलाव को मानने को तैयार नहीं थे।

शिक्षिका, ''अपने गाँव में किराने की कितनी दुकानें हैं? ''

बच्चे, ''तीन दुकानें हैं।''

शिक्षिका, ''उन दुकानों पर कौन बैठता है?''

बच्चों का जवाब था कि अमुक-अमुक चाचा बैठते हैं (यानी आदमी बैठते) हैं।

शिक्षिका, ''क्या इन दुकानों पर औरतें भी बैठती हैं? ''

बच्चे, ''नहीं।''

एक बच्ची ने कहा, ''हमारी किराने की दुकान है। हमारे पापा जब खेत जाते हैं या खाना खाने जाते हैं तो हमारी मम्मी थोड़ी देर के लिए दुकान में बैठती हैं।''

यानी यहाँ औरत की भूमिका एक रिलीवर जैसी है। प्रमुख दुकानदार की घण्टे भर की अनुपस्थिति में दुकान के माल की सुरक्षा व ग्राहकी चलाना, बस इतना करना है।

शिक्षिका ने आगे सवाल किया, ''ऐसी कौन-सी दुकानें हैं जहाँ आदमी दुकान चलाते हैं और ऐसी कौन-सी दुकानें हैं जिन्हें औरतें चलाती हैं।''

बच्चों का जवाब था, "किराना दुकान, नाई की दुकान, जूते-चप्पल की दुकान, खाद-बीज की दुकान, कपड़े की दुकान। इन दुकानों को चलाने वाले आदमी होते हैं। कुछ बच्चों का मानना था कि ज़्यादातर दुकानों को आदमी ही चलाते हैं। औरतें, सिंगार की दुकानों, सब्ज़ी की दुकानों, ब्यूटी पॉर्लर, फूल-बेलपत्री-नारियल की दुकानों (नर्मदा नदी के किनारे) को चलाते हुए दिखाई देती हैं।"

शिक्षिका ने बच्चों के सामने फिर एक सवाल रखा, ''अगर ऐसा हो कि सारी दुकानों को महिलाएँ चलाएँ तो ठीक रहेगा?''

कुछ बच्चों ने कहा कि सारी दुकानों पर औरतें होंगी तो उन्हें बाज़ार जाने में असहजता होगी। सब ओर औरतें ही दिखेंगी।

हमें लगा कि इन बच्चों ने सवाल को ठीक से समझा नहीं है। इसलिए दोबारा बताया गया कि अभी जैसे हम माँ, पिता, चाचा, मौसी, बुआ आदि के साथ बाज़ार जाते हैं वैसे ही जाएँगे, लेकिन दुकानदार कोई पुरुष न होकर महिला होगी। इतना ही फ़र्क है।

दो बच्चों ने कहा कि, ''हाँ, हमें कोई समस्या नहीं। बाज़ार में अगर कमीज़ खरीदनी है तो दुकानदार, औरत हो या आदमी, कोई दिक़्क़त नहीं।''

एक बच्चे को अभी भी सारी महिला दुकानदार होने से दिक़्क़त महसूस हो रही थी। लेकिन वह खुलकर बता भी नहीं पा रहा था कि दिक़्क़त क्या है। काफ़ी देर बाद उसने कहा, ''मम्मी लोग दुकान पर बैठेंगी तो पापा लोग क्या करेंगे? ''

शिक्षिका ने कहा, ''पापा लोग खेत में काम करेंगे, घर के काम करेंगे, खाना बनाएँगे।''

एक-दो बच्चों ने कहा कि, ''पापा लोगों को तो खाना पकाना आता नहीं।''

शिक्षिका ने कहा, ''पापा लोग खाना पकाना सीख लेंगे। क्या अभी आपके आस-पास कोई ऐसा आदमी है जो झाड़ू लगाना, खाना बनाना वगैरह काम करता हो?''

बच्चों ने दो उदाहरण बताए लेकिन वे पत्नी की मृत्यु के बाद अकेले रह गए पुरुषों के थे।

शिक्षिका ने पूछा, ''महिलाओं और पुरुषों के काम अलग-अलग क्यों हैं? ''

किसी बच्चे ने सकुचाते हुए कहा कि, ''कुछ काम में काफ़ी ताकत की ज़रूरत होती है।''

यहाँ शिक्षिकाओं ने बताया कि यह हमारा वहम है कि औरतों का शरीर कमज़ोर है। औरतें भी ट्रेक्टर, ट्रक, ट्रेन, हवाई जहाज़ चला सकती हैं। तुम्हारे स्कूल को भी पाँच महिला शिक्षिका ही चला रही हैं। सभी को, सब काम करने के मौक़े मिलने चाहिए।

यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते हमने एक बार फिर *लालाजी* के पोस्टर को देखा। ऐसा लग रहा था लालाजी अभी हाथ बढ़ाकर हम तीनों मैडमों को लड्डू दे देंगे।

लालाजी के पोस्टर के मार्फ़त आज हम रोज़गार के क्षेत्र में महिलाओं की भागादारी के मुद्दे को छू पाए थे। बच्चों के दिमाग़ में बने स्टीरियोटाइप को भी समझ पाए। बच्चे किसी दुकान में दुकानदार के रूप में पुरुषों को देखने के इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि कक्षा-कक्ष में दस मिनट के लिए किसी दुकान पर महिला दुकानदार के बैठाने की कल्पना मात्र से असहज हो उठते हैं। पिताजी क्या करेंगे जैसे ख़्याल दिमाग़ में चलने लगते हैं।

अभी भी इस पोस्टर में चर्चा की और सम्भावना है। लालाजी की दुकान में काम करने वाले कारीगर, वेटर, उनका काम, उनका वेतन, लालाजी का कर्मचारियों से व्यवहार आदि। यह

सब ऐसे क्षेत्र हैं जिनके माध्यम से, मूँछों की तारीफ़ सुनकर लड्डू देने वाले लालाजी से लेकर बच्चों से श्रम करवाते लालाजी तक के अनुभव कक्षा में आ सकते हैं। इसलिए कविता-पोस्टर सिर्फ़ भाषा-शिक्षण तक सीमित न रहकर सामाजिक ताने-बाने को परखने का मौक़ा भी देते हैं।

(शासकीय प्राथमिक शाला, खेड़ला, होशंगाबाद में पदस्थ शिक्षिका सुश्री प्रज्ञा शर्मा व सुश्री कला मीणा ने बच्चों से बातचीत में जो मदद की इसके लिए विशेष आभार।)

नन्दा शर्मा एकलव्य के जश्न-ए-तालीम कार्यक्रम में बतौर ब्लॉक समन्यवक काम कर रही हैं। वे होशंगाबाद में रहती हैं। उनसे nanda.nanda.sharma@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

महामारी के काल में नागरिकता

प्रणीत गुडलडन और संकल्प कोरिपल्ली

"उन्होंने (दो विद्यार्थी) एक महत्त्वपूर्ण और काफ़ी बड़ा योगदान दिया है जिससे होसकोटे के वंचित लोगों को बड़ी मदद मिलेगी।" चन्दन, गूँज समन्वयक

नागरिकों के रूप में अपनी भूमिका अदा करने के लिए लोगों को क्या करना चाहिए? देश के नियमों और क़ानूनों का पालन करने के अलावा नागरिकों से अपेक्षा की जाती है कि वे दूसरों की ज़रूरतों को स्वीकारें और उनका सम्मान करें। स्वयंसेवा करना सामाजिक रूप से लाभप्रद कार्य है जो समुदाय को मज़बूत करता है और नागरिकता के एक मूल सिद्धान्त को कार्यान्वित भी करता है।

लोग लोकतंत्र के मूलभूत अंग हैं। भारत के पहले प्रधानमंत्री, जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "देश की सेवा में नागरिकता निहित होती है।" 1997 में जब यूनाइटेड किंगडम में लेबर सरकार सत्ता में आई, तो उसका लक्ष्य अपने नागरिकों को सार्वजनिक सेवाओं के महज़ आज्ञाकारी उपयोगकर्ताओं से ऐसे लोगों में बदलना था जिनका समुदाय से जुड़ाव हो और जो समुदाय के अधिक सक्रिय सदस्य बनें। नागरिकता की यह व्याख्या समुदाय को लाभ पहुँचाती है, और इससे भी ज़्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह पूरे देश को लाभ पहुँचाती है।

हाल के महीनों ने समाज के कुछ वर्गों पर महामारी के गम्भीर प्रभावों के प्रति हमारी आँखें खोल दीं। जीवन में पहली बार हमने देखा कि कैसे सार्वजनिक स्वास्थ्य के हित में लगाया गया एक लॉकडाउन उन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। इनमें फेरीवाले, दिहाड़ी मज़दूर और छोटे कारोबारी शामिल थे। हालाँकि सरकार राहत पहुँचाने के उपाय कर रही थी, पर समाज के चिन्तित और समानुभूतिक सदस्य होने के नाते हम कुछ करना चाहते थे।

हमने प्रभावित लोगों की मदद करने के लिए विभिन्न तरीक़ों का पता लगाना शुरू किया। थोड़ी खोजबीन के बाद हमने 'गूँज' नामक एक नामी एनजीओ के साथ मिलकर काम करने का फ़ैसला किया। उनके पास दान वितरण का एक स्थापित तंत्र है, जिससे हम आश्वस्त हुए कि सारा दान ज़रूरतमन्द लोगों के पास पहुँच जाएगा। सितम्बर में हमने कपड़े, जूते, किताबें, सूखा राशन, तेल, स्टेशनरी, बैग और कम्बल जैसी विभिन्न आवश्यक वस्तुओं को इकट्ठा करने के लिए बेंगलूरु के कई इलाक़ों में एक दान अभियान चलाने का प्रस्ताव रखा।

जब हमने शुरुआत की तब यह संशय था कि यह योजना अच्छी है या नहीं और क्या हम पर्याप्त दान इकट्ठा कर भी पाएँगे। पर हमने साथी नागरिकों की उदारता पर भरोसा किया। महीने के अन्त तक हमने अपने सभी प्रयासों को व्हॉट्सऐप सन्देशों व ईमेल के माध्यम से दान अभियान के प्रचार पर केन्द्रित किया। हमने जोश भरी गुहार लगाई और अपने दोस्तों की मदद से अपना सन्देश आगे फैलाया। दानदाताओं द्वारा योगदान देना आसान करने के लिए हमने जगह-जगह संग्रह बक्से लगाने की योजना बनाई। गत्ते के बड़े डिब्बे मिलना एक और चुनौती थी। अभियान से एक हफ़्ते पहले हमने दोस्तों और पड़ोसियों से अनुरोध किया कि वे ऑनलाइन शॉपिंग से मिलने वाले हर डिब्बे को सँभालकर रखें। यही गुज़ारिश लेकर हम मोहल्ले के किराने की दुकान पर भी गए। दुकान मालिक ने बहुत सहयोग किया और हमें कुछ दिनों बाद वापिस आने को कहा। उपयुक्त तरीक़े से सैनिटाइज़ करने के बाद हमने इन बड़े डिब्बों को सभी सोचे गए स्थानों पर रख दिया।

जैसे-जैसे बात फैलती गई, हमें भारी मदद मिलने लगी। अपनी

अनुपयोगी चीज़ों को दान करने का मौक़ा मिलते ही लोग जैसे कूद पड़े। सकारात्मक प्रतिक्रिया से प्रेरित होकर हम दान जमा करने के लिए और ज़्यादा डिब्बे लगाने लगे और अक्टूबर के मध्य से समय-समय पर दान इकट्ठा करने लगे।

इस प्रक्रिया का अगला क़दम इस दान को बेंगलूरु में 'गूँज' के केन्द्र तक पहुँचाना था। लेकिन-बड़ी संख्या में प्राप्त हुए दान ने इस काम को मुश्किल बना दिया था। बक्सों को गाड़ियों तक पहुँचाने और बार-बार गूँज के केन्द्र तक ले जाने के लिए हमें कुछ दोस्तों व परिवार वालों की मदद की ज़रूरत पड़ी। आख़िरकार एक हफ़्ते तक भारी-भरकम बक्सों को उठाने और ले जाने की क़वायद के बाद हम दान में मिले सभी सामान को गूँज तक पहुँचा पाए। जो सामान हमने एकत्र किया था उन्हें देखकर वे बहुत ख़ुश हुए और उन्होंने वादा किया कि वे इन मूल्यवान चीज़ों को ज़रूरतमन्द लोगों तक पहुँचा देंगे।

ज़रूरतमन्द लोगों की मदद करने से जुड़ाव और अपनेपन की मनोवैज्ञानिक भावना पैदा होती है। एक अच्छा नागरिक इस भावना की क़द्र करता है और इसे अपनाता है। एक सच्चा नागरिक वही है जो सक्रिय रूप से समुदाय में अपनी भूमिका निभाए और समुदाय के सभी सदस्यों के प्रति समानुभूति रखे। हम मानते हैं कि किसी सत्ता के प्रति अन्धी निष्ठा दिखाने के बजाए नगरीय समुदाय से जुड़ना हमारी ज़िम्मेदारी है। लोग नागरिकता की भावना अपनाते हैं जब वे अपने निजी कार्यों के साथ ही अपने पड़ोसियों की भलाई का भी ध्यान रखते हैं। सामुदायिक सेवा करने से लेकर कार्यक्रमों और त्यौहारों के आयोजन तक, समुदाय की सहायता करने तथा उसे मज़बूत करने के लिए की गई हर गतिविधि इस भावना को विकसित करती है।

प्रणीत गुडलडन द इंटरनेशनल स्कूल, बेंगलूरु में ग्यारहवीं कक्षा के छात्र हैं। उनसे gpraneet@tisb.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

संकल्प कोरिपल्ली द इंटरनेशनल स्कूल बेंगलूरु, में ग्यारहवीं कक्षा के छात्र हैं। उनसे ksankalp@tisb.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

दूसरों को सशक्त बनाना

प्रशान्त मिश्रा

हम सभी समाज और राष्ट्र के प्रति अपने अधिकारों और ज़िम्मेदारियों से अवगत, क़ानून का पालन करने वाले ईमानदार नागरिक हो सकते हैं। लेकिन अच्छे नागरिक होने के नाते यह ज़रूरी है कि हम समाज में जिन तरीक़ों से भी योगदान कर सकते हों, करें। मैंने कुछ ऐसा ही करने का फ़ैसला किया।

जिस मूल दर्शन के साथ मैंने *केयरीच प्रोजेक्ट* शुरू किया था, वह उन लोगों की देखभाल करना और उन लोगों तक पहुँचना था जिन्हें मदद की ज़रूरत है। और यह मदद इस तरीक़े से हो कि उन्हें अपने जीवन के लम्बे समय के लिए, आदर्श रूप से, आजीवन फ़ायदा हो। दुनिया में सबसे ज़्यादा बच्चों की आबादी भारत में है। 95 प्रतिशत बच्चे प्राथमिक विद्यालय जाते हैं और दस में से केवल एक ही बच्चा स्नातक डिग्री प्राप्त कर पाता है।[1] समस्या की गम्भीरता को समझते हुए मैं इस सामाजिक अभियान पर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित हुआ। जैसा कि नेल्सन मंडेला ने एक बार कहा था, "शिक्षा सबसे शक्तिशाली हथियार है जिसका उपयोग आप दुनिया को बदलने के लिए कर सकते हैं।"

मैंने शुरुआत कैसे की

पहला काम लाभार्थियों का पता लगाना था। अपने शोध और अपने माता-पिता के सुझावों के आधार पर मैंने यह निर्णय लिया कि मैं एक सरकारी स्कूल के साथ काम करूँ। कुडलू राजकीय विद्यालय, बेंगलूरु की जनरल बॉडी के साथ हुई बैठकों के बाद प्रबन्धन ने इस परियोजना को मंजूरी दे दी।

सभी हितधारकों (अभिभावकों, विद्यार्थियों और विद्यालय प्रशासन) की रुचियों के बीच तालमेल बिठाने के लिए मैंने लगभग 145 साक्षात्कार किए और पाया कि विद्यार्थी अँग्रेज़ी, गणित और खेल में रुचि रखते हैं। बहुत-से विद्यार्थी सह-पाठ्यचर्या गतिविधियों में भी रुचि रखते थे, जो मेरे हिसाब से टेलीविज़न और अन्य मीडिया से जुड़ने के कारण हो सकता है। लेकिन शैक्षणिक दृष्टिकोण से अँग्रेज़ी सबसे अधिक रुचिकर विषय के रूप में सामने आई और इसलिए मैंने पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों को 'स्पोकेन इंग्लिश' पढ़ाने का फ़ैसला किया (सरकारी स्कूलों में अँग्रेज़ी विषय पढ़ाने की शुरुआत पाँचवीं कक्षा से होती है)।

स्कूल प्रशासन भी स्कूल में कुछ विकास कार्य करवाने के लिए उत्सुक था। इसके लिए कुछ धन की आवश्यकता थी और मुझे वित्तीय संसाधन जुटाने में कुछ समय लगा, लेकिन अन्ततः मैं संसाधन जुटाने में सफल रहा। सूची में निम्नलिखित चीज़ें शामिल थीं :

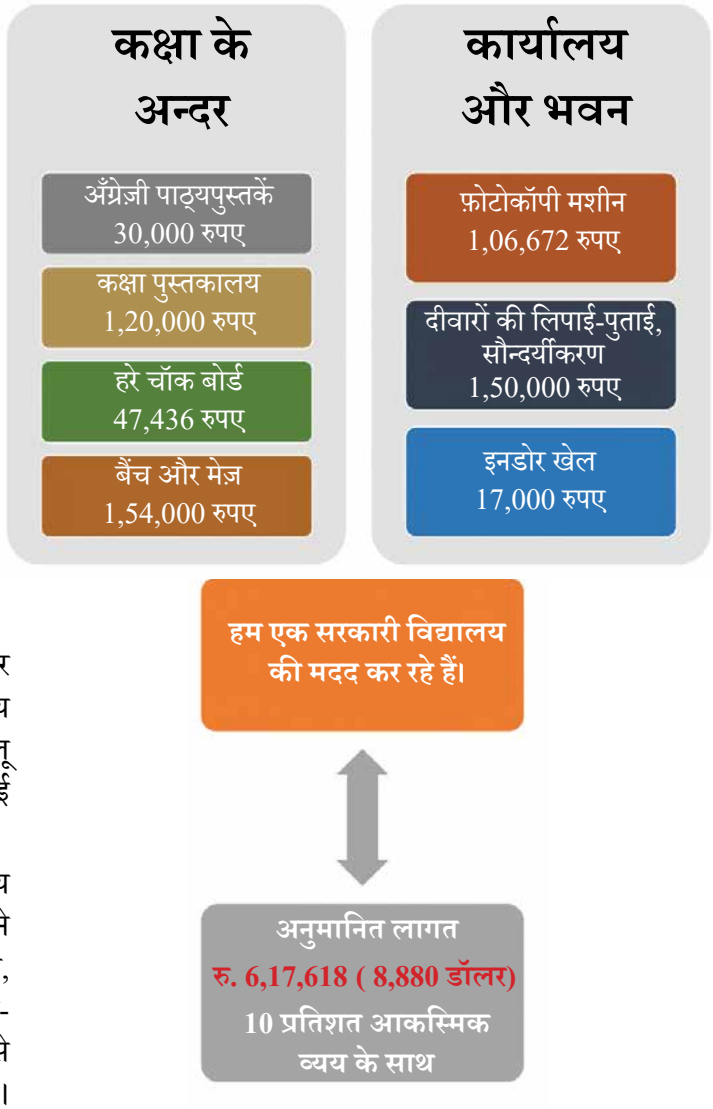

अब तक की प्रगति

1. कक्षा पाँचवीं और छठवीं के 54 विद्यार्थियों के एक समूह को स्पोकेन इंग्लिश सिखाई जा रही है।
2. एक क्राउड-फंडिंग प्लेटफॉर्म Careach.in चालू है, जो फेसबुक, ट्विटर और इंस्टाग्राम पर भी मौजूद है। हमने

घर-घर जाकर भी प्रचार किया।

3. हमने सत्रों के लिए संवादात्मक सामग्री तैयार की और अब तक हम 45 सत्र आयोजित कर चुके हैं।
4. हमने अपनी वित्तीय ज़रूरत का लगभग 50 प्रतिशत पहले ही एकत्र कर लिया है जिसका उपयोग प्रिंटर, हरे चॉकबोर्ड और कुछ इनडोर खेल सामग्री ख़रीदने के लिए किया गया है।

मैं धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था लेकिन तभी *कोविड–19* ने कार्य को एकदम से रोक दिया। और जैसे-जैसे चीज़ें आगे बढ़ीं यह स्पष्ट हो गया कि अभिभावक और बच्चे निश्चित रूप से कठिनाइयों से गुज़र रहे थे। इसलिए मैंने कार्य के तरीक़े बदले और विद्यार्थी परिवारों की हरसम्भव मदद करने का फ़ैसला किया। स्कूल के प्रधानाचार्य के साथ मेरी बैठक में यह बात सामने आई कि सबसे अच्छा होगा अगर हम अगस्त से नवम्बर, 2020 के बीच 30 ज़रूरतमन्द परिवारों को भोजन और दैनिक आपूर्ति में मदद कर सकें। स्कूल प्रधानाचार्य के परामर्श से लाभार्थियों की एक सूची बनाई गई। घर-घर जाकर और ऑनलाइन माध्यम से व्यापक रूप में दान माँगा गया और इससे मुझे इन परिवारों की मदद के लिए नियमित रूप से धन प्राप्त होता रहा।

आगे का काम

अन्य योजनाबद्ध गतिविधियों के अलावा स्कूल को अतिरिक्त शौचालय सुविधाओं की ज़रूरत है। मदद के लिए मेरी तलाश जारी है और मैं कुछ कॉरपोरेट/सीएसआर फंडिंग की तलाश कर रहा हूँ। अनुमानित लागत दस लाख रुपए है और मुझे यक़ीन है कि अन्ततः हम इसे इकट्ठा कर लेंगे। लेकिन अभी के लिए तो केवल स्पोकेन इंग्लिश पढ़ाना और बुनियादी ढाँचे में मामूली सुधार लाने में मदद करने का मेरा काम जारी है।

हाल ही में, मैंने इस विद्यालय को हाई-स्पीड इंटरनेट कनेक्शन दिलाने में भी मदद की।

लोकतांत्रिक राष्ट्रों के नागरिकों के रूप में प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह सभी लोगों के जीवन को बेहतर बनाने में मदद करे। आसान काम करने का चुनाव करने के बजाय हमें ऐसे क़दम उठाने चाहिए जो न्यायसंगत हों। हमें बिना शर्त समानता की दिशा में काम करने की ज़रूरत है और अपने समाज को अप्रासंगिक कारकों, जैसे कि धन, लिंग, जाति, धर्म आदि के आधार पर वर्गीकृत नहीं करना चाहिए। स्पष्ट है कि ऐसा होने में समय लगेगा, लेकिन कम से कम हम जितना कर सकते हैं, उतना तो करें। मैं जो कर सकता हूँ, वह करने की कोशिश कर रहा हूँ।

कुल 145 हितधारकों से मुलाक़ात = 124 विद्यार्थी || 11 शिक्षक || 10 अभिभावक

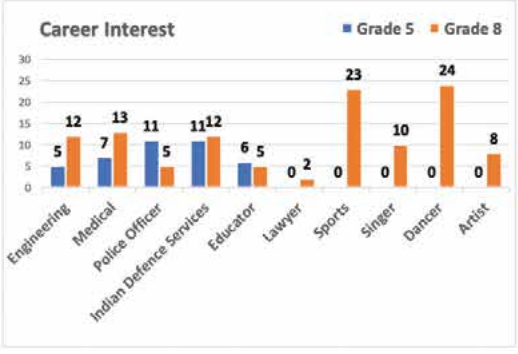

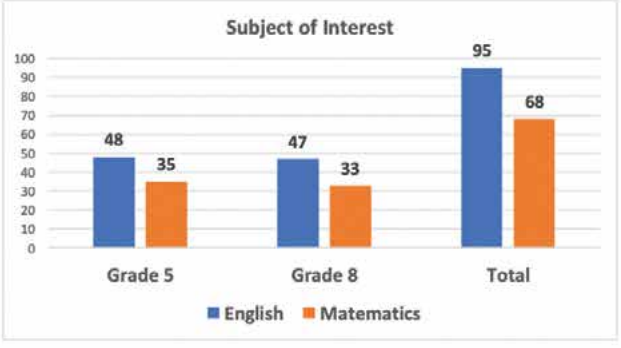

i https://www.cry.org/resources/pdf/Types_of_Corp_parts_sep11.pdf

References

https://www.worldbank.org/en/news/feature/2011/09/20/education-in-india

https://www.ncee.org/wp-content/uploads/2013/10/India-Education-Report.pdf

प्रशान्त मिश्रा द इंटरनेशनल स्कूल, बेंगलूरु (TISB) में ग्यारहवीं कक्षा के छात्र हैं। उनके पसन्दीदा विषय अर्थशास्त्र और गणित हैं। उन्हें उन क्षेत्रों की खोजबीन करने में भी आनन्द आता है जो तकनीकी विकास को उनके आर्थिक प्रभावों के साथ जोड़ते हैं। वे कॉलेज में अर्थशास्त्र की पढ़ाई करना चाहते हैं। उनसे mprashant@tisb.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

बच्चों में नागरिकता के मूल्य विकसित करना

राधिका राजनारायणन

मैं चार साल (2013-2010) के लिए नागरिक जागरूकता बाल आन्दोलन (Children's Movement for Civic Awareness - CMCA) के साथ एक स्वयंसेवक के रूप में जुड़ी थी। निजी स्कूलों के लिए शहरी स्वयंसेवकों के रूप में हमारा काम आठवीं कक्षा के बच्चों के साथ साप्ताहिक सत्र करना था। यह एक ऐसा क्लब था जिसमें बच्चे स्वेच्छा से आते थे। आमतौर पर इसमें क़रीब पन्द्रह से बीस बच्चे शामिल होते थे। हमने निम्नलिखित अवधारणाओं से उनका परिचय कराया :

- सरोकार : इसमें पहले परिवेश, पानी की बर्बादी, बिजली, कूड़ा-करकट आदि के बारे में बदलाव लाने के तरीक़ों पर व्यावहारिक गतिविधियाँ करवाईं और बाद में पर्यावरण और बाल श्रम आदि के बारे में बताया।
- सह-अस्तित्व : इसके अन्तर्गत पक्षपात और पूर्वाग्रह से बचने और विविध लोगों के साथ रहना सीखने की विधियाँ शामिल थीं।
- सहयोग : इसमें बदलाव लाने के लिए स्कूल अधिकारियों या स्थानीय सरकारी निकायों के अधिकारियों जैसे लोगों के साथ बातचीत करने की गतिविधियाँ शामिल थीं।
- आमना-सामना : इसमें बताया गया कि जब अपील का असर न हो और प्रतिनिधित्व काम न करे तो अधिकारियों का शान्तिपूर्ण तरीक़े से विरोध और सामना कैसे किया जाए।

इसके अलावा लोकतंत्र के सिद्धान्तों, अधिकारों और ज़िम्मेदारियों के बारे में भी बताया गया। इन सभी अवधारणाओं को गतिविधियों, व्यावहारिक उदाहरणों, कहानियों, फ़िल्मों आदि के माध्यम से बच्चों के मन में बिठाया गया था। इन बच्चों ने अन्य बच्चों के बीच इन विचारों के प्रति जागरूकता लाने के लिए अपने स्कूलों में इन विषयों पर अभियान भी चलाए।

कार्यप्रणाली

अधिकांश बच्चों में मुझे जो पहला व्यवहारगत लक्षण नज़र आया, वह था बोलने की अनिच्छा। मेरा अनुभव यह है कि परिवार और शिक्षकों द्वारा उन्हें 'पलटकर जवाब न देने' या प्रश्न नहीं पूछने के लिए अनुकूलित किया जाता है। उनकी इस चुप्पी को तोड़ने में कई सप्ताह लग गए।

हम जो अवधारणाएँ बच्चों तक पहुँचाना चाहते थे उन्हें सिखाने के लिए कारगर तरीक़ा था बच्चों को इन अवधारणाओं से सम्बन्धित गतिविधियों को अपने परिवार के साथ करने के लिए प्रेरित करना। उदाहरण के लिए, ब्रश करते समय नल को खुला न छोड़कर पानी की बचत करना, और ख़ुद में, अपने परिवार में, स्कूल और आस-पड़ोस में देखे गए परिवर्तनों को नोट करने के लिए एक डायरी रखना। बच्चों को इन अवधारणाओं को अन्य बच्चों को सिखाने के लिए प्रेरित करना भी एक तरीक़ा था। मैंने पाया कि इस अभ्यास द्वारा बच्चों के मन में अवधारणा बेहतर ढंग से स्थापित हुई। हालाँकि यह तरीक़ा बड़े बच्चों (CMCA क्लब सदस्यों के सहपाठियों) के बजाय छोटे बच्चों के साथ ज़्यादा बेहतर ढंग से काम करता मालूम होता है।

साथियों का दबाव

जैसा कि मैंने अपने सत्रों के दौरान पाया, मेरा यह मानना है कि बच्चे जब तेरह वर्ष के होते हैं, तब तक उनमें अच्छी और बुरी दोनों तरह की आदतें विकसित हो चुकी होती हैं। किशोरावस्था में आने वाला विद्रोहपन भी दिखने लगता है। बच्चों को अच्छे नागरिक व्यवहार के सिद्धान्तों का पालन करने के लिए प्रेरित करना एक कठिन कार्य था। उदाहरण के लिए, बिना ड्राइविंग लाइसेंस के दोपहिया वाहन नहीं चलाना। साथियों का दबाव और भीड़ का हिस्सा बनने की इच्छा उन्हें अच्छी नागरिकता के इन नियमों की अनदेखी करने के लिए प्रेरित करती है। मेरे कुछ सहकर्मियों को अपने ही बच्चों को अठारह साल की क़ानूनी उम्र से पहले मोटर वाहन चलाने से रोकने के लिए समझाने, मनाने या धमकाने में बड़ी मुश्किलात आईं।

साथियों का दबाव अन्य नकारात्मक तरीक़ों से भी काम करता है। CMCA क्लब के बच्चे यदि अपने खेल दिवस या वार्षिक दिवस पर सफ़ाई अभियान चलाने की कोशिश करते तो अन्य सहपाठियों द्वारा उनका मज़ाक उड़ाया जाता। वे बाद में उदास चेहरों के साथ मुझे बताते कि दूसरे बच्चे उन्हें चिढ़ाते हुए कहते हैं, "ओह, तुम CMCA से हो; कूड़ा-करकट ख़ुद उठाओ!"

हतोत्साहित करने वाला एक और बड़ा घटक है— किसी भी सुझाव के लिए कुछ अभिभावकों (विशेष रूप से पिता) की

कठोर प्रतिक्रिया। बच्चों को इस तरह से बड़ा किया जाता है कि वह माता-पिता से डरते हैं और इस बारे में दोबारा बात करने से सकुचाते हैं। लेकिन इन जड़ जमा चुकी आदतों या अपने अभिभावकों या दोस्तों के प्रतिरोध के बावजूद एक वर्ष के समय में ही बड़ी संख्या में बच्चों में बदलाव आया और बच्चों ने आस-पास के लोगों को भी बदलने के लिए प्रेरित किया।

बदलती आदतें और छोटी-छोटी पहल

स्कूल की मेज़ पर अपने नाम का पहला अक्षर कुरेदकर मेज़ को ख़राब करना, पानी की बर्बादी आदि जैसी छोटी-छोटी अवांछनीय आदतों के बने रहने ने साल भर की मेहनत के बाद मुझे निराशा में डाल दिया था। एक दिन मैं खिन्न हो यह सोचते हुए कक्षा के बाहर जा रही थी कि मैं बुरी तरह विफल हो गई हूँ, तभी CMCA क्लब के कुछ बच्चे दौड़ते हुए मेरे पीछे आए। "मैम, स्कूल के बग़ल में एक घर है जहाँ एक पाइप से बहुत सारा पानी बह रहा है। क्या हम जाकर उनसे इस बारे में कुछ करने को कह सकते हैं?" पहले तो मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। "हाँ ज़रूर, लेकिन विनम्रता से कहना और समूह में जाना।" उन्हें सलाह देकर मैं उनके लौटने की प्रतीक्षा करने लगी। लगभग दस मिनट बाद मैंने बहते पानी को रुकते हुए और बच्चों को विजयी मुस्कान के साथ लौटते हुए देखा। पूरे जोश के साथ उन्होंने मुझे बताया कि मकान मालिक पानी का पम्प चालू कर कहीं चले गए थे। वहाँ (सौभाग्य से) एक चौकीदार था, जिसे पम्प बन्द करने के लिए मनाने में वे कामयाब रहे। वैसे तो यह घटना छोटी-सी थी, पर उनमें युवा नागरिकों के रूप में अधिक सक्रिय होने की ज़रूरत को जगाने के लिए काफ़ी थी।

बच्चों की ऐसी छोटी पहलों के और भी कई उदाहरण हैं जिनसे फ़र्क़ पड़ा।

एक शादी में विमला ने देखा कि खाना खाने के बाद लोग हाथ धोकर नल खुला छोड़ रहे थे। वह वहीं खड़ी हो गई और सभी से अनुरोध किया कि हाथ धोने के बाद नल बन्द करें।

भावना ने अपने पिता को गाड़ी चलाते समय हेलमेट पहनने के लिए मना लिया।

श्रुति ने अपनी बड़ी बहन को ड्राइविंग लाइसेंस मिलने तक स्कूटर न चलाने के लिए मना लिया।

बीबी नाज़ ने अपने दोस्त को बालकनी से एक रैपर फेंकते देखा। उसने रैपर उठाया, उसे वापस अपने दोस्त के पास ले गई और सुनिश्चित किया कि वह फिर से इधर-उधर कूड़ा न डाले।

अब्दुल ने रात भर अपना फ़ोन चार्ज करना बन्द कर दिया और अपने माता-पिता को भी ऐसा करने के लिए मना लिया। कई बच्चों ने इस तरीक़े और बिजली बचाने के अन्य तरीक़ों को अपनाकर अपने मासिक बिजली बिल में 300 रुपए तक की बचत की!

कीर्ति ने एक बच्चे को मज़दूर के रूप में काम करते और उसे पिटते हुए देखा। उसने चाइल्ड हेल्पलाइन नम्बर (जो कि उसे याद था) पर कॉल किया और जब अधिकारियों ने बच्चे को बचाया तब उसे बहुत ख़ुशी हुई।

कोमल ने अपनी माँ के लिए कपड़े का शॉपिंग बैग सिला। उसकी माँ को न केवल अपनी बच्ची की कला पर बहुत गर्व है, बल्कि अब वह ख़रीददारी के लिए केवल उसी बैग का उपयोग करती हैं। इस प्रकार प्रभावी रूप से कोमल ने कम-से-कम एक व्यक्ति को प्लास्टिक बैग का उपयोग करने से रोका।

गणेश की मूर्तियों पर इस्तेमाल किए गए ज़हरीले पेंट के जल निकायों पर होने वाले भयानक प्रभाव से चिन्तित स्वाति ने गणेश उत्सव के दौरान मिट्टी की मूर्ति का इस्तेमाल किया। उसने मूर्ति को एक बाल्टी पानी में विसर्जित किया और फिर उस पानी का इस्तेमाल बग़ीचे में किया।

सन्तोष ने गत्ते का एक डिब्बा लिया और स्कूल में स्वतंत्रता दिवस के दौरान बाँटी गई टॉफ़ियों के बिखरे रैपर इकट्ठा करने लगा।

जब अनिल घर जा रहा था, उसने देखा कि दो आदमी कचरे से भरे प्लास्टिक के थैले लेकर घूम रहे हैं। वे फुटपाथ पर कूड़ा फेंकने वाले थे। हिम्मत जुटाकर अनिल ने उन्हें कूड़ा फेंकने से रोका और कहा, "यह तुम्हारा शहर है, ऐसा मत करो।" वे लोग शर्मिन्दा लग रहे थे और कचरा लेकर चले गए। अपनी सफलता से उत्साहित होकर अनिल ने कई और लोगों को सड़क पर कूड़ा फेंकने से रोका।

CMCA क्लब के बच्चों की सबसे बड़ी उपलब्धि शायद उनके स्कूल के बाहर स्पीड ब्रेकर और चेतावनी बोर्ड का निर्माण था। उनके स्कूल के पास बहुत तेज़ गति से वाहन आते-जाते हैं। इसके लिए उन्होंने एक ट्रैफिक पुलिस इंस्पेक्टर को मनाया जिसने कहा, "तुम बच्चे ख़ुद असुरक्षित रूप से सड़क पर दुपहिया वाहन चलाते हो।" इस पर बच्चों ने गर्व से जवाब दिया, "नहीं

सर, हम CMCA से हैं! हम कभी भी दोपहिया वाहन नहीं चलाते क्योंकि हमारे पास लाइसेंस नहीं हैं।" यह सुनकर गर्व से मेरी छाती फूल गई। स्पीड ब्रेकर बनाने के लिए पहले नगरपालिका प्राधिकरण और फिर बृहत बेंगलूरु महानगर पालिका (BBMP) के साथ बातचीत करना था। बच्चों ने आवेदन को कन्नड़ में साफ़-सुथरा लिखना (इसके लिए अधिकारी से प्रशंसा मिली) सीखा और स्पीड ब्रेकर के बनने तक अधिकारियों से बार-बार अनुरोध करने के लिए उनके कार्यालय का दौरा किया।

जैसा कि मैंने पहले बताया मैंने एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात देखी कि जब इन युवा, सक्रिय नागरिकों ने प्राथमिक विद्यालय के बच्चों को सलाह देना शुरू किया, उन्हें खाना बर्बाद न करना, इधर-उधर कचरा न करना आदि बुनियादी बातें सिखाईं, तो मैंने पाया कि परिणाम बड़े बच्चों की तुलना में बहुत बेहतर और तेज़ी-से आए। मैंने एक छोटे बच्चे को दूसरे से कहते सुना, "अरे, अपनी पेंसिल को कूड़ेदान के बाहर मत छीलो, फ़र्श गन्दा हो जाएगा। क्या आपने अक्का को यह कहते हुए नहीं सुना कि पेंसिल कहाँ छीलनी है?" छोटे बच्चों में शिक्षक और बड़ों को मान करने की प्रवृत्ति होती है, इसलिए जैसा वह कहें वैसा करना अच्छी नागरिकता के मूल्यों को विकसित करने में फ़ायदेमन्द हो सकता है।

चार्ल्स किंग्सले की किताब *वाटर बेबीज़* से ली गई एक बुनियादी अवधारणा को केन्द्र बिन्दु के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है : "वैसा ही करें, जैसा आप अपने साथ होता देखना चाहते हैं।" बच्चों से उनके कार्यों पर चिन्तन करवाने के लिए हमें उनसे पूछना चाहिए कि वे कैसा महसूस करेंगे। उदाहरण के लिए, अगर किसी और ने बाथरूम को गन्दा छोड़ दिया या उनके गेट के बाहर कचरा फेंक दिया। छोटे बच्चों के लिए ध्यान से करने और शिक्षकों के लिए स्कूल में चर्चा करने के लिए कुछ बुनियादी गतिविधियाँ इस प्रकार हो सकती हैं :

- ब्रश करते समय नल को बन्द रखना (और परिवार के अन्य सदस्यों को भी ऐसा करने के लिए कहना)।
- घर में ज़रूरत न होने पर पंखे या लाइट बन्द करना।
- अभिभावकों और बड़े भाई-बहनों से अनुरोध करना कि वे अपने इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को रात भर चार्ज न करें।
- यह सुनिश्चित करना कि कूड़े को अलग-अलग कर नगर निगम के कर्मचारी को सौंप दिया जाए और सड़क पर या ख़ाली जगहों पर कूड़ा न फेंका जाए।
- सड़क या फ़र्श पर मिठाई या नाश्ते के रैपर नहीं फेंकना; उन्हें केवल कूड़ेदान में ही डालना।
- घरेलू सहायक और नगर निगम के कर्मचारियों सहित सभी से इज़्ज़त से बात करना।
- गर्मियों में एक छोटे बरतन में पक्षियों के लिए पानी रखना।
- माता-पिता को घर से बाहर निकलने से पहले, ख़रीददारी के लिए कपड़े का बैग ले जाने की याद दिलाना— इसे कोविड उपयुक्त व्यवहार तक बढ़ाया जा सकता है। सभी को घर से निकलने से पहले मास्क पहनने और लौटने पर हाथ धोने के लिए याद दिलाना।
- बड़े भाई-बहनों से बिना लाइसेंस के मोटर वाहन न चलाने और दोपहिया वाहन चलाते समय हेलमेट पहनने का अनुरोध करना।

ऐसी कई गतिविधियों के बारे में सोचा जा सकता है। इसके अलावा छोटे बच्चों को ख़ुद को अभिव्यक्त करने और अपने अनुभवों के बारे में बात करने के लिए प्रोत्साहित करने से मिडिल स्कूल में पहुँचते-पहुँचते बच्चे और अधिक आत्मविश्वासी बन जाएँगे। जब तक यह छोटे बच्चे किशोरावस्था में पहुँचें, तब तक उनमें नागरिकता की सही प्रवृत्तियाँ और आदतें शामिल हो जाएँ।

**बच्चों की पहचान छिपाने के लिए उनके नाम बदल दिए गए हैं।*

राधिका राजनारायण एंडोक्रोनोलॉजी में स्नातकोत्तर हैं। उन्होंने व्यवसाय प्रबन्धन में डिप्लोमा भी लिया है। वे राडेल इलेक्ट्रॉनिक्स प्राइवेट लिमिटेड की सह-संस्थापक और निदेशक (बिक्री और विपणन) हैं। नागरिक मुद्दों और युवाओं में नागरिकता मूल्यों को विकसित करने में उनकी ख़ासी दिलचस्पी है। राधिका शास्त्रीय भारतीय संगीतकार हैं। एक वरिष्ठ वीणा वादक के रूप में उन्होंने संगीत समारोहों और रेडियो और टेलीविज़न पर कार्यक्रम प्रस्तुत किए हैं। वे बुज़ुर्गों की देखभाल में भी माहिर हैं और उन्हें इस क्षेत्र में दो दशकों का समृद्ध अनुभव है। उनसे radhika.r2@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

समाज को लौटाना

समीरा वास

जब समूह में नागरिकता शिक्षा पर एक लेख लिखने की ख़बर आई, तो मैं इस बारे में सोचने लगी। जल्द ही मुझे एक मेंटर मिले जिन्होंने मुझे *'द बास्टियन' (Bastion)* में छपे एक लेख के माध्यम से अपेक्षित जानकारी देते हुए समझाया। लेख स्कूलों में नागरिक शिक्षा और हमारे देश में पाठ्यचर्या बनाम वास्तविकता के अन्तर पर केन्द्रित था। इस लेख ने निश्चित तौर से नागरिकता शिक्षा पर मेरी समझ बनाई, लेकिन मैं अभी भी यह नहीं समझ पा रही थी कि यह सामान्य तौर पर हमारी ज़िन्दगी से कैसे जुड़ा है।

ऐसा लग रहा था कि पूरी कायनात मुझे नागरिक शिक्षा के बारे में और जानने के लिए आगे बढ़ा रही थी। अगले ही दिन मुझे एक कक्षा में बैठने का मौक़ा मिला। उस कक्षा में एक प्रसिद्ध शिक्षिका कक्षा सातवीं के बच्चों को कर्नाटक के एक क्रान्तिकारी 'मायलारा महादेवप्पा' (जिन्होंने अँग्रेज़ी शासन के खिलाफ़ संघर्ष किया था) के बारे में पढ़ा रही थीं। मुझे इन शिक्षिका से कई बार मुलाक़ात करने का मौक़ा मिला है। उनके पास कहानियों और उपमाओं का प्रचुर भण्डार है। उन्होंने बताना शुरू किया कि जब मायलारा ने अँग्रेज़ों द्वारा निर्मित टोपी पहनी तो उन्हें विदेशी जैसा एहसास हुआ और उन्होंने तुरन्त टोपी उतारकर फेंक दी। फिर वे विदेशी और स्वदेशी के बारे में समझाने लगीं। इसके बाद उन्होंने बच्चों को एक पौधा उगाने, उसका पालन-पोषण करने, उसकी देखभाल करने और अन्त में उससे एक सुन्दर फूल को खिलते हुए देखने की कल्पना करने को कहा।

शिक्षिका स्वदेशी की भावना के साथ आने वाली अपनेपन की भावना पर रोशनी डालना चाहती थीं। उन्होंने बच्चों से यह बताने के लिए कहा कि वे ख़ुद से उगाए हुए फूलों के मुक़ाबले बाज़ार से ख़रीदे गए फूलों के बारे में क्या महसूस करते हैं।

इसके बाद शिक्षिका ने ज़िम्मेदारी की परिभाषा समझाने के लिए एक और कहानी का उपयोग किया। यह कहानी ऐसी थी जिससे हर कोई जुड़ सकता था। उन्होंने एक आदमी के बारे में बताया जिसने भारत के एक सरकारी स्कूल में पढ़ाई की, लेकिन अन्त में बेहतर जीवन जीने के लिए किसी दूसरे देश चला गया। इसके बाद उन्होंने विद्यार्थियों से पूछा कि क्या वह किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जिसने देश के संसाधनों का भरपूर इस्तेमाल किया हो, लेकिन बदले में कुछ वापिस नहीं दिया। शिक्षिका ने हरेक विद्यार्थी को एक बच्चे के रूप में, एक भाई-बहन के रूप में और एक विद्यार्थी के रूप में अपने अभिभावकों के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी के बारे में सोचने के लिए कहकर कक्षा समाप्त कर दी।

लेकिन कक्षा यहीं समाप्त नहीं हुई। बच्चे आगे आए और उन्होंने अपनी शिक्षिका को बाथरूम जाने, उनकी थाली साफ़ करने, लंच बॉक्स खोलने और दूसरी कक्षा में जाने से पहले हर ज़रूरी सामान जुटाने में उनकी मदद की। यह बात बिना सन्दर्भ के थोड़ी अजीब लग सकती है—दरअसल वह शिक्षिका विकलांग हैं और उन्हें एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मदद की ज़रूरत पड़ती है। हैरानी की बात यह है कि उनकी कक्षा के बच्चों को उनकी मदद करने के लिए कभी भी विशेष रूप से नहीं कहा जाता। वे अपनी मर्ज़ी से आगे आते हैं और बारी-बारी से अपनी शिक्षिका की बहुत ही व्यवस्थित तरीक़े से मदद करते हैं।

इन शिक्षिका ने कई पुरस्कार जीते हैं। उनकी एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वह जो करने को कहती हैं, उस पर ख़ुद भी अमल करती हैं। और ऐसा वह इस तरह से करती हैं जिससे दूसरों को अच्छा करने और बेहतर जीवन जीने की प्रेरणा व प्रोत्साहन मिले। शिक्षिका के सेवानिवृत्त होने में अभी सात महीने बाक़ी हैं। उन्होंने सेवानिवृत्ति के बाद अपने गृहनगर जाकर अपने बचपन के विद्यालय में काम करने की योजना बनाई है। वह बताती हैं कि उनके गृहनगर में स्थित सौ साल पुराने उस विद्यालय के प्रति उनकी एक ज़िम्मेदारी है, क्योंकि आज वह जो भी हैं उसी विद्यालय के कारण हैं। इसलिए वह अपने शिक्षकों, गृहनगर और समुदाय की बहुत एहसानमन्द हैं।

यह शिक्षिका हमेशा मुझे एक इन्सान से कुछ ज़्यादा बनने के लिए प्रेरित करती हैं। उनमें भाषा, गणित और सामान्य बातचीत द्वारा अपने विद्यार्थियों में अच्छे मूल्यों को पैदा करने की क्षमता है। मैंने देखा कि अच्छे मूल्यों के होने से किस तरह बच्चों के व्यवहार में बदलाव आते हैं, जो आगे चलकर उनके सीखने की प्रक्रिया को एक सकारात्मक दिशा देते हैं। उनकी कक्षा में बच्चे समानुभूति रखने वाले, समस्याओं को हल करने वाले व मुखर हैं। वे साथ मिलकर काम करते हैं और उन्हें उनकी कक्षा में पढ़ने में मज़ा आता है। इन बच्चों

के पास एक ऐसी रोल मॉडल हैं जो वही करती हैं, जिसे वह दूसरों को करने को कहती हैं। ज़िम्मेदारी, ईमानदारी, समाज में अपना योगदान देना जैसे शब्दों को सिखाना अधिक प्रभावी तब ही होगा जब आप इन्हें बच्चों के लिए प्रासंगिक बनाकर, भावनाओं से जोड़कर और सबसे महत्त्वपूर्ण बात कि रोज़ाना आप जो दूसरों को करने को कहते हैं उस पर धैर्यपूर्वक और ख़ुशी-ख़ुशी अमल करके उन्हें सिखाएँ।

समीरा वास ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बेंगलूरु में स्रोत व्यक्ति के तौर पर कार्यरत हैं। उन्हें रचनात्मक कलाएँ और बच्चों के साथ काम करना पसन्द है। वह बच्चों के साथ काम करने और उनके मन को समझने के लिए रचनात्मक तरीक़ों को खोजने के गहन प्रयास में लगी हुई हैं। उनसे sameera.vasa@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

हमने यह नियम बनाया था कि शिक्षक सहित, हर कोई बोलने के लिए अपनी बारी का इन्तज़ार करेगा, अपना हाथ उठाएगा, और जब कोई और बोल रहा हो तो बीच में टोकेगा नहीं। हर एक की बात सुनी जाएगी और अगर विचारों में मतभेद हों तो हम कारणों को सुनेंगे और बच्चों को तय करने देंगे कि वे एक-दूसरे से सहमत होंगे या नहीं। इस प्रणाली से उन विद्यार्थियों को मदद मिली जो सोचते थे कि वे सब कुछ जानते हैं और हमेशा पहले उत्तर देते थे। अब उन्होंने अपनी बारी का इन्तज़ार करना, दूसरों की राय का सम्मान करना और अपनी ग़लतियों को स्वीकार करना सीखा।

- पूजा विश्नोई, स्कूल : समाज का एक लघु रूप, पेज 77

स्कूल एक समावेशी स्थान के रूप में | मेरे अनुभव

सुहैल हमीद

चलिए, हम अपने बारे में सोचते हैं। हम अपने परिवार में शिक्षार्थियों की किस पीढ़ी से आते हैं? इस सवाल का जवाब हमारे सामाजिक विशेषाधिकारों को पहचानने का एक तरीक़ा है। जाति की पदानुक्रमित सामाजिक व्यवस्था ने ऐतिहासिक रूप से ऐसे कई समुदायों को हाशिए पर डाल दिया है, जो सत्ता संरचना के मामले में नाम मात्र की संख्या में मौजूद हैं। समुदायों और उनके सामाजिक विशेषाधिकारों को राज्य की विभिन्न संस्थाओं में उनके प्रतिनिधित्व के माध्यम से भी देखा जा सकता है। साथ ही, शिक्षण संस्थानों के स्तर पर ही इस भारी अन्तर की जड़ों का पता लगाया जाना चाहिए और इसे ठीक किया जाना चाहिए।

इस लेख में मैं कुछ ऐसी घटनाओं पर विचार करने की कोशिश कर रहा हूँ जो मैंने 2019-2020 के बीच अपने स्कूली कार्यों के दौरान देखीं। साथ ही यह भी विचार करने की कोशिश है कि यह घटनाएँ किस प्रकार सामाजिक रूप से वंचित समुदायों के विद्यार्थियों के जीवन को दर्शाती हैं। नीचे दी हुई घटना मेरे एक स्कूल दौरे के समय हुई।

शिक्षक कक्षा में अलग-अलग व्यवसायों पर चर्चा कर रहे थे। उन्होंने विद्यार्थियों से पूछा कि उनके पिता और भाइयों के व्यवसाय क्या हैं।

“सर, मेरे पापा खेती करते हैं।”

“सर, मेरे भाई ट्रैक्टर चलाते हैं।”

कक्षा के विभिन्न हिस्सों से दुकानदार, निर्माण मज़दूर, पेंटर, चावल मिल के मज़दूर जैसे जवाबों की झड़ी लग गई।

“तो, होता कुछ इस तरह है कि पुरुष घर चलाने के लिए अलग-अलग काम करते हैं”, शिक्षक ने कहा।

एक बच्चे ने कहा, “सर, मेरे पापा मछली पकड़ते हैं।”

अब उन शिक्षक की ओर से सबसे अप्रत्याशित प्रतिक्रिया आई। “हाँ, ऐसे भी लोग हैं, जो इस तरह के काम करते हैं। लेकिन तुम्हारे लोग यह काम करते हैं, दूसरे नहीं।”

प्राथमिक विद्यालय के बच्चों के सामने सामाजिक पदानुक्रम पर एक लोकसेवक को ऐसी टिप्पणी करते देखना चौंकाने वाली बात थी। मुझे नहीं लगता कि शिक्षक ने जो कहा था, उससे वह अनजान थे।

मैंने एक साल के लिए एक स्कूल में एक एसोसिएट के रूप में काम किया। यह क्षेत्र धान के खेतों से घिरा हुआ था और गाँव के बीचोंबीच एक नहर बहती थी। यह नहर थेली-चन्द्राकर (अन्य पिछड़ा वर्ग समुदाय) बस्तियों को सतनामी-बस्ती (जिसमें ज़्यादातर लोग अनुसूचित जाति समुदाय से हैं) से अलग करती है। हालाँकि जिन लोगों से मैंने बात की उन्होंने गाँव में जाति प्रथा और अलगाव के होने की बात को ख़ारिज कर दिया, पर समुदायों की बस्तियों की भौगोलिक स्थिति ख़ुद ही इसके अस्तित्व की पुष्टि करती है।

इस गाँव में दो प्राथमिक विद्यालय हैं। एक नहर के उत्तरी भाग (सतनामी बस्ती के पास) में और एक उसके दक्षिणी भाग में (जहाँ अन्य पिछड़ा वर्ग के अधिकांश लोग रहते थे)। मैंने इनमें से दूसरे स्कूल में काम किया। गाँव के सभी हिस्सों से विद्यार्थी इस स्कूल में आते थे, लेकिन सतनामी बस्ती के विद्यार्थियों की संख्या बहुत कम थी और विद्यार्थियों के कक्षा में बैठने का तरीक़ा ही बहुत कुछ बताता था।

कक्षा पहली और दूसरी में एक लड़की और दो लड़के आमतौर पर एक साथ बैठते थे। वह शर्मीले-से थे और किसी से ज़्यादा मिलते-जुलते नहीं थे। बस आँखें चुराए कक्षा के एक कोने में बैठे रहते थे। वह पड़ोसी थे, जो गाँव के एक ही हिस्से से आते थे।

फिर एक दिन कुछ ऐसा हुआ। रानी कक्षा में कुछ देर से आई और दूसरी पंक्ति में बैठ गई। ज़्यादातर विद्यार्थी तब तक बैठ गए थे। एक लड़का जो रानी के बग़ल में बैठा था उसने विरोध जताया। वह नहीं चाहता था कि रानी वहाँ बैठे। उसने रानी को पिछली पंक्ति में बैठने के लिए कहा, जहाँ वह आमतौर पर बैठती थी। यह एक ऐसा सवाल है जो हम सभी को पूछना चाहिए कि वंचित पृष्ठभूमि के बच्चे हमेशा कक्षा के कोने में बैठे क्यों पाए जाते हैं? रानी ने शायद इस प्रतिक्रिया की उम्मीद नहीं की थी। मैं नहीं जानता कि उसने अपना स्थान किस वजह से बदला। मैं चुपचाप देखता रहा; मैं देखना चाहता था कि आगे क्या होगा। लड़के के शब्दों में अनुरोध नहीं, धमकी थी। रानी ने विरोध नहीं किया और अपने स्थान से उठने लगी। तभी मैंने कक्षा के सुगमकर्ता के रूप में हस्तक्षेप किया। मैंने रानी को स्थान बदलने से मना कर दिया। लड़के ने मेरा भी विरोध

जताया। मैंने लड़के से पूछा कि रानी को वहाँ से क्यों हटना चाहिए, तो उसके पास कोई जवाब नहीं था।

फिर सबसे बुरा हिस्सा आया। लड़के ने रानी के पास न बैठने का मन बना लिया था। उसने आमतौर पर रानी के बग़ल में बैठने वाले लड़के से अपने साथ जगह बदलने को कहा।

रानी बेहद वंचित पृष्ठभूमि से आती है। वह कई बच्चों वाले एक टूटे-फूटे घर में रहती है और परिवार में सबसे छोटी है। उसके शिक्षकों ने मुझे बताया कि पिछले साल उसने पहली कक्षा में दाख़िला लिया था, लेकिन पूरे साल मुश्किल से वह छह या सात दिन स्कूल आई। इस साल उसकी बहन, जो उसे शिक्षित करना चाहती थी, ज़ोर देकर उसे स्कूल लाई। उसकी बड़ी बहन ने कक्षा सातवीं के बाद पढ़ाई छोड़ दी थी और वही सभी भाई-बहनों का ख़याल रखती थी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 कहती है, "U-DISE 2016-17 के आँकड़ों के अनुसार प्राथमिक स्तर पर क़रीब 19.6% विद्यार्थी अनुसूचित जाति के होते हैं, लेकिन उच्चतर माध्यमिक स्तर पर यह हिस्सा घटकर 17.3% रह जाता है। अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों (10.6% से 6.8%) और विकलांग बच्चों (1.1% से 0.25%) के नामांकन में गिरावट ज़्यादा गम्भीर है। इन श्रेणियों में से प्रत्येक में महिला विद्यार्थियों की संख्या में गिरावट और भी ज़्यादा है। उच्च शिक्षा में नामांकन में गिरावट और भी तेज़ी-से होती है।" (मंत्रालय, 2020)

भारत के कई अन्य स्कूलों की तरह इस स्कूल के विद्यार्थी भी विभिन्न सामाजिक और पारिवारिक पृष्ठभूमियों से आते हैं। वह जिस तरह चीज़ों को समझते हैं, सीखते हैं, होमवर्क करते हैं, कक्षा में सोते हैं, उनके कपड़े, गन्ध, बातें आदि सब उनके रहने के निकटतम परिवेश और जिस तरह उन्हें जीने के लिए अनुकूलित किया जा रहा है उस पर निर्भर करता है। एक छोटी-सी लड़की अपने प्रारम्भिक बचपन में रोज़ाना स्कूल आने से बेहतर और क्या कर सकती है? भले ही वह अपने साथियों की तुलना में सीखने के स्तर में बहुत पीछे है। इस बारे में एक शिक्षक ने कहा, "सर, वह स्कूल आ रही है, यही अपने आप में बड़ी बात है।"

इस बहिष्कार के अलग-अलग कारण हो सकते हैं। पिछले साल जब वह ज़्यादातर समय अनुपस्थित रही उस दौरान उसकी कक्षा के विद्यार्थी एक-दूसरे को जानने लग गए थे। उन विद्यार्थियों के घर एक-दूसरे के पास हैं और वे स्कूल के बाद भी एक-दूसरे से मिलते हैं। वे अलग-अलग त्यौहार एक साथ मनाते हैं। लेकिन रानी का मामला अलग है। वह गाँव के दूसरे छोर से आती है। सिवाय उन दो लड़कों के जो उसी के समुदाय के हैं, कक्षा में कोई और उस छोर से नहीं आता है। मैं अब इसे आप पर छोड़ता हूँ कि दुनिया में सबसे ज़्यादा संरचित और कार्यात्मक असमानता, लेकिन एक सुस्थापित परम्परा जाति को कैसे समझा जाए।

फिर, बाल दिवस, 14 नवम्बर को, कुछ ऐसा हुआ। दिन मस्ती और खुशियों से भरा हुआ था। कबड्डी खेलने के लिए लड़कों को चार समूहों में बाँटा गया था। शिक्षक ने कहा, "हम लड़कियों के लिए रुमाल उठाने के खेल का आयोजन करेंगे।" लड़कियों को भी चार टीमों में बाँटा गया था। यह खेल कुछ इस प्रकार खेला जाता है : गोले के बीच में एक रुमाल रखा जाता है और टीम के प्रत्येक सदस्य को एक संख्या दी जाती है। दूसरी टीम के खिलाड़ियों को भी वही संख्याएँ दी जाती हैं। जैसे ही रेफरी कोई एक संख्या बोलता है, तो दोनों टीमों की उस संख्या वाले खिलाड़ी को दौड़कर रुमाल उठाना होता है। जो भी खिलाड़ी पहले रुमाल उठा लेता है, वह अपनी टीम के लिए एक अंक जीत जाता है और अन्त में जो टीम ज़्यादा अंक पाती है वह जीतती है।

रानी ने खेल का हिस्सा बनने की कोशिश नहीं की। हमें उसे खेल में शामिल होने के लिए मजबूर करना पड़ा। खेल आगे बढ़ा और एक टीम जीत गई। उसके बाद शिक्षक ने स्पीकर के माध्यम से एक गीत बजाया। वह एक बहुत ही जाना-पहचाना लोकप्रिय छत्तीसगढ़ी गीत था। लड़कियों को जोड़ियों में इस पर नृत्य करना था। रानी को गाने को समझने और नृत्य करने में दिक़्क़त हो रही थी। फिर मैंने उस लम्हे को देखा जब उसकी सहपाठी लाली ने उसका हाथ थाम लिया और उसके साथ गाने की थाप पर नृत्य करने लगी। मैंने रानी के चेहरे पर एक ख़ास तरह की मुस्कान देखी। उसे यूँ मुस्कराते हुए देखना एक ख़ूबसूरत पल था। यह मेरा अब तक का सबसे अच्छा बाल दिवस था।

जैसे-जैसे दिन बीतते गए, मैंने देखा कि विद्यार्थी कक्षा के कार्यों में और ज़्यादा सक्रिय हो गए। इसके साथ ही मैंने शिक्षकों की बदली हुई चिन्ता और समानुभूति को भी देखा। हम प्रत्येक बच्चे, उनके सीखने के स्तर, उनकी पृष्ठभूमि उनके सीखने को कैसे प्रभावित कर रही थी और मदद के लिए हम क्या कर सकते हैं, ऐसी चीज़ों के बारे में लम्बी बातचीत किया करते थे।

इस मिश्रित समूह को ध्यान में रखते हुए मैंने हमेशा अपनी पाठ-योजनाओं को अधिक एकीकृत, समावेशी और मनोरंजक बनाने की कोशिश की। हमने एक सप्ताह तक विद्यार्थियों के नामों को लेकर अलग-अलग गतिविधियाँ कीं। यह मज़े से भरपूर था और आख़िरी दिन हमने एक पहेली के खेल की योजना बनाई। कमरे के एक तरफ़ पहेली बनाई गई थी और दूसरी तरफ़ अक्षर कार्ड रखे हुए थे।

1… 2… 3… शिक्षक ने सीटी बजाई।

अयान, मनु, वासु, निम्मी, हेमा और कृष अक्षर कार्डों को इकट्ठा करने के लिए दौड़ पड़े और फिर उन अक्षरों को अपनी पहेली पर जमाने वापिस दौड़े। लेकिन मनु को अक्षर नहीं मिले।

वह खोजता रहा, जबकि उसके दोस्त इधर-उधर भाग रहे थे। पहेली पूरी करने के बाद कृष चिल्लाया, "मैं जीत गया, मैं जीत गया!"

दूसरे बच्चों ने भी ऐसा ही किया। फिर उन्होंने देखा कि मनु कोने में उदास बैठा है। कृष और वासु उसकी पहेली के अक्षरों को खोजने लगे और उसे पूरा भी किया। फिर वे चिल्लाए, "मनु जीत गया, मनु जीत गया!"

मैं ख़ुद अपने पुराने विचारों को तोड़ते-मरोड़ते और भूलते हुए उनसे रोज़ाना नई चीज़ें सीखा रहा था। उन्होंने मुझे सिखाया कि *समावेश* की शुरुआत *अन्त:क्रिया* से होती है, ख़ासकर बच्चों के मामले में। समावेश एक साथ रहने और एक-दूसरे की मदद करने की एक महीन परत है।

सुहैल अब्दुल हमीद छत्तीसगढ़ में धमतरी ज़िले के नगरी ब्लॉक में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ एसोसिएट रिसोर्स पर्सन हैं। उन्होंने जामिया मिल्लिया इस्लामिया से स्नातक और पुदुचेरी विश्वविद्यालय से राजनीतिविज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की है। सुहैल ने बच्चों के आर्ट रूम प्रोजेक्ट में कोच्चि-मुज़िरिस-बियनेल के साथ वालंटियर के रूप में काम किया है। उनसे suhail.hameed@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : सात्विका ओहरी

लैंगिक पहचान के बारे में जागरूकता जल्दी शुरू हो जाती है, इसलिए हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि लैंगिकता द्विआधारी नहीं बल्कि एक विस्तार है। अपनी कक्षाओं में बच्चों से लैंगिक भूमिका और व्यवहार की अपेक्षाएँ निर्धारित न करें। बल्कि, कहानियों में निरूपित लैंगिकता भूमिकाओं को चुनौती दें और विद्यार्थियों को अपनी धारणाओं और विचारों की पड़ताल करने में मदद करें।

- प्रिया कृष्णमूर्ति, कनिष्ठ नागरिकों का निर्माण करना - पाँच सामान्य रास्ते, पेज 87

रंगमंच के माध्यम से गांधीवादी मूल्यों की खोज

ऊषा प्रीसिला एम्ब्रोस

गांधीजी की 150वीं जयन्ती के समारोह के दौरान हमने स्कूली बच्चों और शिक्षकों के साथ रचनात्मक रूप से जुड़ने और उन्हें यह अनुभव देने की योजना बनाई कि गांधीजी का जीवन कैसा था और किन विचारों और मूल्यों में उनका गहरा यक़ीन था। हमने इसे दर्शकों के लिए मंच पर अभिनीत करने का फ़ैसला किया। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के फील्ड सदस्यों और टीचर्स थिएटर ग्रुप, कोप्पल के सदस्यों के साथ नन्दीश कुमार ने इस कार्यक्रम की कल्पना की।

गांधीजी के जीवन से सीख लेने में बच्चों की रुचि जगाने हेतु हमने सबसे पहले स्कूलों में एक एकदिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया। चार छोटे नाटकों में अभिनय करने के लिए बच्चों की चयन प्रक्रिया भी अनूठी थी। सभी उच्च प्राथमिक स्कूल के बच्चों को इकट्ठा होने के लिए कहा गया और हमने पहले उन्हें कुछ ऐसे सरल, मनोरंजक खेलों में लगाया जिसमें सभी बच्चे भाग ले सकें। इसके बाद बच्चों की राय लेकर नाट्य समूह बनाए गए।

बच्चे भले ही कक्षा में जाने से चूक जाते, लेकिन वे नाटक की रिहर्सल में आने से कभी नहीं चूकते। वे गांधीजी की भूमिका निभाने के लिए बड़े ही जोश के साथ एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रहे थे। यहाँ तक कि गांधीजी की भूमिका पाने के लिए वे अपना सिर मुँडवाने के लिए भी तैयार थे। अभ्यास करने के लिए वे सुबह स्कूल की घण्टी बजने के पहले ही टीचर लर्निंग सेंटर (टीएलसी) में भीड़ लगा देते और शाम होने के बाद भी सेंटर से जाने के लिए राज़ी नहीं होते थे। शिक्षकों और हम सभी ने महसूस किया कि गांधी नाट्य महोत्सव के लिए नाट्य अभ्यास सत्र सभी बच्चों को बड़े मज़े से, मिलकर काम करने और सीखने का एक उत्कृष्ट अवसर प्रदान कर सकते हैं। हम उनके साथ घुल-मिल गए और स्नेह के साथ बातचीत की जिससे वे स्वाभाविक रूप से ख़ुद को अभिव्यक्त करने में सक्षम हुए। हमने महसूस किया कि रंगमंच बच्चों के स्वेच्छा से, ख़ुशी-ख़ुशी गहन विषयों को सरलतम तरीक़े से सीखने और उनमें संवेदनशीलता पैदा करने का एक उत्कृष्ट माध्यम है। इस प्रकार सीखने की प्रक्रिया केवल बच्चों तक ही सीमित नहीं थी; हम सभी जो उनके साथ काम कर रहे थे, उन्होंने भी उनसे नई चीज़ें सीखीं।

हमने बच्चों के साथ नाटकों के विषय और सन्दर्भ पर चर्चा की। गांधीजी के बारे में उनके पास जो जानकारी थी, उन्होंने उसे साझा किया। जब हमने उन्हें आज की दुनिया में गांधीजी की प्रासंगिकता और उनके द्वारा किए गए कार्यों के बारे में बताया तो बच्चे मंत्रमुग्ध हो गए। वे यह सुनकर हैरान रह गए कि दक्षिण अफ़्रीका में एक नाई ने उनका अपमान किया और कहा कि वह एक 'काले आदमी' के बाल नहीं काटेगा। इन घटनाओं को सुनते हुए बच्चे नाटकों के संवादों को अपनी रोज़मर्रा की भाषा में गढ़ते गए।

हमने इस बारे में बात की कि कैसे बैरिस्टर होते हुए भी गांधीजी कपड़ा बनाने के लिए सूत कातते, सादा खाना खाते, बदन ढँकने के लिए कपड़े के सिर्फ़ दो टुकड़े इस्तेमाल करते और अपना सारा काम ख़ुद ही करते थे। वह हमेशा देश में बनी और उत्पादित चीज़ों का ही इस्तेमाल करते और उनके पास बहुत कम सम्पत्ति थी। उनका सन्देश था कि सभी से प्रेम करें, दूसरों की चिन्ता करें, सबको माफ़ करें और कभी किसी को दुख न पहुँचाएँ। हमारे पर्यावरण और स्वच्छता के प्रति उनकी चिन्ता और इस तरह के कई अन्य विवरण बच्चों द्वारा अपने लघु नाटकों के माध्यम से अभिनय कर दिखाए गए।

बच्चों पर प्रभाव

मलाया, सरकारी उच्च प्राथमिक विद्यालय (जीएचपीएस), गैबर का एक नन्हा बालक है। उसने एक नाटक में अभिनय किया था। उस समय तक उसे विज्ञान परियोजनाओं में कोई दिलचस्पी नहीं थी। नाटक में भाग लेने से उसका आत्म-सम्मान बढ़ा और उसने अपनी कक्षा की परियोजनाओं को पूरा करना और उन्हें अपने शिक्षकों को दिखाना शुरू कर दिया। उसने कार्यों को समझने पर भी अधिक ध्यान देना शुरू कर दिया और उन्हें पूरा करने का प्रयास करने लगा। इसी तरह एकदम शान्त रहने वाली रत्ना भी अब विश्वास के साथ कक्षा में अपनी बात रखने लगी है। चुपचाप रहने वाले सोहेल सहित कई बच्चों ने नाटकों में अभिनय के परिणामस्वरूप आत्मविश्वास के साथ अपनी राय व्यक्त करना शुरू कर दिया, ख़ासकर तब से, जब से उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दृश्यों में भाग लिया।

आठवीं कक्षा का छात्र फैज़ल सीखने में कठिनाई के कारण कक्षा में पिछड़ गया था और सभी गतिविधियों से दूर रहना

पसन्द करता था। वह काफ़ी झिझक के बाद नाटक में भाग लेने के लिए तैयार हुआ था। इसके बाद उसने स्कूल के एक नाटक में भी काफ़ी अच्छा प्रदर्शन किया और दूसरे बच्चों ने ख़ुशी-ख़ुशी उसे स्कूल की नाटक मण्डली में शामिल कर लिया।

सरकारी बालकरा बालमन्दिर (महिला एवं बाल विकास विभाग के अधीन बालक गृह) से जीएचपीएस, सरदारगल्ली आने वाले बच्चे नाटक में सफ़ाईकर्मी की भूमिका निभा रहे बच्चे का मज़ाक उड़ाते। इससे वह लड़का निराश हो गया और उसने भूमिका निभाने से इन्कार कर दिया। लेकिन जैसे-जैसे रिहर्सल आगे बढ़ी और उसने इस भूमिका को बेहतर ढंग से समझा, उसे इस काम का महत्त्व समझ आया और उसने अपनी भूमिका को बख़ूबी निभाया।

जीएचपीएस, सरदारगल्ली के दो बच्चे गांधीजी की भूमिका के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे थे। निर्देशक ने कहा, "जिसे गांधीजी का रोल चाहिए वह अपना सिर मुँडवा ले।" दोनों इसके लिए तैयार थे। इस बीच उनमें से एक लड़का कुछ दिनों तक अनुपस्थित रहा। प्रदर्शन के दिन दोनों लड़के सिर मुँडवाकर पहुँच गए। फिर एक लड़के ने मना कर दिया और दूसरे को यह भूमिका निभाने का मौक़ा दे दिया। लेकिन निर्देशक ने यह सुनिश्चित किया कि दोनों को अलग-अलग दृश्यों में मंच पर गांधीजी की भूमिका निभाने का मौक़ा मिले। इन दोनों के साथ-साथ सफ़ाईकर्मी की भूमिका निभाने वाले लड़के को भी गांधीजी की भूमिका निभाने का अवसर मिला। एक ही नाटक में तीन अलग-अलग लड़कों ने गांधीजी की भूमिका निभाई।

शिक्षकों की प्रतिक्रियाएँ

शिक्षकों ने नाटकों की तैयारी की पूरी प्रक्रिया में बेहद रुचि और समर्पण के साथ सहयोग किया। कोप्पल कस्बे के सरदारगल्ली के जीएचपीएस में पढ़ने वाले सरकारी बालमन्दिर के लड़के पूरी आज़ादी के साथ अभिनय की पूरी प्रक्रिया में शामिल थे। बालमन्दिर के वार्डन आमतौर पर बच्चों को बिना पूर्व अनुमति के कहीं भी जाने नहीं देते थे, पर हमने जितनी बार उनसे अनुरोध किया, उन्होंने उतनी बार बच्चों को टीएलसी जाने की अनुमति दी। वे रिहर्सल के लिए बच्चों के साथ जाते और अपने बच्चों को अभिनय में तल्लीन होते देख बड़े ख़ुश होते। वे प्रदर्शन के दिन बालमन्दिर के सभी बच्चों को लेकर आए थे।

दयानन्द सागर, जो एक स्कूल में विज्ञान-शिक्षक हैं और एक नाटककार भी हैं, ने ख़ुशी-ख़ुशी साझा किया कि उनके स्कूल की सातवीं कक्षा की लड़कियाँ पहले किसी भी आयोजन के लिए मंच पर जाने में हिचकिचाती थीं, नाटक में भाग लेने के बाद ऐसा करने को लेकर उनकी घबराहट कम हुई है।

जीएचपीएस, निलोगीपुर के शिक्षक मुत्तुराज ने बताया कि नाटक में स्वच्छता के दृश्यों में अभिनय करने वाले बच्चे अपने आस-पास के वातावरण को साफ़ रखने को लेकर उत्सुक हैं। इसी स्कूल में बच्चों ने राष्ट्रीय अवकाश को सार्थक तरीक़े से मनाने के बारे में एक छोटा-सा व्यंग्य नाटक (skit) किया। इससे शिक्षकों को बच्चों को प्रत्येक राष्ट्रीय अवकाश और प्रमुख लोगों की जयन्ती की पृष्ठभूमि समझाने के महत्त्व का एहसास हुआ। नतीजतन, उन्होंने विशेष दिनों पर श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए राष्ट्रीय नेताओं के चित्र लगाने की प्रथा को छोड़ दिया और इसकी जगह इन दिनों के महत्त्व के बारे में बच्चों के साथ बातचीत करना शुरू कर दिया।

जीएचपीएस, हनुमनाहल्ली के प्रणेश पूजार याद करते हैं कि कैसे उनके स्कूल के बच्चे स्कूल परिसर में पौधों को पानी देना और सफ़ाई करना आदि जैसे काम करने के लिए स्वेच्छा से आगे आने लगे। बच्चे अक्सर उसका हवाला देते जो उन्होंने गांधी नाटक में किया और उत्साह के साथ गांधीजी के सबक़ दोहराते। उन्होंने बताया कि कैसे बच्चे कई दिनों तक नाटक के संवादों को ख़ुशी से दोहराते हुए स्कूल में घूमते रहते थे। बच्चों में इतना सकारात्मक बदलाव देखकर उन्होंने अपने विद्यार्थियों द्वारा एक और नाट्य प्रदर्शन शुरू करने की इच्छा भी जताई।

कुछ और सीख

हर रिहर्सल में हालाँकि दृश्य एक ही होते, लेकिन बच्चों के संवाद बदल जाते थे क्योंकि उन्होंने संवादों को रटा नहीं था। फिर भी बच्चों ने सन्दर्भ से अलग बात नहीं की। गांधीजी के जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को दर्शाने वाले विभिन्न दृश्यों के बारे में बच्चों की राय लेकर दृश्यों का परिचय कराते हुए पूरे नाटक को लिखा गया था। गांधीजी के जीवन के विभिन्न चरणों जैसे उनके बचपन, युवावस्था, शिक्षा, उनके पेशे और दक्षिण अफ़्रीका में संघर्ष, सत्याग्रह और जिन मूल्यों पर गांधीजी विश्वास रखते और जिनके लिए वह जीते थे उन्हें दृश्य रूप में बताने के बारे में व्यापक चर्चाएँ हुईं। बच्चे गांधीजी के व्यक्तित्व में अशिष्टतारहित सूक्ष्म दृढ़ता को समझ गए थे।

जिन बच्चों ने गांधीजी की तस्वीरें केवल स्कूल में, पाठ्यपुस्तकों और मुद्रा नोटों में देखी थीं और राष्ट्रीय समारोहों के दौरान दिए गए भाषणों में सुना था कि उन्होंने 'हमारे देश को आज़ादी दिलाई', वे नाटक प्रदर्शन के माध्यम से गांधीजी के जीवन और कार्य के वास्तविक सार का अनुभव कर पाए। साथ ही वह दर्शकों को भी यह बात बता पाए।

अगर कोई उनसे पूछता कि वे इन नाटकों का प्रदर्शन क्यों कर रहे हैं, तो बच्चे जवाब देते कि गांधीजी ने अपने जीवन के माध्यम से यह दर्शाया है कि उनके आदर्शों के साथ जीवन जीना सम्भव है और सभी को इन आदर्शों को समझना चाहिए और इनका अनुकरण करना चाहिए। बच्चे यह समझने में

सफल रहे कि शौचालय धोकर, ख़ुद के बाल काटकर गांधीजी ने दिखा दिया कि कोई भी काम हीन या श्रेष्ठ नहीं होता। और यह कि अहिंसा के माध्यम से भी हमारे अधिकारों की लड़ाई कम प्रभावी नहीं होती है।

कुछ प्रश्न जिन पर विद्यार्थियों और शिक्षकों ने चर्चा की, इस प्रकार हैं : गांधीजी ने अपने जीवन के माध्यम से क्या सन्देश दिए? इनमें से कौन-सा सन्देश उनका सबसे पसन्दीदा था? क्या बदलाव लाना मुश्किल है? यदि हाँ, तो क्यों?

लड़कों को घर के कामों से जोड़ने पर होने वाली चर्चा थोड़ी नई थी और इससे वह थोड़े असहज और हैरान हुए। यह देखना विशेष रूप से आकर्षक था कि बच्चे गांधीजी के सन्देशों और मूल्यों को सही ढंग से पहचानने में सक्षम थे। इस प्रक्रिया में विद्यार्थियों और शिक्षकों ने अफ़सोस के साथ स्वीकार किया कि अभी भी हमारे गाँवों में जाति और लिंग के नाम पर भेदभाव मौजूद है और उनका मानना था कि इसे मिटाने के लिए सभी को इस दिशा में प्रयास करना चाहिए।

आभार

रंगमंच कार्यकर्ता और मंगलूरु की लेखिका वाणी पेरिओडी ने इस प्रक्रिया में हमारी मदद की। उन्होंने नाटकों के लिए संसाधन सामग्री तैयार की और उपलब्ध भी कराई। उन्होंने चारों स्कूलों का दौरा किया और बच्चों से बातचीत की। रंगमंच कार्यकर्ता और कोप्पल के विस्तार थिएटर स्कूल के प्रधानाचार्य लक्ष्मण पिरागर ने इन नाटकों को तैयार करने में हमारी मदद की।

**बच्चों की पहचान छिपाने के लिए नाम बदल दिए गए हैं।*

ऊषा प्रीसिला एम्ब्रोस अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ एक दशक से अधिक समय से काम कर रही हैं। वह ज़िला टीम, कोप्पल का नेतृत्व करती हैं। उन्होंने राजनीति विज्ञान में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। उन्हें वंचित समुदायों के साथ काम करने और महिलाओं को सशक्त बनाने का समृद्ध अनुभव है। उन्हें कलाकृतियाँ बनाने में आनन्द आता है। वे साहित्य, संगीत और घूमने में भी दिलचस्पी रखती हैं। उनसे usha.ambrose@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

बच्चे विद्यालय की संस्कृति अपना लेते हैं

विजयाश्री पी एस

यह अनुभव उन विद्यालयों में से एक का है जिनमें मैंने अपनी फेलोशिप के दौरान काम किया था।

एक क्लस्टर-स्तरीय मेले की योजना बनाई जा रही थी। एक फेलो के रूप में हमें कई विद्यालयों के साथ काम करना था और अपना ज़्यादातर समय वहाँ के शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ बिताना था। हमें गतिविधियाँ/खेल करवाने का प्रयास व उनका परीक्षण करना था। यह भी सुनिश्चित करना था कि शिक्षक भी इन माध्यमों द्वारा बच्चों से अनौपचारिक रूप से जुड़ें। शिक्षकों को सीखना था कि शिक्षार्थियों के साथ गतिविधियों के माध्यम से काम करने और अन्त:क्रिया करने पर सीखने-सिखाने की प्रक्रिया और प्रभावी हो सकती है। हमें उम्मीद थी कि मेले के अन्त तक यह सफ़र और अन्त:क्रिया व सीखने का यह अनुभव शिक्षकों व शिक्षार्थियों दोनों के लिए एक मिसाल क़ायम करेगा।

सहकर्मियों के बीच प्रतिद्वन्द्विता को 'कार्यस्थल प्रतिस्पर्धा' के रूप में देखना आम बात है। अगर थोड़े हल्के-फुल्के अन्दाज़ में देखें तो इसके कारण अक्सर समूह बनते हैं, जिनमें कुछ गपशप और हँसी-मज़ाक़ होता है। मुझे विद्यालय में आए दो ही दिन हुए थे जब मैंने देखा कि लंच के समय शिक्षक अपना-अपना लंच का डिब्बा लेकर दो समूहों में बँटकर अलग-अलग कमरों में चले गए। मैं उलझन में पड़ गई कि मैं किस समूह के साथ बैठूँ या अकेले ही बैठूँ। हैड मिस्ट्रेस ने मेरी उलझन देखी और मुझे अपने समूह (आइए हम इस समूह को *हैरी* कहते हैं) के साथ बैठने के लिए आमंत्रित किया। हमारे बीच बेंगलूरु के भोजन, संस्कृति और ट्रैफ़िक के बारे में अच्छी बातचीत हुई।

कुछ दिन बीत गए। मैं सभी शिक्षकों के साथ अच्छा तालमेल बना रही थी। तभी एक दिन दूसरे समूह (आइए इस दूसरे समूह को हम *पॉटर* कहते हैं) के एक शिक्षक ने मुझे उनके साथ लंच करने के लिए कहा। मैंने उत्साहपूर्वक यह प्रस्ताव स्वीकार किया और कुछ दिन उनके साथ लंच किया। मैंने पूरे समय दोनों समूहों के साथ अच्छा तालमेल बनाए रखा। यहाँ तक कि बीस दिनों तक दोनों समूहों के साथ लंच साझा करने के बाद भी मैंने इन दोनों समूहों में एक-दूसरे के बारे में कोई गपशप या बातचीत नहीं सुनी। मैंने यह भी देखा कि दोनों समूह एक-दूसरे के साथ अच्छे-से रहते और बाक़ी समय में एक-दूसरे के साथ हँसी-मज़ाक़ करते, शिक्षण-योजनाएँ और बच्चों के क़िस्से साझा करते थे।

फिर एक दोपहर जब मैं लंच के लिए *हैरी* समूह के साथ बैठी थी, हैड कुक, हैड मिस्ट्रेस के पास आए और बोले कि आज विद्यालय की रसोई में तैयार साँभर और ब्रर्फी बहुत स्वादिष्ट बनी है, तो क्या आप लोग कुछ लेना पसन्द करेंगे। हैड मिस्ट्रेस ने हैड कुक को कहा कि किसी विद्यार्थी के हाथों यह दोनों चीज़ें भिजवा दें। हैड कुक ने हामी भरी और चले गए। कुछ मिनटों बाद अचानक से एक शिक्षक ने दरवाज़े के क़रीब बैठे दूसरे शिक्षक को यह देखने को कहा कि कौन-सा विद्यार्थी भोजन लेकर आ रहा है और फिर धीरे-से बोले कि हैड कुक 'किसी को भी' कमरे के अन्दर भेज देंगे। अब तक मैंने उनकी बोली थोड़ी-थोड़ी सीख ली थी और किसी तरह यह समझ गई थी कि 'किसी को भी' से शिक्षक का क्या मतलब हो सकता है। इस बीच दरवाज़े के पास बैठी शिक्षक उठकर बाहर भागी यह देखने कि कौन-सा विद्यार्थी खाना ला रहा है। फिर वह अपने साथ एक लड़की को लेकर आई और उससे सभी के लिए खाना परोसवाया। सभी ने भोजन का आनन्द लिया।

इस पूरे प्रकरण ने मुझे एक अजीब-सी उत्सुकता से भर दिया। रोज़ शाम को सभी फेलो शहर वापिस जाने के लिए बस स्टॉप पर मिलते थे। उनमें से एक फेलो (जो वहाँ का निवासी था) से मैंने लंच के समय की घटना के बारे में पूछा, "जब उन शिक्षक ने 'किसी को भी' कहा था तब क्या उनका मतलब जाति से था?" मेरे सहकर्मी ने जवाब दिया, "हाँ। क्या तुम्हें यह बात पहले दिन ही पता नहीं चल गई थी? तुम्हें क्या लगता है शिक्षकों के दो समूह क्यों हैं!" यह सुनकर मैं भौंचक्की रह गई। मैंने अब तक हुई घटनाओं को जोड़कर देखना शुरू किया और मुझे समझ आया कि शिक्षकों के समूह का कार्यस्थल की प्रतिस्पर्धा से कोई लेना-देना नहीं था। यह लोगों के दो वर्गों के बीच भोजन साझा नहीं करने के सामाजिक मानदण्डों पर आधारित एक स्पष्ट विभेद था। मैं शिक्षकों के कार्यकलापों को लेकर कुछ राय नहीं बना सकती क्योंकि हमारा समाज इसी तरह का है और हम सभी को इसके द्वारा तय मानदण्डों का पालन करना पड़ता है।

हमारे आस-पास नागरिकता के बारे में बहुत ज़्यादा बातचीत

या सोच-विचार नहीं होता है। हम इसे अपनी सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में पढ़ते हैं। शायद हम 'नागरिकों के अधिकार' जैसे शब्द पहली बार तब सुनते हैं जब वोट डालने के बाद अपने अभिभावकों की उँगलियों पर गहरे नीले रंग की स्याही का निशान लगा देखते हैं। चुनाव के सन्दर्भ को छोड़ दिया जाए तो इसके अलावा हम 'नागरिक' शब्द सुनते ही कब हैं? नागरिकता क्या होती है? हम वही हैं जो हमारा समाज है। यह उतना ही सरल है जितना कि सामाजिक मानदण्डों का अनुकरण और पालन करना। हमें अपने तात्कालिक समाज में ख़ुद को अच्छा नागरिक साबित करने की ज़रूरत है, न कि राजधानी में या अपने देश की किसी सीमा पर।

जैसा कि इस घटना से स्पष्ट है शिक्षक भी उन्हीं सामाजिक मानदण्डों का पालन कर रहे होंगे, जिनमें उनका जन्म और पालन-पोषण हुआ है। उन्होंने सीखा है कि समाज इसी तरह से काम करता है और उन्हें इन नियमों का पालन करने की ज़रूरत है। इस विद्यालय में हर रोज़ दिन में दो बार राष्ट्रगान गाया जाता था— एक बार सुबह की सभा में और फिर एक बार दिन के अन्त में। हैड मिस्ट्रेस इस बात के लिए इतनी सख़्त थी कि विद्यालय का समय ख़त्म होने पर विद्यालय के गेट बन्द करवा देतीं ताकि कोई भी विद्यार्थी राष्ट्रगान गाए जाने से पहले बाहर न निकल सके। दो बार राष्ट्रगान गाने का एकमात्र कारण नागरिकता की भावना को जगाना था। हालाँकि जहाँ तक विद्यार्थियों की बात है ऐसा हो सकता है कि वे सिखाई गई हर चीज़ को नहीं सीख पाएँ, लेकिन वह अपने शिक्षकों के कार्यों और उनके व्यवहार का अनुकरण ज़रूर करते हैं। जाने-अनजाने में हम उस विद्यालय की संस्कृति को भी अपना लेते हैं जिसमें हम पढ़ते हैं ।

विजयाश्री पी एस कर्नाटक के कलबुर्गी ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में स्रोत व्यक्ति हैं। उनसे vijayashree.ps@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी

सामाजिक-वैज्ञानिक मुद्दों पर ध्यान देने के अवसर प्रदान करने से पहले अगर विज्ञान के शिक्षक इस बात को बारीकी से देखें कि वे कक्षा में कुछ बुनियादी लोकतांत्रिक तरीकों को कैसे लागू कर सकते हैं (उदाहरण के लिए, पर्यावरण में उपलब्ध सामान्य संसाधनों का उपयोग) तो उन्हें काफ़ी मदद मिलेगी। यह विज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता हो सकती है, विशेष रूप से प्रयोगशाला के काम के दौरान - अर्थात यह समझना कि प्रयोगशाला नियमित कक्षा की तरह सभी के लिए सामान्य है, इस स्थान का सम्मान करना चाहिए और ज़िम्मेदारी की भावना के साथ उपकरणों को काम में लाना चाहिए।

- चन्द्रिका मुरलीधर, विज्ञान की कक्षा में लोकतंत्र, पेज 33

स्कूल : समाज का एक लघु रूप

पूजा विश्नोई

किसी व्यक्ति का सामाजिक परिवेश ही उसकी निकटतम दुनिया होती है। हम अपनी इस निकटतम दुनिया का अनुभव करते हुए बड़े होते हैं और यह बचपन से ही हमारे दृष्टिकोण और विचारों को आकार देता है। स्कूल इस निकटतम दुनिया का एक अभिन्न अंग है। इस संस्था से यह अपेक्षा की जाती है कि यह हमें सही और ग़लत में अन्तर करने, जीवन के मूल्यों को समझने और बेहतर नागरिक बनने के लिए तैयार करे। स्कूल भी इसी सामाजिक परिवेश में कार्य करते हैं और सामाजिक व्यवहार, दस्तूर स्कूल के व्यवहार और दस्तूरों में भी परिलक्षित होते हैं। स्कूल न केवल व्यक्तियों को रोज़गार के लिए प्रशिक्षित करते हैं, बल्कि बचपन से ही समानता, न्याय और सम्मान जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों को सिखाने के बड़े उद्देश्य को भी पूरा करते हैं।

मुझे एक ऐसे स्कूल में पढ़ाने का अवसर मिला, जो वहाँ आने वाले बच्चों को शिक्षित करने के उद्देश्य को पूरी तरह से समझते हुए बड़ी जागरूकता के साथ काम करता है। अज़ीम प्रेमजी स्कूल, बाड़मेर, एक ऐसा स्कूल है जिसे इस दृष्टि से स्थापित किया गया था कि बच्चों को सीखने का समग्रात्मक माहौल मिले। वह एक ऐसा स्थान हो जहाँ वे नई चीज़ें सीखें, जहाँ उन्हें ख़ुद जैसा ही बने रहने दिया जाए, जहाँ वे एक अच्छा इन्सान और ज़िम्मेदार नागरिक बनने के लिए आवश्यक जीवन-मूल्य सीखें। वर्तमान में, इस स्कूल में पहली से चौथी तक की कक्षाएँ हैं, 129 विद्यार्थी और 9 शिक्षक हैं। विद्यालय में सह-शिक्षा है और सभी पृष्ठभूमियों के बच्चे आते हैं। उद्देश्य यही है कि विविध सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमियों वाले बच्चे यहाँ आएँ ताकि विविध प्रकार की बातचीत और राय के लिए अवसर पैदा हो सकें।

स्कूल में जो बच्चे आते हैं वे सभी सामाजिक वर्गों के हैं, उनके अभिभावक विभिन्न प्रकार के पेशों से जुड़े हैं और वे अलग-अलग धर्मों से ताल्लुक़ रखते हैं। ये बच्चे पहले से ही अपने-अपने सम्बन्धित परिवारों और समुदाय के विचारों और विश्वासों से प्रभावित होते हैं और यह बात एक-दूसरे के प्रति उनके व्यवहार में और विभिन्न मुद्दों पर उनके विचारों में परिलक्षित होती है। हम यह समझ गए कि शिक्षकों के रूप में हमारा काम इन बच्चों को अकादमिक रूप से समर्थ और बेहतर इन्सान बनाने के लिए उनका मार्गदर्शन करना है। आमतौर पर, स्कूलों में जीवन-मूल्यों की शिक्षा देने के लिए एक अलग घण्टा नियत होता है, या बहुत छोटी उम्र से ही कहानियों या उपदेशों के माध्यम से नैतिकता की शिक्षा दी जाती है। लेकिन इस स्कूल में हमने स्कूल के माहौल को ऐसा बनाने की कोशिश की कि बच्चे *व्यवहार* में उन मूल्यों और विचारों को देखें, जिनके लिए हमारा संविधान प्रयास करता है और जो इन बच्चों को ऐसे ज़िम्मेदार नागरिक बनाएँगे जो अन्य लोगों के अधिकारों को महत्त्व दें और जो सही है, उसके लिए अपनी आवाज़ उठाएँ। इसके लिए ज़रूरी है कि स्कूलों में ऐसे व्यवहार दिखाई दें। यानी जहाँ हर किसी के साथ समान व्यवहार किया जाए, जहाँ मुद्दों को दलीलों और चर्चाओं के साथ हल किया जाए, मतभेदों के बावजूद सभी का सम्मान किया जाए आदि। बच्चे वही सीखते हैं जो वे देखते हैं, इसलिए हमने अपने स्कूल की संस्कृति को ऐसा बनाने का लक्ष्य रखा कि बच्चे हर जगह इन मूल्यों के उदाहरण देखें, फिर चाहे वह कक्षा हो, खेल का मैदान हो, मध्याह्न भोजन हो या स्कूल सभा।

संवाद की संस्कृति का निर्माण करना

संवाद या वार्तालाप, हमारे विचारों को व्यक्त करने का एक साधन है और हमें बातचीत के माध्यम से मुद्दों को सुलझाने के महत्त्व को पहचानना चाहिए। सभी शिक्षकों ने पहली तीन कक्षाओं में संवाद की संस्कृति विकसित करने के लिए बड़ी मेहनत से काम किया। पहली कक्षा के बच्चे तो स्कूल में नए थे, लेकिन दूसरी और तीसरी कक्षा के बच्चे पहले से ही एक ऐसी व्यवस्था का हिस्सा बन चुके थे, जहाँ अनुशासन और दण्ड बहुत निकटता से जुड़े हुए थे। हम सभी का मानना था कि जब बच्चे भयमुक्त वातावरण में सीखते हैं, तो सबसे अच्छा सीखते हैं, इसलिए, जब वे इधर-उधर भागते, एक-दूसरे को मारते, बुरी भाषा का इस्तेमाल करते, कक्षा के दौरान बातें करते तो उन्हें डाँटने या दण्डित करने की बजाय हम उनके साथ बात करते और उनसे नियमों का पालन नहीं करने का कारण पूछते। बच्चे या तो कोई कारण बताते या शान्त रहते।

यह आज़ादी उनके लिए चूँकि नई थी इसलिए थोड़ी उलझन भरी भी थी और वे समझ नहीं पाते थे कि ऐसी स्थिति में क्या करें। कुछ बच्चों ने इसका फ़ायदा उठाया क्योंकि उन्हें पता

था कि उन्हें कोई डाँटेगा नहीं या उन्हें सज़ा नहीं मिलेगी। ऐसा दो-तीन महीनों तक चलता रहा और एक समय पर आकर मैंने सोचा कि अगर हम नियमों का पालन करने के बारे में बच्चों से बात करने में इतना समय लगाएँगे तो पाठ्यक्रम कैसे पूरा करेंगे। लेकिन हमने बातचीत करने के अवसर निकाल ही लिए। गलियारों में, कक्षाओं में, भोजन के वक्त या स्कूल सभा में, जब भी विद्यार्थी कोई उपद्रव या हंगामा करते, हम उनसे बात करते। लगभग पाँच महीनों के बाद हमें यह नज़र आने लगा कि इसने बच्चों के सोचने की प्रक्रिया को कैसे प्रभावित किया है। अपने दोस्तों के साथ लड़ने की बजाय, वे आपस में बात करते और अपनी समस्या हल कर लेते।

मिलकर बनाए गए नियम

अपने विद्यालय में संवाद की संस्कृति विकसित करने का काम करते हुए हमने अनुशासन के महत्त्व को पहचाना। स्वतंत्रता और अनुशासन एक साथ काम करते हैं और एक-दूसरे को रद्द नहीं कर सकते। इसलिए हमने सभी के लिए कुछ सामान्य नियम विकसित किए जैसे- क्या स्वीकार्य है और क्या नहीं; अगर किसी ने नियम तोड़े हैं तो हमें क्या करना चाहिए आदि। हमने अपनी स्कूल सभा में इन नियमों को विकसित किया है, जहाँ बच्चों ने भी बहुत सारे विचार रखे और सभी ने सामूहिक रूप से स्कूल के नियम तय किए। बाद में, हमने अपनी कक्षा के नियम भी बनाए, जिन्हें शिक्षक और बच्चे सीखने का बेहतर वातावरण बनाने के लिए अपनाते हैं।

चूँकि हम बच्चों को पहले ही बातचीत का महत्त्व बता चुके थे, इसलिए जब भी कोई बच्चा नियम तोड़ता है तो अन्य बच्चे उससे बात करते और पूछते कि उसने ऐसा क्यों किया। यह बात शिक्षक पर भी लागू होती थी – जब कभी शिक्षकों ने नियम तोड़े तो बच्चों ने उनसे सवाल किए। जैसे-जैसे समय बीतता गया, हमने देखा कि भले ही शुरुआत में सब कुछ अव्यवस्थित-सा दिखाई देता था, जैसे कि हमें एक दिन में एक ही बच्चे के बारे में 15-20 शिकायतें मिली थीं, लेकिन बाद में उसी बच्चे के बारे में शिकायतें घटकर 2-4 प्रति दिन तक हो गईं। पहले तो पूरा पीरियड एक मुद्दे पर बात करने में गुज़र जाता था, लेकिन धीरे-धीरे सब कुछ व्यवस्थित हो गया। और छह-सात महीने के बाद, न केवल शिक्षकों ने, बल्कि हमारे विद्यार्थियों ने भी स्कूल में 'सीखने का माहौल' बनाने की दिशा में काम किया।

जीवन के मूल्य

परिवार और समुदाय की मान्यताएँ बच्चों के सोचने की प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं, जिससे उनके लिए निष्पक्ष नज़रिए से चीज़ों को देखना मुश्किल हो जाता है। जाति, रंग, लिंग और आर्थिक स्थिति के बारे में विद्यार्थियों की मान्यताएँ हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देती थीं। बच्चे किसी अन्य बच्चे की त्वचा के रंग के बारे में यूँ ही कोई टिप्पणी कर देते, उनकी पहचान उनके कपड़ों से करते, उच्च जाति के बच्चे निचली जाति के बच्चे के साथ दोस्ती नहीं करते, वे समूह बना लेते और उसमें विपरीत लिंग को शामिल नहीं करते आदि।

हमने लगभग हर दिन इन मुद्दों का सामना किया और बच्चों के साथ वहीं पर इन विषयों पर बात की। हमने चर्चा की कि किसी व्यक्ति का धर्म या जाति उन्हें अलग नहीं बना देता। हमने उनसे उन कठिनाइयों के बारे में भी बात की जिनका सामना कुछ विद्यार्थी अपने घर पर करते हैं लेकिन फिर भी किस तरह वे अपनी पढ़ाई के लिए प्रयास करते रहते हैं। जब मध्याह्न भोजन के मेन्यू में अण्डे को शामिल किया जाता तो जो विद्यार्थी अण्डे नहीं खाते थे, वे बुरा-सा मुँह बना लेते, दूर बैठ जाते और कुछ ने तो अपने अण्डे खाने वाले दोस्तों से बात करना भी बन्द कर दिया। शिक्षकों ने इस मुद्दे पर स्कूल सभा में, कक्षा में और व्यक्तिगत रूप से बच्चों के साथ चर्चा की। हमने उनका ध्यान इस बात की ओर आकर्षित किया कि लोगों की पसन्द अलग-अलग होती है और हमें उसका सम्मान करना चाहिए। इसके बारे में एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए, जो शिक्षक अण्डे नहीं खाते थे, वे उन विद्यार्थियों के साथ उसी क़तार में भोजन करने बैठे जो अण्डे खाते थे। फिर धीरे-धीरे, अन्य विद्यार्थियों ने भी उनके साथ बैठना शुरू कर दिया और कुछ महीनों के बाद भोजन के लिए अलग क़तारें बनना बन्द हो गईं; सब साथ बैठकर खाना खाते। इसमें समय लगा, धैर्य और प्रयास की आवश्यकता पड़ी, लेकिन बच्चों ने आखिरकार एक दूसरे के बीच के अन्तर और गुणों का सम्मान करना शुरू कर दिया।

एक अभिन्न तत्व के रूप में लोकतंत्र

> अक्सर हम देखते हैं कि प्राथमिक कक्षाओं में ज़्यादातर, शिक्षक ही वहाँ हो रही प्रक्रिया का नेतृत्व करते हैं। प्राथमिक स्कूल बच्चों के लिए एक बुनियादी चरण है, जहाँ उन्हें लोकतंत्र, समानता और एक-दूसरे के प्रति सम्मान रखने के महत्त्व को पहचानने के बारे में सिखाया जा सकता है। हमने एक ऐसी प्रणाली विकसित करने की कोशिश की, जिसमें न तो शिक्षक और न ही चन्द विद्यार्थी कक्षा की प्रक्रियाओं पर हावी हों, बल्कि हर किसी को भागीदारी का मौका मिले।

हमने यह नियम बनाया था कि शिक्षक सहित, हर कोई बोलने के लिए अपनी बारी का इन्तज़ार करेगा, अपना हाथ उठाएगा, और जब कोई और बोल रहा हो तो बीच में टोकेगा नहीं। हर एक की बात सुनी जाएगी और अगर विचारों में मतभेद हों तो हम कारणों को सुनेंगे और बच्चों को तय करने देंगे

से मॉनीटर बनना चाहेगा। नामांकन के बाद विद्यार्थियों के व्यवहार, ज़िम्मेदारी की भावना आदि के आधार पर कक्षा तय करती थी कि कक्षा का मॉनीटर कौन होगा। हर दो महीने में इसी प्रक्रिया का अनुसरण करके मॉनीटर को बदल दिया जाता था।

अपने स्कूल को बेहतर रूप से चलाने के लिए, हमने अलग-अलग समितियाँ बनाईं - खेल, मध्याह्न भोजन, पुस्तकालय, स्कूल सभा आदि और बच्चों को इन समितियों के कामकाज की ज़िम्मेदारी सौंपी गई। प्रत्येक समिति में 10-12 निर्वाचित विद्यार्थी होते थे। महामारी के कारण स्कूल बन्द होने से पहले, बच्चों ने चुनाव प्रचार शुरू कर दिया था। उम्मीदवार अपने चुनाव चिह्न दिखाने के लिए सभी कक्षाओं में गए थे और वे जो काम करने वाले थे, उसके बारे में बताया था। शिक्षकों ने यह समझने में हर किसी की मदद की कि एक निष्पक्ष चयन प्रक्रिया क्या होती है और लोकतांत्रिक प्रक्रिया द्वारा किस प्रकार से कोई प्रणाली बेहतर तरीक़े से कामकाज करती है। स्कूल के खुलने के बाद हम इसे जारी रखेंगे।

सभी शिक्षक एक साथ काम करते थे, चर्चा करते थे और विद्यार्थियों के व्यक्तिगत और कक्षा के रिकॉर्ड रखते थे, जिससे हमें ठीक-ठीक पता होता था कि किस विद्यार्थी को किस क्षेत्र में मार्गदर्शन की ज़रूरत है। इस प्रक्रिया में, शिक्षकों ने भी सीखा कि उन्हें विद्यार्थियों के साथ अपने व्यवहार में धैर्य और लोकतांत्रिक रवैया रखना चाहिए। विद्यार्थियों को जीवन-मूल्यों के बारे में पढ़ाने के लिए हम केवल पाठ-योजनाओं पर निर्भर नहीं रहे, बल्कि जहाँ कहीं भी सम्भव होता, हम ऐसा करते। हमने शैक्षिक सामग्री में निहित मूल्यों पर चर्चा की; अपने विद्यार्थियों और शिक्षकों द्वारा प्रदर्शित किए गए सहानुभूति, टीम भावना, प्रेम और दूसरों की परवाह करने के छोटे-से-छोटे कामों की सराहना की। हम विद्यार्थियों को बेहतर मानव और ज़िम्मेदार नागरिक बनाने के लिए उनका मार्गदर्शन करने के प्रयास जारी रखेंगे।

स्थितियों को सँभालना : कुछ उदाहरण

चोरी करने के बारे में

स्कूल सभा के दौरान, हमने पैसे या अन्य चीज़ों को चुराने की आदत पर, और इस बारे में चर्चा की कि यह हमारे दिमाग़ को कैसे प्रभावित करती है। कैसे यह एक आदत बन सकती है और बाद में इसे बदलना कितना मुश्किल हो सकता है। बच्चों ने कुछ उदाहरण साझा किए कि उनके कुछ मित्र हैं, जो चोरी करते हैं। हमने ऐसा इसलिए किया क्योंकि मुझे पता चला था कि एक बच्ची ने अपने दोस्तों के लिए चॉकलेट ख़रीदने के लिए घर से पैसे चुराए थे। उसका नाम लिए बिना, हमने आपस में चीज़ों को साझा करने और माता-पिता से अपने ज़रूरत की चीज़ें माँगने के बारे में सामान्य रूप से चर्चा की। बाद में, मैंने उस बच्ची के साथ बात की और उसे इस आदत के बुरे प्रभावों को समझाने की कोशिश की। उसने भी स्वीकार किया कि वह बिना पूछे पैसे लेती है और दोबारा ऐसा नहीं करेगी।

दूसरों की मदद करने के बारे में

विद्यार्थी हमसे उन बच्चों की शिकायत करते हैं जो दूसरे बच्चों की मदद नहीं करते हैं। मैं उनसे पूछती हूँ कि वे ख़ुद ही उन बच्चों से बात करने की बजाय मेरे पास क्यों आते हैं। मैं उनसे कहती हूँ कि अगर किसी बच्चे को अपनी किसी आदत में सुधार की ज़रूरत हो तो उसे उसके बारे में बताना कोई बुरी बात नहीं है। चीज़ों को साझा करना चाहिए और एक बेहतर इन्सान बनने में एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए। मैंने उन्हें बताया कि हम शिक्षक भी ऐसा ही करते हैं। कभी-कभी हम लोगों में भी किसी बात को लेकर असहमति होती है, लेकिन हम यह समझते हैं कि सभी की भलाई के लिए, हमें चीज़ों को साझा करना चाहिए और दूसरों से मदद माँगनी चाहिए। हम रचनात्मक फ़ीडबैक के बारे में भी बात करते हैं, और इस पर भी कि दूसरे व्यक्ति को बुरा महसूस कराए बिना हम ऐसा कैसे कर सकते हैं।

दयालुता के बारे में

एक बार हमने कक्षा में बैठने की व्यवस्था बदल दी, क्योंकि हमें लगा कि हमें बच्चों के एक-दूसरे के प्रति व्यवहार में बदलाव लाने की आवश्यकता है। इसलिए अब वे एक गोले में बैठते हैं। हम कक्षा में कोई चर्चा कर रहे थे कि तभी किसी ने एक अन्य बच्चे का नाम लिया और कहा कि वह तो इस अवधारणा के बारे में नहीं जानता होगा (कुछ बच्चों के रूप-रंग पर भी टिप्पणी की गई थी)। इसलिए हमने इस बारे में बहुत विस्तृत रूप से चर्चा की कि कुछ बच्चों को सीखने में कठिनाई क्यों होती है, लेकिन वे बहुत-सी ऐसी चीज़ों को जानते और समझते हैं जो दूसरों को नहीं आती हैं। हमने इस विशेष बच्चे की पारिवारिक परिस्थितियों के बारे में बात की कि कैसे इसके बावजूद उसने बहुत तरक़्क़ी की है और कई मायनों में सुधार किया है जैसे उसका लेखन कौशल, चीज़ों की समझ, व्यवहार आदि।

हमने एक और बच्चे तथा उसके घर के बारे में भी बात की और बताया कि कैसे उसकी माँ अपने परिवार को पालने के लिए बहुत मेहनत करती है। इसलिए किसी के बारे में कुछ भी कहने से पहले हमें सोचना चाहिए क्योंकि हम नहीं जानते कि वे काम करने के लिए कितनी मेहनत कर रहे हैं। हमें अपने दोस्तों की मदद करनी चाहिए, विशेष रूप से जी1 (जो विद्यार्थी बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान में मुश्किलों का सामना कर रहे हैं) विद्यार्थियों की, ताकि उनका सीखना बेहतर हो जाए और वे

तेज़ी से सीख पाएँ। इसके लिए हमें उन चीज़ों को सीखने में उनकी मदद करनी चाहिए जिन्हें हम जानते हैं और उनका अच्छा दोस्त बनना चाहिए।

छेड़खानी के बारे में

स्कूल सभा के दौरान, मैंने राघव को रोते हुए देखा और उससे पूछा कि क्या हुआ। उसने बताया कि उसने होंठों पर बाम लगाया था, जो चमकीला था और एक सहपाठी ने कहा कि उसने लिपस्टिक लगाई है और वह लड़की की तरह दिख रहा है। मैंने उससे पूछा कि इसमें रोने वाली कौन-सी बात है? क्या लड़की होना बुरा है या होंठों पर बाम लगाना बुरा है? हमने इस पर काफी विस्तार से चर्चा की; हमने बच्चों से कहा कि लिपस्टिक या बाम लगाने से कोई भी आदमी या औरत नहीं बन जाता। और उन्होंने ऐसा क्यों सोचा कि केवल महिलाएँ ही लिपस्टिक लगाती हैं, दुनिया में और हमारे देश में भी ऐसे पुरुष हैं, जो मेकअप करते हैं, यही नहीं वे महिलाओं के कपड़े भी पहनते हैं। वे ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें यह पसन्द है। हमने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि छोटी-छोटी बातों पर रोना नहीं चाहिए। जिस लड़की ने राघव को छेड़ा था, हमने उससे भी कहा कि अगर वह बाम को लेकर उत्सुक थी तो उसे राघव से पूछना चाहिए था और ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए जिससे दूसरों को ठेस पहुँचे।

साझी सम्पत्ति का सम्मान करना

हमारी हर कक्षा में एक पुस्तकालय कोना है जहाँ हम एक रस्सी पर किताबें लटकाते हैं। एक दिन एक बच्चे ने मुझे बताया कि दो विद्यार्थी रस्सी पर किताबें फेंक रहे थे। मैंने उनसे बात की और पूछा कि उन्होंने ऐसा क्यों किया। मैंने उन्हें उन बच्चों के बारे में बताया जो किताबों को ठीक तरह से रखते हैं। मैंने कहा कि जब वे आप लोगों को किताबें फेंकते देखते हैं तो उन्हें कैसा लगता होगा। फिर मैंने वहाँ से सभी पुस्तकें निकाल लीं। और उनसे कहा कि आगे से कक्षा में कोई भी पुस्तक नहीं रखी जाएगी क्योंकि यदि हम अपने पास मौजूद संसाधनों का सम्मान नहीं कर सकते तो हमें उन्हें अपने पास रखने का कोई हक़ नहीं। हमें उन चीज़ों का ध्यान रखना चाहिए जो हमें दी जाती हैं क्योंकि अपनी कक्षा को ठीक से रखना हमारी ज़िम्मेदारी है। दोनों बच्चों ने माना कि उन्होंने ग़ैर-ज़िम्मेदाराना हरकत की थी। वे आगे से ऐसा नहीं करेंगे। मैंने किताबों को वापस रस्सी पर रख दिया।

हिंसक ऑनलाइन गेम्स के बारे में

सुरेश ने बताया कि कुछ लड़के कक्षा में नक़ली *पबजी* (*PubG*) खेल रहे थे, तो मैंने उससे पूछा कि कौन-कौन खेल रहा था। सुरेश ने दो नाम बताए लेकिन जब मैंने पूछा कि जो कोई भी खेल रहा था, वह अपने आप खड़ा हो जाए तो कई खड़े हो गए। मैंने उनसे पूछा कि क्या उन्हें अपने दोस्तों पर बन्दूक तानना और उन्हें मारना पसन्द है। उन्होंने कहा कि नहीं। फिर मैंने पूछा कि क्या कक्षा इस तरह के खेल खेलने की जगह है। उन्होंने कहा कि नहीं। हमने चर्चा की कि मोबाइल फ़ोन पर ज़्यादा समय तक खेल खेलना आँखों और दिमाग़ को कैसे प्रभावित करता है इत्यादि। मैंने कुछ समाचारों की ओर उनका ध्यान खींचा कि कैसे बच्चों को मोबाइल फ़ोन और गेम्स की लत लग जाती है। मैंने उन्हें बताया कि खेल खेलना कोई बुरी बात नहीं है, लेकिन ऐसा करने का एक समय और उम्र होती है और कक्षा ऐसे खेल खेलने की जगह नहीं है जिसमें किसी भी तरह की हिंसा दिखाई जाती हो।

धूम्रपान करने के बारे में

जब दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों ने मुझे बताया कि एक बच्चा पेंसिल का उपयोग करके सिगरेट के कश लेने की नक़ल कर रहा था तो हमने कैंसर के बारे में लम्बी चर्चा की। ऐसा लगा कि विद्यार्थी धूम्रपान से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के बारे में जानते थे। धूम्रपान करने की नक़ल करने वाले बच्चे ने भी अपने परिवार और परिवेश के बारे में बात की, जिसने उसके व्यवहार को प्रभावित किया था। उसके माता-पिता और आस-पड़ोस का हर व्यक्ति तम्बाकू का सेवन और धूम्रपान करते थे, जिसका असर उसके जीवन पर भी पड़ा था। कई बार हमें उसके थैले में तम्बाकू के पैकेट मिले थे और उन पर विस्तृत चर्चा हुई थी। अब वह तम्बाकू नहीं खाता है।

दादागिरी के बारे में

कुछ विद्यार्थियों ने शिकायत की कि दो बच्चों ने बाथरूम में एक बच्चे की पैण्ट उतार दी थी। मैंने उस बच्चे से पूछा और उसने इसकी पुष्टि की, लेकिन जब मैंने उन लड़कों से पूछा, जिन्होंने ऐसा किया था तो उन्होंने साफ़ इन्कार कर दिया। कुछ अन्य बच्चों ने बताया कि उन्होंने यह घटना देखी है और यह भी बताया कि दोनों लड़के कई बार इस बच्चे को पीटते भी हैं।

मैंने उनसे दूसरों को मारने की आदत के बारे में बात की, विशेष रूप से, ऐसे बच्चों को जो पलटकर नहीं मारते। मैंने उन्हें बताया कि दूसरों को इस तरह मारने वालों को बदमाश या *बुली* कहा जाता है और उनसे पीड़ित बच्चे कभी-कभी स्कूल तक छोड़ देते हैं या कम आत्मसम्मान व निराशा के शिकार हो जाते हैं। और अगर वे ऐसी स्थितियों से न निपट पाएँ तो वे कोई ग़लत क़दम भी उठा सकते हैं। दोनों लड़कों ने इस बच्चे से माफ़ी माँगी और लिखकर दिया कि उन्होंने जो किया वह ग़लत था और वे इसे नहीं दोहराएँगे।

कुछ अन्य घटनाओं की सूचना भी शिक्षकों को दी गई। जैसे

दूसरों पर पत्थर फेंकना, स्कूल परिसर में फूल तोड़ना या गालियाँ देना। ऐसी हर स्थिति के लिए बच्चों को न तो दण्डित किया गया, न ही दूसरों के सामने अपमानित। उन्हें ऐसे बर्ताव के परिणामों का एहसास करवाया गया और इसे न दोहराने के लिए राज़ी किया गया।

** बच्चों की पहचान को सुरक्षित रखने के लिए नाम बदल दिए गए हैं।*

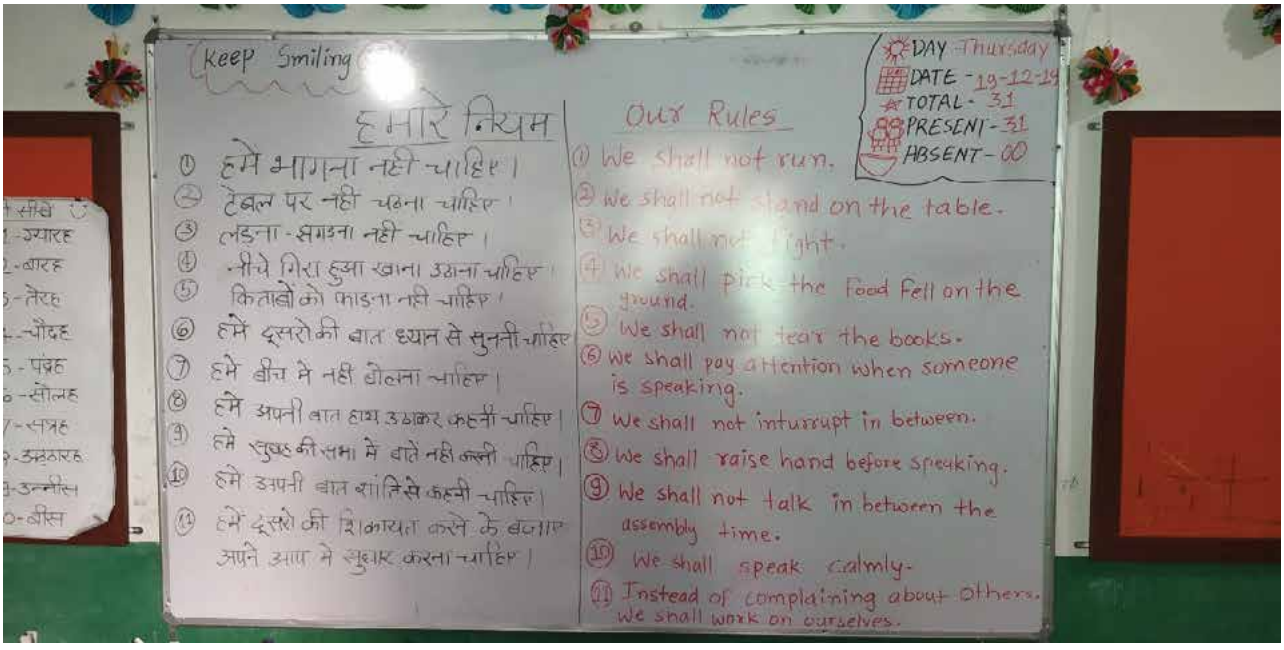

पूजा विश्नोई ने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से, 2018 में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त करने के बाद, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बाड़मेर में कार्य प्रारम्भ किया। उन्होंने एक साल तक एक सरकारी स्कूल में पढ़ाया। फिर एक साल तक अज़ीम प्रेमजी स्कूल में अँग्रेज़ी शिक्षिका के रूप में काम किया। उनकी रुचि इस बात को समझने में है कि प्रथम भाषा की मदद से द्वितीय भाषा कैसे सिखाई/सीखी जा सकती है। उनसे pooja.vishnoi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

संवेदनशील बनाने के लिए कहानियों का उपयोग | PARI अनुभव

प्रीति डेविड

गर्मी के मौसम में जब ओडिशा में तापमान बढ़ने लगता है और चरागाहों में घास की कमी होने लगती है तो भैंस चराने वालों को अपने पशुओं के चारे के लिए दूर-दूर भटकना पड़ता है। शहर के एक प्राथमिक विद्यालय में ग्रामीण भारत के बारे में बात करने की शुरुआत हमने बच्चों को भैंसों के झुण्ड की तस्वीरें दिखाते हुए की। तस्वीर में भैंसें हरे-भरे चरागाहों तक पहुँचने के लिए नदी पार करके दूसरी ओर जा रही थीं; हमने बच्चों को बताया कि ये चरवाहे अपने पशुओं की देखभाल अच्छी तरह से करते हैं। यहाँ तक कि वे पशुओं के बच्चों को अपनी गोद में लेकर जा रहे हैं।

एक कहानी *(स्विमिंग टु माइग्रेट इन ओडिशा)* में भैंसें नदी पार जा रही होती हैं और एक बछड़ा गहरे पानी में अपनी माँ को मदद के लिए बुलाता है। इस बछड़े के साथ बच्चे तुरन्त जुड़ाव बना लेते हैं। हम इस कहानी का उपयोग यह बताने के लिए करते हैं कि भारत में डेयरी किसान अपने पशुओं की देखभाल कैसे करते हैं। हो सकता है, बच्चों ने उन पशुओं का दूध सुबह ही पिया हो। वैसे इससे बच्चों को बहुत कुछ और भी सीखने को मिलता है।

शिक्षण के एक साधन के रूप में PARI

क्या आप पशुओं के उन आश्रय-स्थलों के बारे में जानते हैं जहाँ गर्मियों में, जब भोजन और चारा मिलना मुश्किल हो जाता है, तब सभी किसान अपने पशुओं को ले जाते हैं? या महाराष्ट्र के यवतमाल के उस चरवाहे के बारे में जानते हैं, जिसने जंगलों में घूमने वाले बाघों से खुद की रक्षा करने के लिए एक कवच तैयार किया है जब वह अपने पशुओं को चराने ले जाता है? इन कहानियों से अधिगम के अन्य प्रतिफल तो मिलते ही हैं, साथ ही पशुओं के प्रति दयालुता बरतने के बारे में एक प्रभावशाली पाठ भी सीखने को मिलता है। इनसे बच्चों की कल्पनाएँ व्यापक होती हैं और उन्हें रचनात्मक रूप से सोचने का अवसर मिलता है। वे दूसरों के अनुभवों को महसूस करने, बारीकी से निरीक्षण करने, समझने और समानुभूति का भाव रखने में सक्षम हो जाते हैं।

प्राथमिक स्कूल के शिक्षक *पीपुल्स आर्काइव ऑफ़ रूरल इंडिया* (PARI) का उपयोग कर बारह भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कहानियों, तस्वीरों और फ़िल्मों को डाउनलोड कर सकते हैं। यह ऑनलाइन पत्रिका निःशुल्क है। इसमें कृषि, खेती, प्रवास, समुदाय, हस्तकलाएँ, आदिवासियों जैसे कई ग्रामीण मुद्दों पर सामग्री दी जाती है। ये कहानियाँ विद्यार्थियों (प्राथमिक से स्नातकोत्तर स्तर तक) को कई समकालीन मुद्दों के बारे में जानकारी देती हैं, संवेदनशील बनाती हैं और सिखलाती हैं। हमें लगता है कि हमारी पाठ्यपुस्तकों में ग्रामीण भारत के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती है जबकि वह हमारे देश का बहुत बड़ा हिस्सा है। ग्रामीण भारत के जीवन और आजीविका के अनेक तौर-तरीक़ों के बारे में विद्यार्थियों को पर्याप्त जानकारी नहीं होती है। जैसे ग्रामीण लोगों के घर, उनके नौकरी-धन्धे, वे जंगल जिन पर वे निर्भर करते हैं, वे फसलें जिन्हें वे उगाते हैं, वे हस्तकलाएँ जिन्हें वे बनाते हैं, उनके गीत और प्राचीन किंवदन्तियाँ आदि बहुत कुछ।

ग्रामीण भारत के भीतरी भागों से सम्बन्धित सच्ची कहानियों का उपयोग करना एक ऐसी दुनिया को सुनने और देखने का मौक़ा है जो कई मायनों में हमसे जुड़ी है। बतौर एजुकेटर, हम अपने बच्चों को किन चीज़ों को महत्त्व देना सिखाना चाहते हैं? क्या हम उन्हें सम्मान और समानुभूति के निर्माण के लिए साधन प्रदान कर सकते हैं? छोटी-से-छोटी उम्र के विद्यार्थियों में भी मानवता का पोषण करना महत्त्वपूर्ण है। पाठ योजनाएँ और शिक्षण मॉड्यूल आमतौर पर अकादमिक अधिगम पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि भावनात्मक और सांस्कृतिक विकास नागरिकता के सत्व को निर्धारित करने में एक बड़ी भूमिका निभाते हैं। इसलिए जब बच्चे उन चरवाहों की कहानी सुनते हैं जो अपने पशुओं को अपने बच्चों जैसा मानते हैं तो उनके लिए दूध एक ऐसी वस्तु नहीं रह जाती जिसे एक-जैसे पैकेटों में बेचा जाता है। बल्कि वह उनके लिए एक ऐसी चीज़ बन जाती है जो किसी व्यक्ति का जीवन है, उसकी आजीविका है। इस तरह हम यह समझ पाते हैं कि दूध को हमारी खाने की मेज़ तक लाने के लिए क्या-कुछ करना पड़ता है।

PARI संसाधनों का उपयोग करना

कोई एक विषय ऐसा नहीं है जो विद्यार्थियों को समानुभूति और करुणा सिखाता हो। नैतिक शिक्षा या मूल्य शिक्षा की

कक्षा में वही पुरानी कहानियाँ दोहराई जाती हैं जिनमें थोपी हुई सीखें होती हैं। बच्चों से अपेक्षा की जाती है कि वे 'ज़रूरत के वक्त काम आने वाला मित्र ही सच्चा मित्र है' जैसी घिसी-पिटी उक्तियाँ याद करें। देश के अल्पज्ञात समुदायों और व्यवसायों के बारे में बच्चों को पढ़ाना हमारे विशाल देश और हमारे आर्थिक व सामाजिक ताने-बाने के जटिल परस्पर सम्बन्धों को समझाने का एक तरीक़ा हो सकता है। साथ ही, बच्चों में समानुभूति की भावना को बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि वे दूसरों के बारे में सीखें।

हम स्कूलों को ऐसे प्रोजेक्ट डिज़ाइन करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं जो अनुभव से सीखने को बढ़ावा देते हों; जिसमें बच्चे बाहर जाकर उन लोगों के रोज़मर्रा के जीवन से प्रत्यक्ष रूप से सीखें जिनके साथ हम आम तौर पर नहीं जुड़ते।

जैव विविधता पर प्रोजेक्ट

अधिकांश बच्चे शहद से परिचित हैं और इसके स्वाद और मिठास का आनन्द लेते हैं। उन्होंने मधुमक्खियों को भी देखा है और वे जानते हैं कि उनसे दूर रहना चाहिए। PARI की कहानियाँ, जिनमें फ़ोटो और वीडियो होते हैं, उनका उपयोग करके शिक्षक बच्चों को शहद निकालने की प्रक्रिया के साथ-साथ जैव विविधता को बनाए रखने में मधुमक्खियों जैसे कीटों के महत्त्व के बारे में समझा सकते हैं। इसके साथ ही, बच्चे पारम्परिक रूप से शहद इकट्ठा करने वालों और इस काम को करने के लिए आवश्यक विशिष्ट कौशल को समझेंगे और उनका सम्मान करना शुरू कर देंगे।

शहद की कहानी पर हमारी परियोजना में सुन्दरबन के शहद इकट्ठा करने वाले बताते हैं कि वे कैसे बाघ, मगरमच्छ और यहाँ तक कि डाकुओं से बचते हुए शहद खोजते हैं। वे बताते हैं कि कैसे वे धुआँ करके मधुमक्खियों को भगाते हैं, शहद के शिकारियों की सुरक्षा के लिए क्या इन्तज़ाम होते हैं, या नहीं होते हैं और शहद को एक जगह से दूसरी जगह कैसे ले जाया जाता है आदि। इसके बाद *चेसिंग बीज़ फ़्रॉम सुन्दरबंस टु छत्तीसगढ़* की फ़ोटो-कथा दिखाई जा सकती है जिसमें हम शहद निकालने की प्रक्रिया देखते हैं। शहद निकालने के इस कौशल की वजह से उन्हें अन्य राज्यों में भी आमंत्रित किया जाता है। या फिर, *द हनी हंटर्स ऑफ़ द हिल्स* कहानी सुनाई जा सकती है जिसमें पेड़ के कोटरों के छत्तों में से शहद निकालने की नीलगिरी के टोडा आदिवासियों की अनूठी तकनीक का वर्णन किया गया है। उन्हें एक छोटा वीडियो *बैटल ऑफ़ द बग्स : ऑन विंग्स ऑफ़ क्लाइमेट चेंज* दिखाया जा सकता है जिसमें परागण की प्रक्रिया और हमारे जंगलों के स्वास्थ्य में मधुमक्खियों के महत्त्वपूर्ण योगदान को समझाया गया है।

इस तरह, शहद और मधुमक्खियों पर इन छोटी-छोटी जानकारियों से गुज़रते हुए हमारा परिचय प्राणीविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान व जीवविज्ञान (कीट, पेड़, परागण, पराग और फ़्रक्टोज़) और भूगोल (डेल्टा, जंगल और पहाड़ियाँ) के कुछ हिस्सों से होता है। हम जैव विविधता और प्रजातियों की एक-दूसरे पर निर्भरता को भी समझ पाते हैं। और साथ-ही-साथ, हम नए-नए शब्द व अवधारणाएँ भी सीखते हैं। इसके अलावा, और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम शहद के इतिहास, उसे निकालने की प्रक्रिया और मधुमक्खियों के अपने जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान के बारे में भी जान पाते हैं। हम अलग-अलग समुदायों के जीवन के बारे में भी सीखते हैं और यह भी कि वे कीट जगत से कैसे जुड़े हैं।

कीटों के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए शिक्षक स्कूल में ही एक छोटा प्रोजेक्ट करवा सकते हैं। विद्यार्थियों के एक समूह को एक पेड़ या झाड़ी सौंपकर उन्हें एक घण्टे का समय दिया जा सकता है। इस दौरान उनको पेड़ अथवा झाड़ी पर या उसके आसपास मौजूद कीट-जीवन को नोट करना होगा या चित्र बनाना होगा। इसके बाद शिक्षक इन जीवों के एक-दूसरे से सम्बन्ध, उस पौधे की सेहत से इनके सम्बन्ध और इससे आगे जाते हुए समूची धरती की सेहत से उनके सम्बन्ध के बारे में समझा सकते हैं।

जेंडर पर प्रोजेक्ट

युवा विद्यार्थियों के साथ महिला किसानों पर किए जाने वाले सत्र हमारे लिए सबसे सन्तोषप्रद हुआ करते हैं। 'लैंगिक समानता' शब्द का प्रयोग किए बिना ही इसके शिक्षण के लिए ये सबसे उपयुक्त हैं।

इसकी शुरुआत तमिलनाडु की एक किसान और एकल अभिभावक चन्द्रा की कहानी से होती है, जो मुँह अँधेरे फूलों की कटाई और तुड़ाई करती है ताकि सुबह-सुबह बाज़ार पहुँच सके। वह खेत और घर में बहुत सारे काम करती है और पाठक समझ जाते हैं कि कहानी का शीर्षक *स्मॉल फ़ार्मर, बिग हार्ट, मिरेकल बाइक!* क्यों है! इसके बाद हम *फ़ुटप्रिंट्स इन द सैंड्स ऑफ़ ए माइन* शीर्षक कहानी लेते हैं, जो उत्तर प्रदेश के बांदा ज़िले की महिला किसानों के एक समूह की शक्तिशाली छवि प्रस्तुत करती है। इस कहानी से विद्यार्थी यह समझ पाते हैं कि बाँध से अवरुद्ध नदी की तुलना में बहने वाली नदी उन महिलाओं के लिए कितनी महत्त्वपूर्ण है जो खेती का ज़्यादातर काम करती हैं। अन्त में, वे ओडिशा के पत्रपुट में रहने वाली देशी बीजों का संरक्षण करने वाली कमला पुजारी से मिलती हैं। इस क्षेत्र की जैव विविधता को बनाए रखने में मदद करने के लिए उनको पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया गया है।

विद्यार्थियों को घर पर करने के लिए एक प्रोजेक्ट दिया गया। उनसे कहा गया कि वे उन सभी कामों की सूची बनाएँ जिन्हें उनकी माँ/दादी सुबह से रात तक करती हैं। इसमें खाना खाने, नहाने के निर्देश देने आदि जैसे काम भी शामिल किए जाएँ! इसे लेकर पहले तो कक्षा में बच्चे बहुत हँसे, लेकिन जब उन्होंने इन महिलाओं के काम, जैसे घर पर उपयोग के लिए पानी भरना आदि, और उसमें लगने वाले समय को नोट किया तो उन्हें इन कार्यों का महत्त्व समझ में आया। इन कहानियों की पृष्ठभूमि में वे यह देख पाए कि महिलाओं का योगदान कितना अधिक है और खाद्यान्न उगाने और पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखने में उनकी भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण है।

प्रवास पर प्रोजेक्ट

इस प्रोजेक्ट के बारे में बताने के लिए हम पहले प्रवास शब्द की व्याख्या करते हैं और बच्चों को PARI की कहानियों से विभिन्न प्रकार के प्रवास की तस्वीरें दिखाते हैं – मौसमी प्रवास, पुनरावर्ती (circular) प्रवास, स्थायी प्रवास आदि। फिर हम उन्हें अपने आसपास के प्रवासी लोगों के साथ बात करने के लिए कहते हैं, जैसे रसोइया, ड्राइवर, गार्ड आदि। शुरुआत में विद्यार्थियों को लगता है कि बातचीत शुरू करना अटपटा होगा, लेकिन हम ज़ोर देते हैं कि वे निम्नलिखित पाँच प्रश्न पूछकर बातचीत करने की कोशिश करें :

1. वे किस गाँव, ज़िले और राज्य से आए हैं?

2. उन्होंने कैसे यात्रा की थी?

3. क्या उन्होंने स्कूल में पढ़ाई की है?

4. वे दूसरी जगह क्यों आए?

5. वे किस चीज़ की कमी सबसे ज़्यादा महसूस करते हैं?

जब विद्यार्थी एक सप्ताह बाद अपने आसपास के लोगों से, जो अपेक्षा के अनुरूप प्रवासी ही थे, बातचीत करके लौटे तो उन्होंने प्रवासियों के बारे में बहुत कुछ सीख लिया था। साथ ही, अब वे प्रवासियों की उन रूढ़िवादी छवियों को भी नहीं मान रहे थे जिनमें उन्हें बेघर, आलसी और अनपढ़ दिखाया जाता है।

ऐसे लोगों से बात करना जो अन्यथा उनके लिए 'अदृश्य' थे, बच्चों को कई प्रश्नों से जूझने और उनको समझने के लिए मजबूर करता है। मिसाल के लिए, लोगों को अपने घरों और प्रियजनों को क्यों छोड़ना पड़ता है, भारत में वे कौन-कौन-से स्थान हैं जहाँ से लोग पलायन करते हैं, क्या वे वापस जा पाते हैं, उन्हें स्कूल छोड़ना कैसा लगता है, कम उम्र में ही काम करना शुरू करने के क्या मायने हैं, उन्होंने अपना गाँव या शहर क्यों छोड़ा आदि। ये बच्चे जिन लोगों को उनकी नौकरी से सम्बन्धित नामों जैसे 'गार्ड', 'धोबी' या सामान्य सम्बोधनों, जैसे, 'दीदी' या 'भईया' से बुलाते थे, अब उनकी एक पहचान बनी। बच्चों ने कर्ज़, बाल-मज़दूरी, भूख और घर व परिवार से दूर बिताए बरसों का दर्द, अपने बच्चों को बड़ा होता हुआ न देख पाना या अपने माता-पिता की देखभाल न कर पाने की टीस जैसी बातों को समझा और महसूस किया।

बच्चों द्वारा की गई कुछ टिप्पणियाँ :

- मैंने सीखा कि 'सूखा' शब्द का क्या अर्थ है।
- आपको पता है, उस ड्राइवर की ज़िन्दगी मेरे जैसी ही थी, लेकिन पिता की मृत्यु के बाद उन्हें स्कूल छोड़कर नौकरी करनी पड़ी।
- हमारी उम्र के बच्चे स्कूल जाने की बजाय खेतों और भवन निर्माण स्थलों पर काम कर रहे हैं।
- किसान हमारे खाने-पीने की चीज़ें उगाते हैं हालाँकि, कभी-कभी खुद उन्हें ही खाने को नहीं मिलता।

खेती और भोजन पर प्रोजेक्ट

खेती-किसानी और भोजन पर किया गया प्रोजेक्ट यह सिखाता है कि बच्चों की थाली में भोजन कैसे आता है और किन प्रक्रियाओं की बदौलत उनके चॉकलेट में चीनी पहुँचती है!

हम बच्चों को खेती पर कुछ कहानियाँ दिखाते हैं – चावल और चीनी की खेती, तरबूज़ और टमाटर की खेती।

फिर हम उनसे कहते हैं कि वे अपने घर के किसी बड़े व्यक्ति के साथ सब्ज़ी मण्डी जाएँ और किसी सब्ज़ी बेचने वाले से बातचीत कर निम्नलिखित प्रश्न पूछें :

1. आप कहाँ से आए हैं?
2. क्या आप खुद इन सब्ज़ियों को उगाते हैं? या आप उन्हें कहाँ से खरीदते हैं?
3. आप सब्ज़ियों को बाज़ार तक कैसे लाते हैं और उन सब्ज़ियों का क्या होता है जो नहीं बिकतीं?

कभी-कभी बच्चों को अपने जवाब पाने के लिए इन्तज़ार करना पड़ता है क्योंकि सब्ज़ी बेचने वाले अपने ग्राहकों को सब्ज़ी बेचने में व्यस्त होते हैं। इससे बच्चों को उन्हें काम करते हुए देखने का मौक़ा मिलता है।

बच्चों द्वारा की गई कुछ टिप्पणियाँ :

- मैंने पहले कभी तराज़ू नहीं उठाया; यह तो काफी भारी है!

- उस महिला (सब्ज़ी-विक्रेता) ने कहा कि उसे यहाँ सब्ज़ी बेचने आने के लिए बस में दो घण्टे की यात्रा करनी पड़ती है।

संक्षेप में, PARI की शिक्षण विधि में बच्चों को लोगों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की जानकारी देकर उसके प्रति संवेदनशील बनाने के लिए विभिन्न प्रकार से कहानियों का उपयोग किया जाता है – चाहे वह लिखित कहानी हो, तस्वीरें हों या फ़िल्में। इससे उन्हें नागरिकता की व्यापक समझ हासिल करने में मदद मिलती है। भाषाओं, आजीविकाओं, समुदायों और संस्कृतियों की विविधता के बारे में सीखने से बच्चों को रूढ़िबद्ध छवियों को नकारने और अपने साथी नागरिकों की भिन्नताओं के प्रति सहिष्णु बनने में मदद मिलती है।

प्रीति डेविड *पीपुल्स आर्काइव ऑफ़ रूरल इंडिया* (PARI) के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, महिलाओं, हस्तकलाओं और आजीविका के बारे में लिखती हैं। PARI शिक्षा के सम्पादक के रूप में कक्षाओं और पाठ्यचर्या में ग्रामीण मुद्दों को लाने के लिए स्कूलों और कॉलेजों के साथ काम करती हैं। बीएड डिग्री के साथ वे अर्थशास्त्र ऑनर्स स्नातक हैं। उन्होंने द *इकोनॉमिक टाइम्स* और *सीएनबीसी, एबीएनआई (टी.वी.)* के साथ काम किया है और *इंडिया बिज़नेस रिपोर्ट (बीबीसी वर्ल्ड)* के लिए रिपोर्टिंग की है। वे भारतीय शिल्प परिषद के प्रकाशन *'स्टोन क्राफ़्ट्स ऑफ़ इंडिया'* की सम्पादक रही हैं। प्रीति ने आन्ध्र प्रदेश के ऋषि वैली स्कूल और सेंट जोसेफ़ बॉयज़ हाई स्कूल, बेंगलूरु में पढ़ाया है। वे विश्वविद्यालयों में विकास पत्रकारिता में गेस्ट फैक्ल्टी हैं और *'कमिंग होम' (करडी टेल्स)* की लेखिका हैं। उनसे priti@ruralindiaonline.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

कनिष्ठ नागरिकों का निर्माण करना | पाँच सामान्य रास्ते

प्रिया कृष्णमूर्ति

लोकतांत्रिक नागरिकता *(सीएमसीए[i] युवा नागरिक मीटर, 2015[ii])* में 15 वर्षीय स्कूल जाने वाला शहरी भारतीय किशोर कितना सफल रहता है, इस पर एक भली-भाँति उद्धृत और स्वीकृत अध्ययन से हमें पता चलता है कि लोकतांत्रिक नागरिकता के स्कोर या अंकों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाली तीन मददगार स्थितियाँ इस प्रकार हैं :

- उन्हें स्कूल या घर में मारा-पीटा नहीं जाता।
- वे कक्षा में खुलकर सवाल पूछने और बिना किसी भय के अपने विचारों को साझा कर पाते हैं।
- अख़बार पढ़ते हैं, टीवी (समाचार और समसामयिक मामले) देखते हैं।

इन अंकों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाले अन्य कारक केवल ये थे : छोटे शहरों के बच्चों ने बड़े शहरों के बच्चों की तुलना में थोड़ा बेहतर प्रदर्शन किया और हाँ, कुल मिलाकर, लड़कियों ने लड़कों की तुलना में थोड़े अधिक अंक पाए। किसी भी चीज़ ने वास्तव में अंकों को प्रभावित नहीं किया – न तो शिक्षा बोर्ड, न ही उत्तरदाताओं के समुदाय या जातियाँ, न ही उनका वर्ग/आर्थिक पृष्ठभूमि और न ही माता-पिता की शैक्षिक योग्यता या यह बात कि वे देश के किस हिस्से से आए थे।

ऐसे कई अध्ययन हैं जो बताते हैं कि नागरिकता की शिक्षा जल्दी शुरू होनी चाहिए और स्कूल एवं कक्षाएँ लोकतांत्रिक जीवन शैली और सोच के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। सतत विकास लक्ष्यों, बाल अधिकारों और बच्चों की अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता और उन्हें सुरक्षित करने की उनकी क्षमता के बीच स्पष्ट सम्बन्ध हैं।

मैं यहाँ नागरिकता शिक्षा के कुछ प्रमुख मूलभूत अंगों पर ध्यान दूँगी। हालाँकि यह लेख प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिए है, लेकिन उम्मीद है कि यह सभी कक्षाओं के शिक्षकों के लिए उपयोगी होगा।

नागरिकता के मूलभूत अंग

राज्य के साथ, समाज में एक-दूसरे के साथ और न्याय, समानता, स्वतंत्रता आदि के विचारों के साथ नागरिकों की भागीदारी और जुड़ाव बहुत जटिल और बहुआयामी हैं। इसलिए यह तार्किक ही है कि लोकतंत्र की शिक्षा भी चुनौतीपूर्ण और जटिल है। यहाँ पर मैं शिक्षकों के लिए नागरिकता की शिक्षा देने हेतु पाँच ऐसे सरल और व्यावहारिक लेकिन सशक्त तरीक़े साझा कर रही हूँ जिनके केन्द्र में शिक्षक और कक्षा ही हैं। शिक्षक इन पर सोच-विचार करके इन्हें लागू करने का प्रयास कर सकते हैं।

कक्षा में स्वयं से प्रेम और लचीलापन

बहुत से बच्चे दुखी रहते हैं, लेकिन शिक्षक मित्रो, क्या आप पूछते हैं, सुनते हैं?

यह एक प्राथमिक कक्षा की कहानी है। *मैजिक बॉक्स* एक ऐसा कार्यक्रम है जिसका नेतृत्व शिक्षक करते हैं। यह प्रतिदिन 10 मिनट किया जाता है। इसमें नागरिकता और जीवन-कौशल से सम्बन्धित रोज़ किए जाने वाले कामों के सैकड़ों कार्ड शामिल हैं। *मैजिक बॉक्स* के एक पायलट सत्र के दौरान बच्चों को अपने आप को ही आगोश में लेना था – कसकर और काफ़ी देर तक, और कहना था, "मुअअ, मैं अपने आप से प्यार करता हूँ!" जैसे-जैसे हम 6 से 9 वर्ष के बच्चों से 10 से 11 वर्ष के बच्चों की ओर बढ़े, हमने देखा कि ख़ुद को आराम से और जोश के साथ आगोश में लेने का उत्साह काफ़ी कम होता गया। 10 साल के बच्चों की एक कक्षा में हमने एक बच्चे को धीरे से कहते सुना, "मैं अपने आप से प्यार नहीं करता।"

ग़रीबी की वजह से बच्चे, परिवार, समुदाय और देश के सामने बड़ी विचित्र व्यक्तिगत चुनौतियाँ पैदा होती हैं। बच्चे अक्सर विभिन्न प्रकार के मानसिक आघातों से गुज़रते हैं – वित्तीय मुद्दे, पारिवारिक कलह, कटुतापूर्ण अलगाव और मानसिक, भावनात्मक, यौन शोषण जिसमें डराना-धमकाना और मादक द्रव्यों का सेवन आदि शामिल हैं।

13-15 वर्ष (किशोर) आयु वर्ग में चार में से एक भारतीय बच्चा दुखी है; दस में से एक बेचैन है; 11 प्रतिशत *अन्यमनस्क* पाए गए हैं और उन्हें अपने काम पर ध्यान केन्द्रित करने में कठिनाई होती है तथा अन्य 10 प्रतिशत ने कहा कि उनका कोई क़रीबी दोस्त नहीं है।[iii]

जब मैंने *नली कली* की कक्षा में 6 से 8 साल के बच्चों से पूछा कि उन्हें किस बात से डर लगता है या दुख होता है, तो उन्होंने

कहा, "जब मेरे पिता मुझे पीटते हैं" या "जब मेरे पिता मेरी माँ को पीटते हैं" आदि। बहुत ही कम बच्चे साँपों या भूतों से डरते थे या पर्याप्त खिलौने न मिलने या ऐसी ही किसी अन्य अपेक्षित बात से दुखी थे।

किसी दूसरे स्कूल की एक कक्षा में, पाँचवीं कक्षा के 10 वर्षीय दो भाई एक-दूसरे को पीट रहे थे और लड़ रहे थे। जब उनसे बातचीत की तो वे हँसे और बड़ी ढिठाई से बताया कि उनके पिता उनकी माँ को पीटते हैं और कभी-कभी तो दादी को भी पीटते हैं। बहुत सारे बच्चे काफ़ी समय से ही घर में हिंसा का सामना कर रहे हैं।

सीएमसीए के इसी अध्ययन में 61 प्रतिशत बच्चों ने बताया कि उन्हें स्कूल में पीटा जाता है। तो ऐसे में इस बात की कोई उम्मीद नहीं की जा सकती कि हम बच्चों में दया और समानुभूति की भावना को प्रोत्साहित कर सकते हैं। क्योंकि हम वयस्क लोग ख़ुद उन पर चिल्लाते हैं, उन्हें पीटते हैं, चिढ़ाते हैं या अनुचित नामों से बुलाते हैं, शर्मिन्दा करते हैं और उनका अपमान करते हैं। जैसा कि जे. कृष्णमूर्ति ने लिखा है, "... जब हम तीखे शब्दों का प्रयोग करते हैं, जब हम किसी व्यक्ति को सामने से हट जाने का इशारा करते हैं, जब हम भय के कारण किसी की आज्ञा का पालन करते हैं तो यह सब हिंसा है...।"

बच्चों से प्यार करने वाले शिक्षक

आदिवासी स्कूलों के शिक्षकों के लिए एनसीईआरटी द्वारा आयोजित एक कार्यशाला में, शिक्षकों ने बेहद कम आय वाली पृष्ठभूमि के बच्चों, उपेक्षित बच्चों और अपने दैनिक जीवन में अत्यधिक तनाव में रहने वाले बच्चों के साथ काम करते वक्त अपने सामने आने वाली चुनौतियों को साझा किया। मैं शिक्षकों की कठिनाइयों को समझ सकती थी, अतः मुझे उनसे सहानुभूति हुई। रोज़ाना ऐसी चुनौतियों का सामना करना हम सभी को चिड़चिड़ा बना सकता है! इसलिए कोई आश्चर्य की बात नहीं कि कुछ शिक्षकों ने बच्चों की पिटाई को सही बताया और उन्हें लगता था कि ऐसा करना ज़रूरी है।

दूसरी ओर, यह देखकर बहुत अच्छा लगा कि कार्यशाला में कुछ शिक्षक ऐसे भी थे जिनकी अहिंसा के प्रति बड़ी गहरी प्रतिबद्धता थी। वे अपने अनुभवों को साझा कर रहे थे और बड़ी शिष्टता और समानुभूति के साथ दूसरों को अपने नज़रिए पर राज़ी करने के लिए प्रेरित कर रहे थे। शिक्षको, आप हिंसा के चक्र को तोड़ सकते हैं और आपको ऐसा करना चाहिए।

कक्षा में सकारात्मक मनोविज्ञान

अरस्तू इस बात को मानते हैं कि हमारी ख़ुशी हमारी भौतिक परिस्थितियों, समाज में हमारे स्थान और यहाँ तक कि हमारे रूप-रंग जैसे कारकों से प्रभावित हो सकती है। फिर भी वे कहते हैं कि ख़ुशी का सम्बन्ध सदाचारी व्यवहार और सदाचारी आदत से है, भाग्य से नहीं: ऐसा व्यक्ति जो इस तरह के व्यवहार और आदतों को विकसित करता है, वह सन्तुलन और सही नज़रिए के साथ अपने दुर्भाग्य को सहन करने में सक्षम होता है, और इस प्रकार, उसे कभी वास्तव में दुखी नहीं कहा जा सकता।[v]

शोध से पता चलता है कि जब बच्चों का दिमाग़ रोज़मर्रा की ज़िन्दगी के तनाव से भरा होता है तो शिक्षा प्रभावित होती है। जिस तरह हमने इस वास्तविकता को पहचाना है फिर उसके मुताबिक़ अपनी नीतियाँ भी बनाई हैं कि कोई भी बच्चा भूखे पेट कुछ नहीं सीख सकता है और पोषण सीखने को प्रभावित करता है। इसी तरह हमारी प्रणाली और हमारे शिक्षकों को इस वास्तविकता को भी पहचानकर उसके मुताबिक़ निर्णय और व्यवहार करना चाहिए कि कोई भी दुखी या तनावग्रस्त बच्चा अपनी पूरी क्षमता से न तो सीख सकता है और न ही अपना विकास कर सकता है।

अपने विद्यार्थियों की मदद करने के लिए इन सरल, नियमित कार्यों और दैनिक अन्तःक्रियाओं का उपयोग करें ताकि वे :

- छोटी-छोटी चीज़ों में ख़ुशी तलाशें
- प्रत्येक दिन/कक्षा अवधि की शुरुआत मुस्कान के साथ करें
- आभारी और कृतज्ञ रहें
- सकारात्मक रहें और हर स्थिति में सर्वश्रेष्ठ बात ही देखें
- वर्तमान क्षण में जिएँ
- ख़ुद के साथ अच्छा व्यवहार करें
- ज़रूरत पड़ने पर मदद माँगें
- उदासी और निराशा को छोड़ दें
- सचेतनता का अभ्यास करें
- प्रकृति के सानिध्य में चहलक़दमी करें
- हँसें और खेलने के लिए समय निकालें

शिक्षक अपने विद्यार्थियों की चारित्रिक मज़बूती का निर्माण करने, उन्हें अपनी कठिनाइयों का सामना करने, अपनी शक्ति और अवसरों को समझने और उनकी सराहना करने, सकारात्मक और आशावान बने रहने और अपने लिए एक बेहतर और ख़ुशहाल जीवन की आकांक्षा करने और उसके लिए प्रयास करने में मदद कर सकते हैं। यह आत्म-प्रेम (आत्मविश्वास, आत्म-जागरूकता, आत्म-सम्मान, आत्म-नियमन, आदि) ऐसे अच्छे नागरिक बनने की प्रक्रिया का एक अत्यावश्यक अंग है, जो दूसरों की ज़रूरतों के प्रति संवेदनशील और सचेत हों।

लैंगिकता और कक्षा

लैंगिकता पर सीएमसीए के सत्र करते समय हमने बच्चों की आँखों में आँसू देखे हैं। जब लड़कियाँ दिल दहला देने वाली कहानियाँ साझा करती हैं कि जब वे बीमार पड़ती हैं तो कैसे उनके माता-पिता उन्हें डॉक्टर के पास ले जाने के लिए कोई जल्दी नहीं करते हैं, लेकिन जब उनके भाई बीमार पड़ते हैं तो ऐसा नहीं होता। लड़कियों को कम अण्डे या कम दूध मिलता है या लड़कों को मांस का नरम हिस्सा मिलता है। वहीं लड़के बताते हैं कि जब उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे जल्दी से कमाई करना शुरू करें या जब उनसे बहादुर और हिम्मती होने की अपेक्षा की जाती है तो उन्हें कितना तनाव होता है। हम लैंगिकता से जुड़े विचारों को साझा करने और उन्हें चुनौती देने के लिए कहानियों और व्यक्तिगत अनुभवों का उपयोग कर सकते हैं। हमें इस तरह की बातचीत करने के लिए किसी महँगी सामग्री की आवश्यकता नहीं है – शुरुआत के लिए यह छोटा-सा सरल उदाहरण ही काफ़ी है कि घर में केवल भाई को अण्डा दिया जाता है।

बच्चों को घर के कार्य सौंपते समय हमें सावधानी बरतनी चाहिए ताकि लड़कियाँ और लड़के कुछ भी करने के लिए ख़ुद को तैयार और सक्षम महसूस करें। उदाहरण के लिए, लड़के स्कूल के समारोह के दौरान रंगोली सीखकर बना सकते हैं। लड़कियाँ स्कूल कार्यक्रम में साउंड सिस्टम को सम्भाल सकती हैं और तकनीकी पहलुओं का प्रबन्धन कर सकती हैं। हाँ, कुछ विरोध होगा और ग़लतियाँ होंगी, लेकिन उन ग़लतियाँ और ख़ामियों से और ज़्यादा गहरी सीख मिलेंगी। हमें सावधान रहना चाहिए कि हम लैंगिक व्यवहार सम्बन्धी रूढ़ियों को बनाए न रखें – उदाहरण के लिए, चोट लगने पर लड़कों को न रोने के लिए मजबूर न करें और लड़कियों को उछलने-कूदने या लट्टू नचाने से न रोकें।

लैंगिक पहचान के बारे में जागरूकता जल्दी शुरू हो जाती है, इसलिए हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि लैंगिकता द्विआधारी नहीं बल्कि एक विस्तार है। अपनी कक्षाओं में बच्चों से लैंगिक भूमिका और व्यवहार की अपेक्षाएँ निर्धारित न करें। बल्कि, कहानियों में निरूपित लैंगिकता भूमिकाओं को चुनौती दें और विद्यार्थियों को अपनी धारणाओं और विचारों की पड़ताल करने में मदद करें।

कक्षा में विविधता

मिल-जुलकर सामंजस्य के साथ रहना और विविधतापूर्ण देश में परिवर्तन और विभिन्नताओं को अपनाना न केवल लोकतंत्र के लिए महत्त्वपूर्ण कौशल है, बल्कि 21वीं सदी के कार्यस्थल सम्बन्धी कौशलों में भी इन्हें अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। शिक्षार्थियों के बीच अन्तर-सांस्कृतिक क्षमता के विकास को सुगम बनाने में शिक्षक सभी स्तरों पर एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। (बैरेट और अन्य, 2014)[vi]

शिक्षको, आप इस संसार को कक्षा में लाने के लिए हर रोज़ 15 मिनट का समय निकाल सकते हैं! शिक्षा को चाहिए कि वह इन बातों को सम्बोधित करे – अज्ञात के प्रति अविश्वास या भय, हम दूसरों के बारे में क्या धारणाएँ रखते हैं और हम एक-दूसरे के बारे में क्या सीख सकते हैं आदि। छोटे बच्चों के लिए भोजन, संगीत, आविष्कार, यात्रा आदि ऐसे बढ़िया तरीक़े हैं जिनसे बाधाओं को तोड़ने और विभिन्नताओं को ख़ुशी-ख़ुशी अपनाने में सहायता मिल सकती है।

उदाहरण के लिए, ग्लोब को घुमाकर/ दुनिया के नक्शे पर ही अलग-अलग जगहों की 'यात्रा' करें या अलग-अलग प्राकृतिक दृश्य देखें। जीवन के विभिन्न तौर-तरीक़ों और विभिन्न प्रकार के लोगों (उनके रूप, भोजन, कपड़े, उच्चारण, भाषाओं) को देखने और जानने के लिए पत्रिकाओं और वीडियो का उपयोग करें। इस तरह अपरिचित परिचित हो जाते हैं और *हम और वे* के विचार पिघलने लगते हैं! इस मूलाधार की सहायता से हम बाद के वर्षों में स्कूल में समानता, भेदभाव आदि पर अधिक चुनौतीपूर्ण बातचीत करने की ओर बढ़ सकते हैं।

प्रकृति और कक्षा के साथ सामंजस्य

बच्चे को कीड़े मारना, जानवरों को छेड़ना और पत्थर मारना, घायल, डरे हुए या भूखे जानवरों की उपेक्षा करना कौन सिखाता है? ये व्यवहार सीखे जाते हैं और केवल सार्थक शिक्षा ही इस बात में बच्चों की मदद कर सकती है कि वे सीखी हुई बातों को *अनसीखा* करें, और कुछ बातों को *पुनः सीखें।*

घरों में पाई जाने वाली मकड़ियाँ, छिपकली, चींटियाँ, मधुमक्खियाँ, पक्षी, सामुदायिक पशु, पेड़ और पौधे बच्चों में जीवन के प्रति संवेदना के इस मौलिक कर्तव्य का पोषण कर सकते हैं।

अपने स्कूल के नियमित दिनों में कुछ शक्तिशाली गतिविधियों को शामिल करें, जैसे- पक्षियों को दाना खिलाना, सामुदायिक पशुओं को खिलाना, पौधों और पेड़ों की देखभाल करना। यहाँ तक कि कक्षा की दीवारों पर मौजूद छिपकलियों और खेल के मैदान में बनी चींटी की बस्तियों का नामकरण भी किया जा सकता है! ऐसी बातें बच्चों को यह सिखाती हैं कि अपने पर्यावरण की देखभाल करना सिर्फ विज्ञान का विषय नहीं है बल्कि मानवीय ज़िम्मेदारी है।

जो बच्चे पक्षियों, चींटियों और कुत्तों पर ध्यान देते हैं और उनकी देखभाल करते हैं, वे जंगल की मुख्य प्रजातियों और ख़ुद अपने कल्याण के बीच गहरा सम्बन्ध देख पाते हैं। इस प्रकार हम अपने विद्यार्थियों को उम्र के साथ-साथ सह-अस्तित्व और स्थायित्व के साथ अधिक गम्भीर और सक्रिय रूप से जुड़ने में सक्षम बना सकते हैं।

बाल अधिकार, कर्तव्य और कक्षा

कक्षा के अनुभव बच्चे के लिए लोकतंत्र के पहले अनुभवों में से एक होते हैं। कोई बच्चा सड़क पर कचरा फेंकना या फिर सार्वजनिक सम्पति या विरासत स्थलों को बिगाड़ना कहाँ से और कैसे सीखता है? बारह साल की उम्र में किसी बच्चे को मोटरबाइक चलाना क्यों सही लगता है? युवा वयस्कों को ऐसा क्यों लगता है कि नियम तोड़े जाने के लिए ही होते हैं? ग़लत नागरिक व्यवहार कहाँ और कैसे सीखा जाता है और इसे कैसे छोड़ा जा सकता है?

लोकतंत्र के बारे में हम अच्छी तरह से तब सीखते हैं जब उसका *अनुभव* करते हैं। अक्सर वयस्क लोग दृढ़ता को अहंकार, असहमति को अवज्ञा मानने की भूल करते हैं और अनुशासन को, निर्विवाद आज्ञाकारिता एवं अनुपालन के रूप में देखते हैं।

सामान्य ज्ञान हमें बताता है कि जिन विद्यार्थियों के पास स्कूल में पर्याप्त अवसरों की कमी होती है, उनसे हम यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि वे सत्ता के साथ बातचीत-व्यवहार कर सकें। या उन पर शासन करने वाले नियमों को बनाने में अपनी यथोचित राय रख सकें, ताकि वे ऐसे सक्रिय नागरिकों के रूप में उभरें जो अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकते हों या अपने अधिकारों को सुरक्षित कर सकते हों! इसकी सम्भावना कम होती है कि जिन बच्चों को मारा-पीटा जाता है, वे बड़े होने के बाद सत्ता या सरकार के साथ सकारात्मक रूप से जुड़ने में सक्षम हो पाएँ। जिन लड़कों और लड़कियों को कक्षाओं में अलग कर दिया जाता है, उनसे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे व्यक्तिगत रूप से और अपने कार्यक्षेत्र में एक स्वस्थ पारस्परिक सम्मानपूर्ण सम्बन्ध बना पाएँगे या अपने जीवन में ज़िम्मेदारी के साथ विकल्पों को चुन पाएँगे।

नियम बनाने में शिक्षक सभी स्तरों पर बच्चों को शामिल कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चों को शौचालयों को साफ़ रखने, स्कूल में भोजन की बर्बादी न होने देने, कक्षा में बहुत अधिक शोर को नियंत्रित करने जैसी चुनौतियों को हल करने में शामिल करें। जब बच्चे सह-निर्माण करते हैं, सह-गठन करते हैं और समाधान खोजने के उत्तरदायित्व को साझा करते हैं तो वे लोकतंत्र का अनुभव करते हैं और यह सीखते हैं कि स्वतंत्रता ज़िम्मेदारियों के साथ आती है। इस मूलाधार से हम उनमें बाद के स्कूली वर्षों में एक नागरिक के अधिकारों और कर्तव्यों की समझ बना सकते हैं।

निष्कर्ष

शिक्षक-विद्यार्थी अन्तःक्रिया की रूपान्तरणकारी शक्ति का कोई विकल्प नहीं हो सकता। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में मानवीय सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण होते हैं। मैंने कक्षाओं में खूब सौजन्यता देखी है। ऐसे शिक्षक हैं जो प्रेम और धैर्य का परिचय देते हैं, साफ़ नज़र आता है कि वे बच्चों की संगति

का आनन्द लेते हैं। उनकी आवाज़ में हँसी और आनन्द की खनक व आँखों में चमक होती है! बच्चों को ख़ुशहाल करने और लोकतांत्रिक कक्षाओं व स्कूलों के निर्माण के लिए हमें महँगी सामग्री, विस्तृत प्रशिक्षण कार्यक्रमों, ढेर सारे समय या पाठ्यक्रम से हटने की आवश्यकता कतई नहीं है।

हमें ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जो कक्षा और स्कूल में सकारात्मक और सशक्त अनुभव प्रदान करें – ऐसे शिक्षक जो दैनिक जीवन के कार्यों और चुनौतियों को ऐसे अवसरों में बदल सकें जिनके माध्यम से युवा और बच्चे चिन्तनशील, विचारशील और सक्रिय नागरिक बन सकें। हमें ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जो उन सभी माँगों को आशा, उम्मीद और सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ पूरा कर सकें, जिसकी अपेक्षा उनसे की जाती है। हमें ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जिन्हें अपने काम का जुनून हो और जो बच्चों से प्यार करते हों! और यह हमारा सौभाग्य है कि हमारे पास ऐसे अनेक-अनेक शिक्षक हैं।

i Children's Movement for Civic Awareness (CMCA) is a nonprofit organization, head-quartered in Bengaluru. They work towards transforming children and young people into active citizens for an inclusive and sustainable India. Our research-backed pro-gram is run in schools, colleges and rural youth clubs. (cmcaindia.org)

ii Yuva Nagarik Meter – Young Citizen National Survey. (2015). (pp. 1-60, Publication). Bengaluru, KA: Children's Movement for Civic Awareness (CMCA).

iii Mental health status of adolescents in South-East Asia: Evidence for action. (2017). World Health Organization, New Delhi: Regional Office for South-East Asia; 2017. Li-cence: CC BY-NC-SA 3.0 IGO.

iv Krishnamurti, J. (1969). Chapter 6. In Freedom from the known. Harper & Row. Re-trieved from http://jiddu-krishnamurti.net/en/freedom-from-the-known/1968-00-00-jiddu-krishnamurti-freedom-from-the-known-chapter-6

v Aristotle on happiness – Happiness is not a state but an activity. (2013). Psychology Today. Retrieved from https://www.psychologytoday.com/us/blog/hide-and-seek/201301/aristotle-happiness

vi Barrett, M., Byram, M., Lázár, I., Mompoint-Gaillard, P. and Philippou, S. (2014). De-veloping Intercultural Competence through Education. Pestalozzi Series No. 3. Stras-bourg, Council of Europe Publishing.

प्रिया कृष्णमूर्ति चिल्ड्रन्स मूवमेंट फ़ॉर सिविक अवेयरनेस (CMCA) की सह-संस्थापक हैं। प्रिया को खुले दिल और दिमाग़ की सहज अच्छाई व क्षमता में गहरा विश्वास है। उन्होंने पाया कि सबसे अच्छा यही होगा कि इन गुणों का पोषण बच्चों में किया जाए। उन्हें कक्षाओं व संस्थाओं में नागरिकता और जीवन-कौशलों से जुड़े कार्यक्रम और विषयवस्तु की रचना व शिक्षा में दो दशकों का अनुभव हासिल है। उनसे priya@cmcaindia.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

कहानियों के माध्यम से सक्रिय नागरिकता का विकास करना

ऋचा पाण्डे

दुनियाभर के बच्चों को कहानियाँ बहुत अच्छी लगती हैं। कहानियाँ बच्चों को अनदेखी दुनिया की सैर कराती हैं, चाहे वे उनकी दादी-नानी द्वारा सुनाई गई हों या एनिमेटेड कार्टून या फ़िल्मों में वॉयसओवर कलाकारों द्वारा। वे समय और स्थान की सीमाओं से परे जाकर लोगों को जोड़ती हैं। अकबर के जीवन पर बनी ऐतिहासिक फ़िल्म निश्चित रूप से सामाजिक विज्ञान की कक्षाओं को और अधिक रोचक बनाती है, क्योंकि यह अकबर को लड़ाइयाँ लड़ने वाले ऐतिहासिक चरित्र से एक जीते-जागते मनुष्य में बदल देती है जिससे बच्चे और वयस्क भी भावनात्मक स्तर पर जुड़ सकते हैं। इस सन्दर्भ में यह देखना महत्त्वपूर्ण है कि सक्रिय नागरिकता के लिए आवश्यक जीवन कौशल विकसित करने के लिए कहानियों का प्रभावी ढंग से उपयोग कैसे किया जा सकता है।

मैं सामाजिक विज्ञान की शिक्षिका हूँ। मुझे याद है कि आठवीं कक्षा में ब्रिटिश राज पर चर्चा करते समय हमने सुभद्रा कुमारी चौहान की प्रसिद्ध हिन्दी कविता, 'ख़ूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी' पर चर्चा की थी। निस्सन्देह, औपनिवेशिक काल के लोगों की कहानियों को जानना औपनिवेशिक क़ानूनों के बारे में बताए गए तथ्यों के बारे में पढ़ने से अधिक प्रभावशाली अनुभव था। उस दिन विद्यार्थियों ने पाठ में अधिक रुचि ली और उनमें से कुछ ने तो कविता को समवेत स्वरों में गाना भी शुरू कर दिया था। इस घटना ने मुझे यह सोचने पर मजबूर किया कि अगर मुझे पर्याप्त समय और स्वायत्तता मिले तो मैं ऐसा और क्या कर सकती हूँ जो मेरे विद्यार्थियों को यथास्थिति पर सवाल उठाने के लिए प्रोत्साहित करे और उन्हें बदलाव की पहलक़दमी लेने के लिए प्रेरित करे। समानुभूति, आलोचनात्मक सोच और जाँच-पड़ताल जैसे कौशल व मूल्य विकसित करने के लिए किस तरह की गतिविधियों की योजना बनाई जा सकती है?

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में 'सहभागी लोकतंत्र के विज़न को साकार करने के लिए बच्चों को लोकतंत्र और लोकतांत्रिक सहभागिता के सकारात्मक अनुभव' प्रदान करने की आवश्यकता पर चर्चा की गई है (पृष्ठ 84)। यह लेख इस बात की पड़ताल करता है कि विद्यार्थियों को ऐसा अनुभव प्रदान करने के लिए कहानियों पर आधारित पाठ्यचर्या कैसे तैयार की जा सकती है। इसमें दिए गए विचार एक अनुभवात्मक और पूछताछ-आधारित पाठ्यचर्या के साथ जुड़ने के मेरे व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित हैं। दिल्ली स्थित एक ग़ैर-सरकारी संगठन, *सिंपल एजुकेशन फ़ाउण्डेशन* की स्वयंसेविका के रूप में मैंने तीन महीने तक 11 और 13 वर्ष की आयु की दो किशोरियों के साथ टेलीफ़ोन पर बातचीत की। हमने बुनियादी साक्षरता (हिन्दी और अँग्रेज़ी में पढ़ना और सरल वाक्य बनाना) और संख्या ज्ञान कौशल (आँकड़ों का विश्लेषण और विवेचन) विकसित करने के साथ-साथ संसाधन, आजीविका और प्रवास जैसी अवधारणाओं की जाँच-पड़ताल के लिए संगठन द्वारा डिज़ाइन की गई कार्यपुस्तिकाओं का उपयोग किया। इस प्रक्रिया में हमने उन विभिन्न भावनाओं का भी पता लगाया जिन्हें हम सभी प्रतिदिन महसूस करते हैं। यह सब दो कार्यपुस्तिकाओं (गणित और न्याय) का उपयोग करके किया गया था, जिनमें कहानियों को आधार बनाकर सामग्री प्रस्तुत की गई थी।

कहानियों के उदाहरण

इस लेख में उन कहानियों के विशिष्ट उदाहरण साझा किए गए हैं जिनका उपयोग सक्रिय नागरिकता के लिए आवश्यक जीवन कौशलों को विकसित करने के लिए किया जा सकता है। पहले प्रत्येक कहानी का संक्षिप्त विवरण दिया गया है और बाद में कुछ गतिविधियों की सूची दी गई जिन्हें वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

1. कहानी का शीर्षक : करुणा और दोस्तों की मज़ेदार सैर

श्रेणी : कथा साहित्य

कहानी का संक्षिप्त विवरण : किशोरों का एक समूह अपने घर के पास कैम्पसाईट पर विभिन्न प्रकार के कार्य करने वाले लोगों से मिलता है। इनमें टैक्सी ड्राइवर, शिविर मैनेजर, रसोइया, सफ़ाई कर्मचारी और रैफ्टिंग के गाइड शामिल हैं। बच्चे उनके साथ बातचीत करते हैं और प्रत्येक व्यवसाय से जुड़ी विशिष्ट चुनौतियों व अनुभवों से सम्बन्धित प्रश्न पूछते हैं। इससे उनमें यह समझ विकसित होती है कि सामाजिक व्यवस्था के सुचारू संचालन के लिए प्रत्येक पेशा किस प्रकार महत्त्वपूर्ण है।

अनुवर्ती गतिविधियाँ

चिन्तन प्रश्न : जो प्रश्न बच्चों को अपनी पढ़ी हुई बातों पर चिन्तन करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं वे महत्त्वपूर्ण जीवन कौशल विकसित करने में बहुत मददगार होते हैं। ऐसे प्रश्नों के कुछ नमूने इस प्रकार से हो सकते हैं :

- आपके अनुसार रवि भैया/गुंजन दीदी कैम्पसाईट में अपने कार्य के बारे में कैसा महसूस करते हैं? अपने उत्तर के पक्ष में प्रमाण दें।
- यदि कोई एक व्यक्ति कैम्पसाईट से अनुपस्थित होता तो क्या होता? उससे कैम्पसाईट में अन्य लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता?

खोजबीन

इन गतिविधियों से विद्यार्थियों को कहानी में प्रवेश करने और उसका हिस्सा बनने का अवसर मिलता है। उदाहरण के लिए, उनसे कहा जा सकता है कि वे कैम्पसाइट के प्रबन्धक की भूमिका निभाएँ। उन्हें निम्नलिखित कार्य करने को दिए जाएँगे:

- इस बार पर्यटकों की कमी के कारण कैम्प में नक़दी की कमी है। आपको अलग-अलग लोगों के वेतन में संशोधन करना होगा। आप ये बदलाव कैसे करेंगे?
- लागत कम करने के उपायों के तहत आपको कैम्प स्टाफ़ से कुछ लोगों को नौकरी से हटाना होगा। आप किसे हटाएँगे और क्यों? आपका निर्णय विभिन्न लोगों को कैसे प्रभावित करेगा (चाहे उनको हटा दिया गया है या नहीं हटाया गया)?

2. कहानी का शीर्षक : द मार्केट प्लेस

श्रेणी : कथा साहित्य

कहानी का संक्षिप्त विवरण : एक छोटा लड़का बाज़ार जाता है और वहाँ वह विभिन्न प्रकार के व्यवसाय करने वाले लोगों से मिलता है। जैसे सब्ज़ी, आइसक्रीम व दवा बेचने वाले, कुम्हार और मोची। ऐसा लगता है कि इन अलग-अलग लोगों के साथ लड़के का व्यवहार उनके व्यवसाय पर आधारित है। उदाहरण के लिए, वह केमिस्ट के साथ विनम्रता से बात करता है और माँगी गई राशि का भुगतान करता है। दूसरी ओर वह मोची और कुम्हार के साथ न केवल मोल-तोल करता है, बल्कि उनके काम के कारण उनके साथ अशिष्ट व्यवहार भी करता है।

अनुवर्ती गतिविधियाँ

अनुभव : यह गतिविधि बच्चों को अपने अवचेतन मन के पूर्वाग्रहों को पहचानने का मौक़ा देती है। इस गतिविधि में

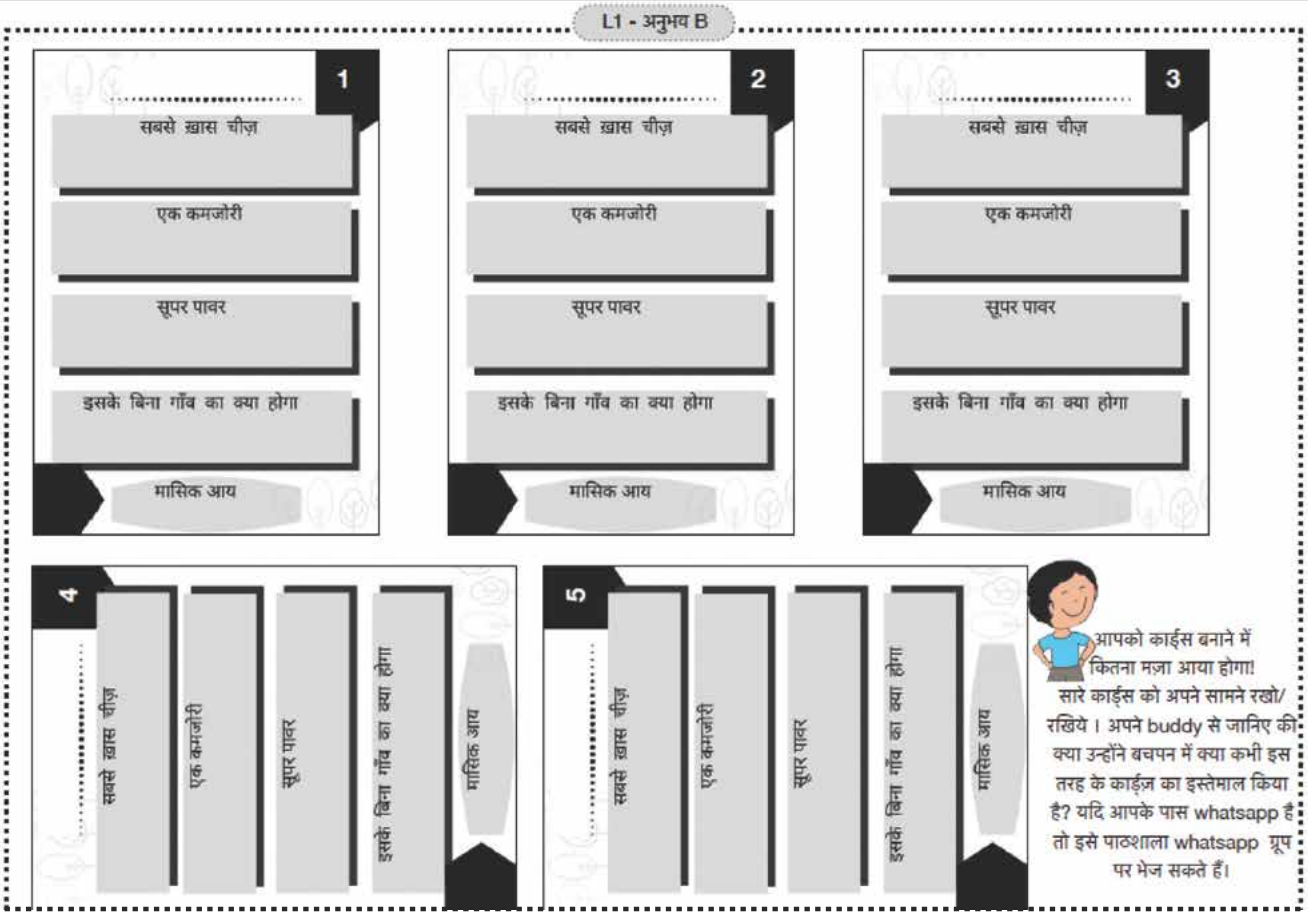

बच्चों को अपने मित्र को एक पेशा सुझाना होता है। ऐसा करने के लिए बच्चों को इन नौकरियों में लगे लोगों के साथ बातचीत करके उसके आधार पर 'व्यवसाय' कार्ड बनाने होंगे। प्रत्येक कार्ड में उस पेशे की चुनौतियों, पारिश्रमिक, विशिष्ट पहलुओं, उसका सुपरपावर और समाज में उस व्यवसाय के महत्त्व को सूचीबद्ध करना होगा और यह बताना होगा कि अगर उस पेशे को गाँव से हटा दिया जाए तो क्या हो सकता है। फिर बच्चों को कार्डों के समूह से अपने दोस्त के लिए एक कार्ड लेने के लिए कहा जाता है (ऐसा काम जो वे चाहते हैं कि उनका दोस्त करे)। जो कार्ड चुना जाता है, वह समूह से बाहर हो जाता है। यानी उस पर लिखा पेशा किसी अन्य के लिए नहीं चुना जा सकता।

यह प्रक्रिया तब तक दोहराई जाती है जब तक कि केवल एक पेशा (कार्ड) शेष रह जाए। आमतौर पर बच्चे डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक जैसे विकल्प पहले चुनते हैं। बिजली का काम करना, नलसाज़ी करना, सफ़ाई करना जैसे व्यवसायों को आख़िर तक नहीं चुना जाता या वे बच जाते हैं। इस अभ्यास पर आधारित चिन्तन-प्रश्नों से बच्चों के सामने वे पूर्वाग्रह उजागर होंगे जो कुछ व्यवसायों को लेकर समाज में मौजूद हैं। इससे उन्हें अपने निर्णयों और विकल्पों के प्रति सचेत रहने का प्रोत्साहन भी मिलेगा।

3. कहानी का शीर्षक : पलायन करने वालों का वापस लौटना

श्रेणी : कथेतर साहित्य

कहानी का संक्षिप्त विवरण : परवेज़ ने दिल्ली की एक फ़ैक्ट्री में काम करने के लिए अपने गाँव से पलायन किया था। तालाबन्दी के कारण उनकी नौकरी चली गई और दूसरी नौकरी न मिलने के कारण उन्होंने अपने गाँव लौटने का फ़ैसला किया।

अनुवर्ती गतिविधियाँ

डेटा विश्लेषण और विवेचन : बच्चों को दिल्ली, मुम्बई, चण्डीगढ़ और जयपुर से देहरादून के लिए ट्रेन टिकट की कीमत को दर्शाने वाला एक स्तम्भ आलेख (बार ग्राफ़) दिया गया। बच्चों को निम्नलिखित समस्या का समाधान करना था :

- अगर परिवार के चार लोगों को मुम्बई से देहरादून की यात्रा करनी है तो उन्हें कितने पैसे देने होंगे?
- देशव्यापी तालाबन्दी के दौरान, कुछ प्रवासियों से रेल के टिकट के पैसे लिए गए। मान लीजिए कि ऐसे चार प्रवासी दिल्ली से लौटना चाहते थे और उनके पास कुल मिलाकर 1000/- रुपए थे। बार ग्राफ़ देखकर बताइए कि क्या उनके पास अपने राज्य में लौटने के लिए पर्याप्त धन है। यदि नहीं, तो उनके पास कितने पैसे कम थे?

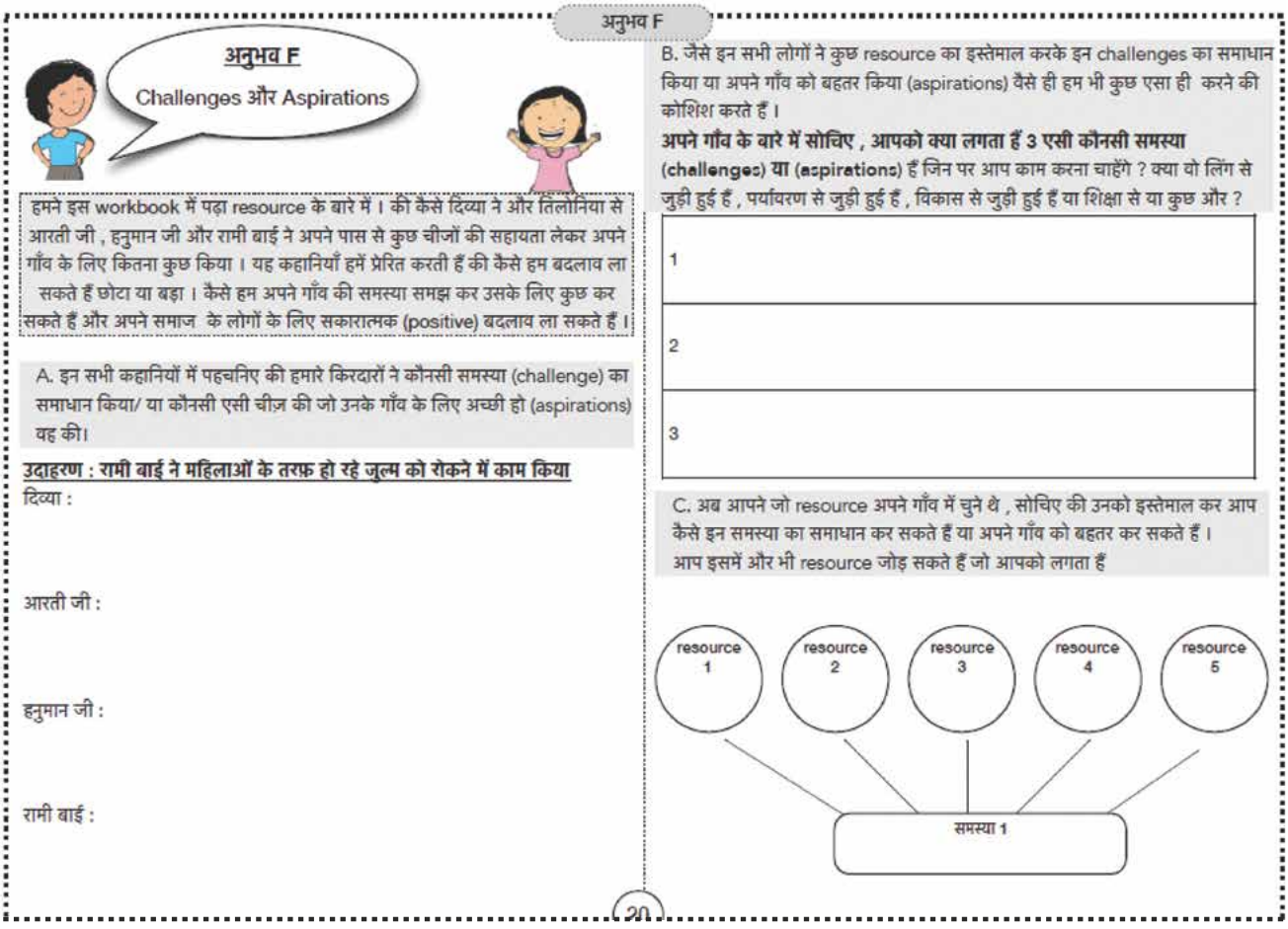
अनुभव F

अनुभव F

Challenges और Aspirations

हमने इस workbook में पढ़ा resource के बारे में। की कैसे दिव्या ने और तिलोनिया से आरती जी, हनुमान जी और रामी बाई ने अपने पास से कुछ चीजों की सहायता लेकर अपने गाँव के लिए कितना कुछ किया। यह कहानियाँ हमें प्रेरित करती हैं की कैसे हम बदलाव ला सकते हैं छोटा या बड़ा। कैसे हम अपने गाँव की समस्या समझ कर उसके लिए कुछ कर सकते हैं और अपने समाज के लोगों के लिए सकारात्मक (positive) बदलाव ला सकते हैं।

A. इन सभी कहानियों में पहचनिए की हमारे किरदारों ने कौनसी समस्या (challenge) का समाधान किया/ या कौनसी एसी चीज़ की जो उनके गाँव के लिए अच्छी हो (aspirations) वह की।

उदाहरण : रामी बाई ने महिलाओं के तरफ़ हो रहे जुल्म को रोकने में काम किया

दिव्या :

आरती जी :

हनुमान जी :

रामी बाई :

B. जैसे इन सभी लोगों ने कुछ resource का इस्तेमाल करके इन challenges का समाधान किया या अपने गाँव को बहतर किया (aspirations) वैसे ही हम भी कुछ एसा ही करने की कोशिश करते हैं।

अपने गाँव के बारे में सोचिए, आपको क्या लगता हैं 3 एसी कौनसी समस्या (challenges) या (aspirations) हैं जिन पर आप काम करना चाहेंगे ? क्या वो लिंग से जुड़ी हुई हैं, पर्यावरण से जुड़ी हुई हैं, विकास से जुड़ी हुई हैं या शिक्षा से या कुछ और ?

1

2

3

C. अब आपने जो resource अपने गाँव में चुने थे, सोचिए की उनको इस्तेमाल कर आप कैसे इन समस्या का समाधान कर सकते हैं या अपने गाँव को बहतर कर सकते हैं। आप इसमें और भी resource जोड़ सकते हैं जो आपको लगता हैं

20

4. कहानी का शीर्षक : बदलाव की कहानी

श्रेणी : कथेतर साहित्य

कहानी का संक्षिप्त विवरण : दिव्या रावत नाम की एक युवती अपनी अच्छी-ख़ासी तनख़्वाह वाली नौकरी छोड़ देती है और अपने समुदाय को सशक्त बनाने के इरादे से अपने गाँव लौट जाती है। वह स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों (भौतिक और मानवीय) का उपयोग करती है और अपने आस-पास की महिलाओं को मशरूम की खेती करने में मदद करती है। धैर्य और दृढ़ संकल्प के साथ वह अपने समुदाय में रोज़गार के अवसर पैदा करती है। उसे उत्तराखण्ड राज्य द्वारा संजीवनी रत्न पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

अनुवर्ती गतिविधियाँ

चिन्तन प्रश्न : बच्चों को निम्नलिखित बातों पर चिन्तन करने के लिए कहा जा सकता है :

- विभिन्न पात्रों ने अपने समुदाय में परिवर्तन लाने के लिए किस प्रकार के संसाधनों का उपयोग किया?
- ऐसा करने में उन्हें किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ा?
- ऐसी कुछ विशेषताओं की पहचान करें जिन्होंने विभिन्न चुनौतियों के बावजूद सफल होने में उनकी मदद की।

5. कहानी का शीर्षक : मैं छोटी हूँ पर बदलाव ला सकती हूँ

श्रेणी : कथा साहित्य

कहानी का संक्षिप्त विवरण : चार बच्चे एक नदी के पास खेल रहे थे और वे तैरने के लिए नदी में उतरे। जब उन्होंने देखा कि नदी प्रदूषित है तो उन्होंने इस समस्या को दूर करने का फ़ैसला किया। उन्होंने अपने गाँव के एक डॉक्टर से सम्पर्क किया जिन्होंने उन्हें प्रदूषण दूर करने के सम्भावित तरीक़ों के बारे में बताया। इसके बाद बच्चों ने पंचायत के सदस्यों से सम्पर्क किया जिन्होंने स्थिति को सुधारने के लिए समुदाय-स्तरीय समर्थन जुटाने में उनकी मदद की। बच्चों ने सामुदायिक जागरूकता के लिए कार्यक्रम शुरू करने, सूखे और गीले कचरे के लिए अलग-अलग कूड़ेदान रखने और समुदाय के सदस्यों द्वारा ज़िम्मेदारीपूर्ण आचरण सुनिश्चित करने का निर्णय लिया।

अनुवर्ती गतिविधियाँ

खोजबीन : अपने समुदाय में एक ऐसी समस्या की पहचान करें जिसे आप हल करना चाहते हैं। उन संसाधनों की सूची

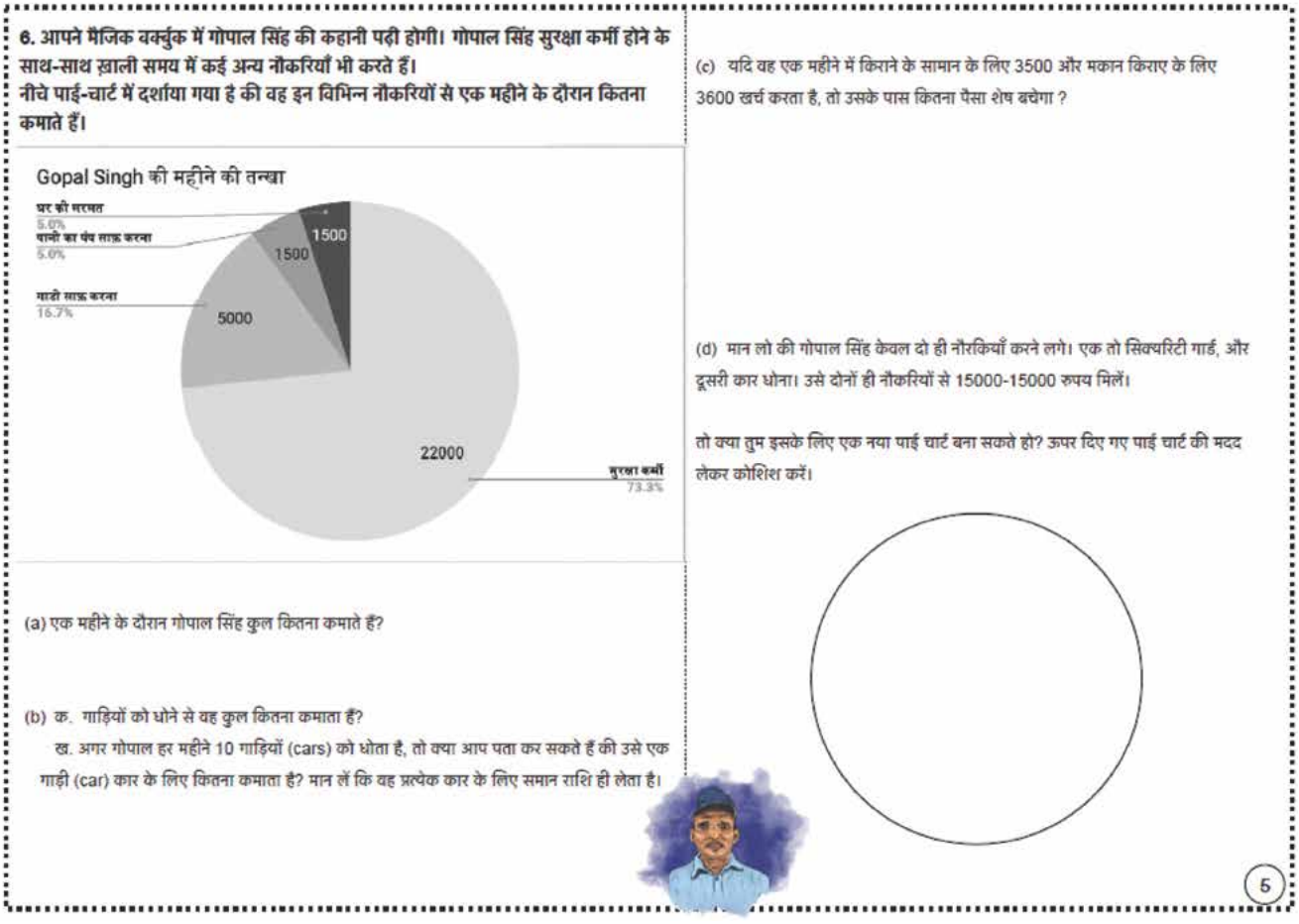

बनाएँ जो उस समस्या का समाधान करने में आपकी सहायता कर सकते हैं। इस काम को करने में आपके सामने आने वाली सम्भावित चुनौतियों की कल्पना करने का प्रयास करें। ऐसे तरीक़े खोजें जिनसे आप इन चुनौतियों का सामना कर सकें। अपने शिक्षक की मदद से अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए एक महीने की योजना बनाएँ। एक कविता या पत्र लिखकर या एक पोस्टर बनाकर अपने अनुभव अपने दोस्तों और परिवार के साथ साझा करें।

कहानियाँ क्यों कारगर होती हैं?

कहानियाँ इसलिए कारगर होती हैं क्योंकि उनसे पाठकों को अन्य लोगों के अनुभव से जुड़ने का अवसर मिलता है। वैसे जो बात मायने रखती है, वह यह है कि इन कहानियों का निरूपण किस तरह से किया गया है। बच्चों के साथ इन कहानियों पर चर्चा करते हुए मुझे जो अन्तर्दृष्टि प्राप्त हुई उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

1) इन कार्य-पुस्तिकाओं में उपयोग की गई कहानियाँ बच्चों के परिवेश पर आधारित थीं। यह बात पात्रों के नाम और कहानियों में दिखाए गए स्थानों में परिलक्षित होती थी। हालाँकि कुछ कहानियाँ प्रथम बुक्स और PARI से ली गई थीं। अधिकांश कहानियाँ बच्चों के इस समूह के लिए ख़ासतौर से डिज़ाइन की गई थीं। विषय-सामग्री को डिज़ाइन करने वाली टीम में स्थानीय समुदाय के एक व्यक्ति को शामिल किया गया था, अतः ये कहानियाँ प्रामाणिक थीं और इनसे जुड़ाव महसूस किया जा सकता था। दिलचस्प बात यह है कि ये कहानियाँ बच्चों के अपने गाँव (गुलार) से शुरू होकर पास के एक नगर (ऋषिकेश) फिर उनके राज्य की राजधानी (देहरादून) और फिर देश की राजधानी (दिल्ली) तक आगे बढ़ीं। काफ़ी बाद में ये कहानियाँ देश के दूसरे राज्य (राजस्थान) के एक ऐसे ही गाँव (तिलोनिया) तक पहुँचीं। आगे बढ़ने का यह तरीक़ा शिक्षण-अधिगम के एक मूल सिद्धान्त के अनुसार था – ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ना।

2) इन कहानियों का महत्त्वपूर्ण तत्व यह था कि इसमें पात्रों के साथ भावनात्मक जुड़ाव बनाने की गुंजाइश थी। पात्र या तो उसी आयु वर्ग के थे, जिस आयु वर्ग के वे बच्चे (यानी पाठक) थे या उन्हें ऐसे लोगों के रूप में प्रस्तुत किया गया था जिनसे बच्चे जुड़ाव बना सकते हैं। उदाहरण के लिए, पात्रों को सुखीराम चाचा या रहीम चाचा के नाम से पुकारा गया, जिससे इस बात में बड़ा फ़र्क़ पड़ा कि बच्चों ने इन पात्रों से सम्बन्धित समस्याओं या प्रश्नों को किस दृष्टि से देखा।

B. जैसे हमने दिव्या के मूल्य/सोच के बारे में बात की थी वैसे ही हम इन तीन लोगों के मूल्य और सोच की बात करेंगे जिससे उन्होंने अपने सपने पूरे किए।

नीचे कुछ एसे ही मूल्य और सिद्धांत लिखे हैं। **आपको क्या लगता हैं की इनमे से दिव्या में कौनसे मूल्य /सोच हैं, उन पर टिक लगाए।**
यह भी लिखे की उसने कैसे और कहाँ इन मूल्यों को दर्शाया?

	दृढ़ निश्चय (grit) (हार ना मानना)	सहानुभूति (empathy) (लोगों के लिए हमदर्दी)	सेवा भाव (service) (लोगों की सेवा करने की इच्छा)	जिज्ञासा (curiosity) (कुछ जानने की इच्छा)
आरती जी				
हनुमान जी				
रामी बाई उदाहरण ✓ वह एक ऐसी स्थिति में पली-बढ़ी, जहाँ महिलाओं को काम करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता था फिर भी उन्होंने हार नहीं मानी				

C. नीचे दिए प्रश्नो का उत्तर लिखे :

1. What were the challenges faced by Rami bai after she joined full-time at barefoot? रामी बाई को बाएरफूट से जूदने के बाद क्या समस्याएँ आइ?

2. What do you mean by this statement 'by the people, for the people and of the people'. आप **"लोगों के लिए, लोगों द्वारा और लोगों का"** से क्या समझते हैं?

3. Do you think the development of the community was possible without the local people involved? Give reason. क्या आप को लगता हैं इस समुदाय का विकास हो पता अगर स्थानिए लोग नहीं जुड़ते? अपने कारण लिखे।

4. What enabled Arti Gujjar and Rami Bai to pursue their dreams and eventually, to be successful in their respective career choices, despite having limited or no formal education?आरती जी और रामी बाई की कोई औपचारिक शिक्षा नहीं थी, फिर भी वह अपने सपने कैसे पूरे कर पाई?

5. How did Hanumanji use his knowledge and passion of plants for the benefit of the community?
हनुमान जी ने अपनी पेड़ पौधों के ज्ञान को अपने समुदाय के अच्छे के लिए कैसे उपयोग किया?

14

3) बच्चों के सामने जो विभिन्न समस्याएँ प्रस्तुत की गईं, उनके आधार के रूप में इन कहानियों का इस्तेमाल किया गया था। गणितीय और भाषा की समस्याओं को कहानियों के मुख्य पात्रों के इर्द-गिर्द बुना गया था। इससे बच्चों को इन पात्रों के साथ अधिक समय गुज़ारने का और उनके साथ रहकर दुनिया का अनुभव करने का मौक़ा मिला। एकीकरण और अन्तर्विषयक पद्धति के उपयोग ने ज्ञान की समग्र प्रकृति को उचित ठहराया।

4) बच्चे कहानी की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को फिर से याद कर सकें, इसके लिए अनुवर्ती गतिविधियों को नए तरीक़े से डिज़ाइन किया गया था। उदाहरण के लिए, बच्चों को केन्द्रीय पात्रों के जीवन का घटनाक्रम बनाने के लिए कहा गया ताकि वे उनके जीवन को फिर से देख सकें। इसी तरह, जिन विभिन्न पात्रों ने केन्द्रीय पात्रों के जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, उनका चित्रण करने के लिए माइंड मैप्स का इस्तेमाल किया गया। इससे बच्चे मानवीय सम्बन्धों के महत्त्व को स्वीकार कर पाए। इसी तरह विभिन्न कहानियों के केन्द्रीय पात्रों के जीवन में समानता और अन्तर को उजागर करने और बच्चों के लिए आम और साझा मानवता के विचार की समझ बनाने के लिए वेन आरेखों (Venn diagrams) का उपयोग किया गया था।

5) कहानियाँ केवल पढ़ने के लिए नहीं बल्कि अनुभव करने के लिए थीं। नतीजतन, बच्चों को कहानियों में प्रवेश करने और उन्हें फिर से लिखने के लिए विस्तृत गतिविधियों को डिज़ाइन किया गया था। कहानियों को फिर से लिखने का अवसर जान-बूझकर दिया गया था ताकि बच्चों में क्रिया-उन्मुख प्रवृत्ति पैदा की जा सके। कभी-कभी उन्हें अपने आस-पास की दुनिया का अनुभव कई अनकही कहानियों के संग्रह के रूप में कराया जाता था। उदाहरण के लिए, बच्चों ने लोगों से बातचीत करके आजीविका और प्रवास की अवधारणा को समझा। इस तरह उन्हें अपने पड़ोसियों से बात करने और ज़मीन से कहानियाँ इकट्ठी करने का मौक़ा मिला। इसके बाद एक चिन्तन अभ्यास किया गया जहाँ उन्होंने अपने आस-पास के लोगों से 'सीखने की सीख' सीखी।

6) कहानियों को इस तरह बनाया गया था कि उनसे समानता, समानुभूति, धैर्य व सेवा जैसे मूल्य व कौशलों के साथ-साथ सहयोग, जिज्ञासा और रचनात्मकता का विकास हो सके। बच्चों से कहा गया कि कहानियों को पढ़ने के बाद उन्हें जो महसूस हुआ उसे साझा करें। उन्हें इन एहसासों को पहचानने और लेबल करने के लिए 'भावना कार्डों' का इस्तेमाल करना था। यह एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास था क्योंकि कुछ स्थितियों में तो वयस्कों के लिए भी यह बताना मुश्किल होता है कि वे क्या महसूस कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें विभिन्न पात्रों के गुणों को लिखने और उसके लिए साक्ष्य देने के लिए कहा गया था। इससे इस बात को बल मिला कि किसी भी बदलाव को सम्भव बनाने के लिए इन मूल्यों का कितना महत्त्व है। अन्ततः, मुख्य पात्रों पर सवाल उठाने का जो अवसर बच्चों को दिया गया (कार्यपुस्तिका में कहानियों के अन्त में अनिवार्य स्थान के रूप में), उससे बच्चे प्रश्न पूछना सीखने के लिए प्रेरित हुए। यह एक ऐसा गुण है जो किसी व्यवस्था में आमतौर पर विकसित करते नहीं देखा जाता। हालाँकि आठ सप्ताह तक बार-बार सुदृढ़ीकरण के बाद भी लड़कियाँ तथ्यात्मक प्रश्न पूछती रहीं। लेकिन इससे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। सबके बावजूद यह ऐसा अभ्यास है जिस पर समय और ऊर्जा लगाना प्रत्येक शिक्षक के लिए मूल्यवान होगा।

7) कथा साहित्य और कथेतर साहित्य के मिले-जुले इस्तेमाल से बच्चे जो कुछ पढ़ रहे थे, उसकी प्रासंगिकता और उपयोग को समझने में मदद मिली। उदाहरण के लिए, अपने ही राज्य के एक युवा परिवर्तनकारी के बारे में जानने से उन्हें स्थापित परिपाटियों के ख़िलाफ़ जाने और अपने समुदाय में बदलाव लाने में मदद मिल सकती है। इसी तरह, बच्चों को समुदाय-संचालित परिवर्तन की शक्ति से परिचित कराने के लिए बंकर रॉय (संस्थापक, बेयरफुट कॉलेज, तिलोनिया) के साथ-साथ आरती देवी और हनुमान जी (तिलोनिया गाँव के मूल निवासी) के बारे में कहानियाँ शामिल की गईं। इस तरह की कहानियों ने उन्हें अपनी वास्तविकताओं और सफलता के बारे में अपने विचारों को परिभाषित करने के लिए भी प्रेरित किया। उन्हें अपने आस-पास के संसाधनों की पहचान करने और स्थानीय समस्याओं के समाधान में इन संसाधनों का उपयोग करने वाली योजनाएँ बनाने के लिए सक्षम किया गया। एक तरह से देखा जाए तो उन्हें अपनी कहानियों पर फिर से विचार करने का मौक़ा दिया गया ताकि वे सचेतन रूप से यह चुनाव कर सकें कि उन्हें ये कहानियाँ एक विजेता के रूप में लिखनी हैं या एक उत्पीड़ित के रूप में।

कहानियाँ, कौशल और सक्रिय नागरिकता

नागरिकता के लिए शिक्षा को एक सक्रिय नागरिक बनने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल, मूल्यों और प्रवृत्तियों के मेल का विकास करने की तरह समझा जा सकता है (लॉटन, 2000)। जहाँ ज्ञान का घटक सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में शामिल किया गया है, मूल्यों, कौशलों

और प्रवृत्तियों को शिक्षा पद्धति के माध्यम से सुदृढ़ करने की आवश्यकता है। कहानियाँ इन विशेषताओं को विकसित करने का प्रभावी तरीक़ा हैं बशर्ते उन्हें निष्पक्ष रूप से प्रस्तुत किया जाए। कहानियों के अन्त में नैतिक शिक्षा देने की बजाय कहानियों का उपयोग अनुभव प्रदान करने के लिए किया जा सकता है ताकि बच्चे एक आन्तरिक मूल्य प्रणाली विकसित कर सकें।

कहानियों के प्रयोग को कक्षा में बच्चों के साथ किए जाने वाले व्यवहार के साथ जोड़ा जाना चाहिए। पाठ्यक्रम निर्माताओं और शिक्षकों को चाहिए कि वे बच्चों को भविष्य के नागरिक के रूप में देखने की बजाय वर्तमान के नागरिक के रूप में देखें (हाओ और कोवेल, 2009)। अनुभवों को इस तरह से डिज़ाइन किया जाना चाहिए कि बच्चों को यह देखने में मदद मिल सके कि वे अपने और अपने समुदायों के जीवन में बदलाव लाने के लिए अभी क्या कर सकते हैं। ये बहुत ही साधारण चीज़ें हो सकती हैं, जैसे, बिजली की निरन्तर आपूर्ति के लिए ग्राम प्रधान को पत्र लिखना या लोकतांत्रिक तरीक़े से बाल संसद का आयोजन करना (जहाँ शिक्षक केवल पूछने पर मार्गदर्शन करते हैं)। संक्षेप में, जब कहानियों को शक्तिशाली अनुभवों के साथ जोड़ा जाता है तो वे दूसरों के अनुभवों को समझने वाले मनुष्यों को विकसित करने महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं, जो अपने, दूसरों और समुदायों के प्रति संवेदनशील होकर काम कर सकते हैं।

References

Howe, R., & Covell, K. (2009). Engaging children in citizenship education: A children's rights perspective. Journal of Educational Thought, 21-44.

Lawton, D. (2000). Citizenship Education in Context. In D. Lawton, J. Cairns, & R. Gardner, Education for Citizenship (pp. 9-13). New York: Continuum Studies in Citizenship.

NCERT. (2005). National Curriculum Framework 2005. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.

ऋचा पाण्डे पाठ्यक्रम विकासकर्ता और सुगमकर्ता हैं जो जीवन कौशल और नागरिकता शिक्षा में रुचि रखती हैं। उन्होंने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु से शिक्षाशास्त्र में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों को पढ़ाते समय शिक्षा को एक प्रक्रिया और प्रणाली के रूप में समझने में उनकी रुचि विकसित हुई। इस अनुभव ने उन्हें जो पढ़ाया जाता है, जो सीखा जाता है और अन्ततः जिसका उपयोग किया जाता है या जिसे लागू किया जाता है, इनके बीच के मौजूदा अन्तराल को पहचानने में मदद की। वे पिछले छह वर्षों से विभिन्न रूपों में बच्चों और युवा वयस्कों के साथ काम कर रही हैं। उनसे richapandey735@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

छठवीं से आठवीं कक्षा तक के सभी बच्चे समानता की अवधारणा से परिचित थे। वे जानते थे कि उनके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता और अगर ऐसा हुआ तो वे मदद माँग सकते हैं। इसलिए, इन सभी कक्षाओं में इस अवधारणा के साथ तत्काल एक जुड़ाव का एहसास हुआ जिसमें समानता की धारणा को बनाए रखने के लिए सराहना का भाव भी था। ऐसा नहीं लगा कि यह पाठ्यपुस्तक में दी गई कोई अनजान अवधारणा है, बल्कि, यह एक ऐसा साकार भाव था जिसके साथ जुड़ा जा सकता था।

- अभिलाषा अवस्थी , स्कूली कामकाज से लोकतंत्र के बारे में सीखना, पेज 24

स्वयं परिवर्तन के वाहक बनें | सीखने का एक अभियान

रोनिता शर्मा और शिल्पी हांडा

'अनुभवात्मक अधिगम की प्रक्रिया में दो लक्ष्य होते हैं। एक है किसी विशेष विषय की बारीकियों को सीखना और दूसरा है अपने सीखने की प्रक्रिया के बारे में सीखना।'

डेविड ए. कोल्ब (David A Kolb)

अनुभवात्मक अधिगम का अर्थ है ऐसे प्रामाणिक उद्देश्य के साथ सीखना, जो ज्ञान, कौशल और चरित्र का विकास करने के लिए, बच्चों के स्थानीय सन्दर्भ से वास्तविक जीवन के अनुभवों का उपयोग एक शैक्षणिक माध्यम के रूप में करता है। वास्तविक और प्रासंगिक अनुभवों पर चर्चा करने से प्रत्येक बच्चे के लिए सीखना अधिक आकर्षक, सार्थक और व्यक्तिगत बन जाता है और यह समस्या-समाधान और निर्णय लेने जैसे महत्त्वपूर्ण कौशलों के विकास में मदद करता है।

अनुभवात्मक अधिगम अपने चार प्रमुख घटकों के माध्यम से, उच्च समीक्षात्मक चिन्तन और सहयोग कौशल प्राप्त करने के अवसर प्रदान करता है। डेविड ए. कोल्ब ने अनुभवात्मक अधिगम की अवधारणा विकसित की जो सीखने की प्रक्रिया को चार बुनियादी सैद्धान्तिक घटकों में विभाजित करती है :

- *ठोस अनुभव*, यानी ऐसा वातावरण प्रदान करना जहाँ बच्चा सभी संज्ञानात्मक आयामों का प्रयोग करते हुए किसी समस्या/स्थिति से जूझता है।

- *चिन्तनशील अवलोकन* बच्चे को अपने वर्तमान कार्य की और गहराई से पड़ताल करने और गम्भीरता से सीखने में मदद करता है।
- *अमूर्त अवधारणा* बच्चे को ज़रा हटकर सोचने, और सीखने के परिणामों को प्राप्त करने के लिए दूसरों के साथ सहयोग करने के लिए प्रेरित करती है। सार्थक अनुभवों के बाद चिन्तन और संवाद बच्चे को सोचने में मदद करते हैं।
- *सक्रिय प्रयोग* लक्ष्य, यानी वास्तविक और सार्थक समझ, के करीब होता है।

अधिकारों की अवधारणा का परिचय

भारतीय स्कूलों में लोकतंत्र की अवधारणा, भारत के संविधान और मौलिक अधिकारों से बच्चों का परिचय आमतौर पर मिडिल और सेकेण्डरी स्कूल में कराया जाता है। एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों में मौलिक अधिकारों का विषय, छठी कक्षा से क्रमश: शामिल किया जाता है। इस उम्र में इन अधिकारों की प्रकृति कुछ हद तक अमूर्त प्रतीत होती है। इसलिए इनका परिचय देने के लिए बड़े ध्यान से विभिन्न निरूपणों, विवरणों, राजनीतिक कार्टून आदि का प्रयोग किया जाता है। इन्हें और अधिक ठोस रूप में समझाने का एक अन्य तरीका है *बाल अधिकारों* से परिचय कराना। सीखने का इससे बेहतर तरीक़ा और क्या हो सकता है कि आप बच्चों को अनुभव करने दें और फिर वे उस पर चिन्तन करें!

द हेरिटेज स्कूल, गुड़गाँव, में सीखने और सिखाने के लिए अनुभवात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। हमने इस स्कूल में एक अभियान के माध्यम से शिक्षकों के रूप में काम किया और उस अनुभव को हम इस लेख के माध्यम से साझा कर रहे हैं।

बी द चेंज अभियान का विचार इसलिए आया ताकि सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक में दी गई अमूर्त अवधारणाओं को ठोस रूप दिया जा सके और विद्यार्थी उन्हें आसानी-से समझ सकें। शिक्षकों के एक समूह ने एनसीएफ 2005 और कॉमन कोर स्टैंडर्ड्स (संयुक्त राज्य अमेरिका) के अनुसार कक्षा VI और VII की सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों की अवधारणाओं पर विचार-मन्थन किया। इस कार्य में हमारे ज्ञान-भागीदार, *दिशा इंडिया सेंटर फ़ॉर एक्सपीरिएंशियल*

लर्निंग ने रूपरेखा की संकल्पना करने में मदद की जैसे मुख्य विचारों, मूल अवधारणाओं और अभियान के मार्ग को तय करना।

सीखने का अभियान क्या है?

सीखने के अभियान अन्तर-अनुशासनात्मक होते हैं और इनका उद्देश्य होता है कि प्राकृतिक व सामाजिक विज्ञान, साक्षरता और संख्या ज्ञान की विषय-सामग्री और कौशलों को सर्वोत्तम सम्भव तरीकों से एकीकृत किया जाए। यह पद्धति शिक्षार्थियों को पाठ्यपुस्तक की पाठ्यचर्या के परे ले जाती है और उन्हें सतत नियोजन, क्रियान्वयन और चिन्तन के माध्यम से उत्कृष्टता तक पहुँचने के कई अवसर देती है। सीखने के सभी अभियान बच्चों को देखने, सोचने, चिन्तन करने, विश्लेषण करने, संश्लेषण करने और गहराई से समझने के लिए सशक्त बनाने का प्रयास करते हैं। विस्तृत जाँच-पड़ताल का उपयोग करते हुए, सीखने के ये अभियान विद्यार्थियों को समुदाय व फ़ील्ड में ले जाते हैं और विशेषज्ञों को उनकी कक्षाओं में लाते हैं ताकि वे वास्तविक जीवन के सीखने के अनुभवों के साथ विद्यार्थियों को जोड़ सकें।

अभियान को खोज से जोड़ना

खोज, शिक्षण की एक विधा है जो बच्चों को उनके घरों से परे वास्तविक दुनिया का अनुभव करने और सीखने का सही उद्देश्य खोजने के अवसर प्रदान करती है। बच्चे अपने स्थानीय इतिहास, प्राकृतिक विरासत, वनस्पति-जीव वर्ग, जनसांख्यिकी के साथ में सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक व्यवस्थाओं की बनावट, खाकों और कामकाज तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों का पता लगाते हैं। इससे उन्हें अपने स्थानीय समुदाय से बेहतर ढंग से जुड़ने और उसे समझने में मदद मिलती है, जिसके चलते वे अपने समुदाय की बेहतरी हेतु ज़िम्मेदारी लेने के लिए समर्थ और सशक्त हो पाते हैं।

यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि इस तरह के प्रत्येक अभ्यास या अनुशंसा के केन्द्र में समावेशन के प्रति एक मज़बूत प्रतिबद्धता और यह विश्वास होता है कि हर कक्षा में और हर सन्दर्भ में बच्चों की क्षमताओं और रुचियों में व्यक्तिगत अन्तर होते ही हैं।

अभियान के चरण

मुख्य विचार : प्रत्येक अभियान का आधार विद्यार्थियों में विकसित होने वाली स्थायी समझ होती है जो आने वाले कई वर्षों तक उनके साथ रहती है।

मार्गदर्शक प्रश्न : ये प्रश्न मुख्य विचार पर ध्यान केन्द्रित करने और उसे प्राप्त करने में मदद करते हैं। मुख्य विचार से उत्पन्न ये मार्गदर्शक प्रश्न अभियान को दिशा प्रदान करते हैं और उसकी सीमा भी निर्धारित करते हैं।

हुक (hook) : सीखने के सभी अभियान बच्चों के स्थानीय सन्दर्भ से एक गहन अनुभव के साथ यात्रा शुरू करते हैं जो उनका ध्यान बाँधे रखता है और उनमें जिज्ञासा जगाता है और इन्हें आमतौर पर हुक कहा जाता है।

अभियान और खोज के माध्यम से सीखना

स्कूल की प्रत्येक कक्षा को एक वर्ष की अवधि के लिए दो विषयों की ज़िम्मेदारी दी जाती है। शिक्षकों को सामाजिक विज्ञान या विज्ञान के शिक्षक के रूप में नहीं बल्कि अभियान के शिक्षकों के रूप में देखा जाता है। 2013 में, (जब हमने वहाँ काम किया था) अभियान के लिए दो महत्त्वपूर्ण विषयों को लिया गया :

1. मानव शरीर – जिसमें विज्ञान विषय के सीखने के परिणामों पर ध्यान केन्द्रित किया गया।
2. स्वयं परिवर्तन के वाहक बनें या *बी द चेंज* – जिसमें सामाजिक विज्ञान विषय के सीखने के परिणामों पर ध्यान केन्द्रित किया गया।

चूँकि किसी भी तरह का सीखना पृथक रूप से नहीं हो सकता, इसलिए यह बेहद ज़रूरी है कि बच्चे चीज़ों को एक-दूसरे के सह-सम्बन्ध में देख सकें।

संविधान के मूल विचारों (विविधता, समानता, लोकतंत्र, अधिकार और कर्तव्य) को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों ने मुख्य विचार और मार्गदर्शक प्रश्न तैयार किए। सबसे पहले, शिक्षकों ने बच्चों को अभियान के साथ बाँधने के लिए, उन्हें एक अलग सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के बच्चों के बारे में एक वीडियो दिखाया। फिर हमने अख़बारों में छपे कुछ लेखों की बात की जो शहरी और ग्रामीण बच्चों, निराशा से गुज़र रहे परिवारों के बच्चों, माता-पिता के व्यक्तिगत अनुभवों, माता-पिता के साथ समय बिताने के बारे में बात करती एक बच्ची आदि के बारे में थे।

पृष्ठभूमि के ज्ञान का निर्माण

अभियान का अगला चरण था पृष्ठभूमि के ज्ञान का निर्माण या *बिल्डिंग बैकग्राउंड नॉलेज* (*बीबीके*) जो एक क्रमाचार (प्रोटोकॉल) है और जिसमें एक ऐसी महत्त्वपूर्ण चर्चा होती है जो बच्चों को अपने ज्ञान को बढ़ाने तथा अभियान के बारे में और अधिक जानकार बनने में मदद करती है। यह विद्यार्थियों को अपनी समझ को और गहरा करने के लिए पढ़ने, सोचने और प्रश्न उठाने में सक्षम बनाती है। *बीबीके*, अभियान को स्पष्ट करने और मुख्य विचार को गढ़ने में मदद करता है।

बच्चों के विशेष अधिकार इस प्रकार से हैं :

सुरक्षित वातावरण का अधिकार
भोजन का अधिकार
स्वास्थ्य सेवा का अधिकार
शिक्षा का अधिकार
बाल विवाह के ख़िलाफ अधिकार
स्वतंत्रता का अधिकार
भेदभाव से मुक्त होने का अधिकार
दुर्व्यवहार से सुरक्षा का अधिकार
शोषण और उपेक्षा से सुरक्षा का अधिकार
सुने जाने और स्वतंत्रता से भागीदारी करने का अधिकार
विश्राम और अवकाश का अधिकार
पारिवारिक जीवन का अधिकार

इस सन्दर्भ में, शिक्षकों ने अधिकार, कर्तव्य, भेदभाव, न्याय जैसे मुख्य शब्दों का अर्थ समझाने की कोशिश की और 'विविधता' व 'समानता' की अवधारणाओं के बारे में विद्यार्थियों की समझ को मज़बूत करने के लिए कई लेखों के पठन और समूह चर्चाओं का प्रयोग किया।

अभियान का मार्ग

लक्ष्य यह था कि मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों को अधिकारों के बारे में सामान्य रूप से और बाल अधिकारों के बारे में विशेष रूप से बताया जाए, जैसा कि राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर) द्वारा प्रस्तावित किया गया है। एनसीपीसीआर का अधिदेश यह सुनिश्चित करना है कि सभी कानून, नीतियाँ, कार्यक्रम और प्रशासनिक तंत्र भारत के संविधान और बाल अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में प्रतिष्ठापित बाल अधिकारों के अनुरूप हों। कोई भी व्यक्ति जो 0-18 वर्ष के आयु वर्ग में आता हो, बच्चे के रूप में परिभाषित किया गया है।

विश्राम और अवकाश का अधिकार

मुख्य विचार से हम अधिकारों के विचार को ठोस बनाने की ओर बढ़े। इसके लिए हमने शिक्षार्थियों का परिचय बाल अधिकारों से करवाया। बारह बाल अधिकारों में से हमने 'विश्राम और अवकाश का अधिकार' पर ध्यान केन्द्रित किया। यूएनसीआरसी के अनुच्छेद 31 के अनुसार बच्चे को पर्याप्त विश्राम व अवकाश का, और अपनी उम्र के लिए उपयुक्त खेल व मनोरंजक गतिविधियों में शामिल होने का अधिकार है।

स्कूल में बाल अधिकारों के विषय पर गहराई से विचार किया गया और विद्यार्थियों ने यह पता लगाने के लिए, कि क्या वे किसी अधिकार से वंचित हैं, एक प्रश्नावली बनाई। डेटा एकत्र करने के लिए भी इसी प्रश्नावली का उपयोग किया गया। विद्यार्थियों ने अपने आस-पड़ोस में अन्य बच्चों के साक्षात्कार लिए और प्रमुख मुद्दों को खोजने के लिए डेटा का विश्लेषण किया। जब विद्यार्थी सक्रिय रूप से साक्षात्कार ले रहे थे, डेटा का व्यवस्थापन और विश्लेषण कर रहे थे, उसी समय कक्षा में वे ऐसे विभिन्न व्यक्तियों और समूहों के बारे में गहराई से पढ़ रहे थे जो प्रत्येक बच्चे को उन अधिकारों को दिलाने के काम में लगे हुए थे जिनके वे हक़दार हैं।

ज़रूरतें और अधिकार

पहली गतिविधि का आयोजन अधिकार और आवश्यकता के बीच के अन्तर को समझने के लिए किया गया। इसे यूनिसेफ की टूलकिट, डायवर्शन एंड ऑल्टरनेटिव्स टू डिटेंशन 2009; गतिविधि 27 : पानी का गिलास, से लिया गया था। इसका उद्देश्य था अधिकारों के बारे में प्रतिभागियों की मौजूदा समझ को उजागर करना और ज़रूरतों व अधिकारों के बीच के महत्त्वपूर्ण अन्तरों को स्पष्ट करना।

इन दो कथनों में क्या अन्तर है : 'मुझे एक गिलास पानी की *ज़रूरत* है' और 'मुझे एक गिलास पानी का *अधिकार* है।' कौन-सा ज़्यादा वज़नदार है? क्यों? इस गतिविधि के माध्यम से विद्यार्थियों ने देखा कि ज़रूरतों और अधिकारों के बीच मुख्य अन्तर अधिकारों का दावा करने वाले व्यक्ति (अधिकार-धारक) और उन अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए ज़िम्मेदार व्यक्ति (कर्तव्य-धारक) के बीच का सम्बन्ध है।

बज्जू गाँव की यात्रा का कार्यक्रम

उरमूल (ग्रामीण स्वास्थ्य, अनुसन्धान एवं विकास) ट्रस्ट, बीकानेर के सहयोग से यात्रा के एक कार्यक्रम (खोज) का आयोजन किया गया। यह ट्रस्ट समाज में बच्चों की स्थिति को मज़बूत करने की दिशा में काम कर रहा है। यह रेगिस्तान में अवसरों को मज़बूत करने और बच्चों के जीवन को सुनिश्चित करने के लिए समुदायों, स्थानीय अधिकारियों तथा नीति-निर्माताओं के साथ भी व्यवस्थित रूप से काम करता है। यह बाल अधिकारों की वकालत में भी संलग्न है और *चाइल्डलाइन 1098* चलाता है। हम गाँव के एक सरकारी स्कूल के विद्यार्थियों के साथ काम करना चाहते थे तथा बाल अधिकारों और विशेष रूप से *विश्राम और अवकाश के अधिकार* के प्रति उनकी जागरूकता को समझना चाहते थे।

बज्जू गाँव की यात्रा के कार्यक्रम को इस तरह से रचा और संकल्पित किया गया था कि हम दो अलग-अलग सन्दर्भों में एक ही अधिकार की समझ विकसित कर सकें।

बीकानेर के बज्जू गाँव के एक सरकारी स्कूल का चयन किया गया और डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए बज्जू शासकीय शाला के विद्यार्थियों ने वही प्रक्रिया अपनाई जो हेरिटेज स्कूल में अपनाई गई थी।

इस समय तक सभी युवा मन विभिन्न प्रश्नों से भर गए थे और उनकी उत्सुकता बढ़ती ही जा रही थी, कि तभी हमारी बहुप्रतीक्षित पाँच दिवसीय सीखने की यात्रा, *खोज,* पर निकलने का समय आ गया। हेरिटेज स्कूल के विद्यार्थियों और शिक्षकों ने बज्जू गाँव तक की यात्रा ट्रेन से की और उन्हें उरमूल गेस्ट हाउस में ठहराया गया।

हेरिटेज स्कूल के विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए सरकारी स्कूल, बज्जू के विद्यार्थियों के साथ मिलकर काम करना बिल्कुल अलग अनुभव था। छोटे समूहों में एक साथ एक दिन बिताने और शुरुआती झिझक तोड़ने वाले खेल खेलने के बाद उनके आपसी सम्बन्ध विकसित होने लगे। हमें बच्चों से जो डेटा प्राप्त हुआ, वह बालिकाओं के सन्दर्भ में काफी भिन्न था। इससे यह संकेत मिला कि गाँव में बालिकाओं को खेलने

के लिए समय नहीं मिलता था, क्योंकि उन्हें घर के काम करने होते थे और गुड़गाँव शहर में लड़कियों की सबसे बड़ी समस्या सुरक्षा की थी।

बच्चे शाम को रेत के टीलों पर बैठकर सूर्यास्त का दृश्य देखते और इस बात पर चिन्तन करते कि शहर में बच्चों का जीवन गाँव के उसी उम्र के बच्चों के जीवन से कैसे अलग है। गहरी बातचीत और विचारशील भाव कभी-कभी दर्दनाक भी रहे और कई लोगों की आँखें भर आईं। और इस मोड़ पर आकर हमने अपने अगले मूल विचार - सक्रिय और जागरूक नागरिक – को आगे बढ़ाया। हमारे विद्यार्थियों ने फ़ैसला किया कि वे लोगों को बाल अधिकारों के बारे में जागरूक करेंगे और फिर वे झटपट अपनी कार्यवाही, यानी अन्तिम उपलब्धि, की तैयारी में लग गए।

अभियान की अन्तिम उपलब्धि

विद्यार्थियों के निर्णय के अनुसार, अभियान के अन्त में बाल अधिकारों पर एक *नुक्कड़ नाटक* प्रस्तुत किया गया। हमारे साथ थिएटर से सम्बन्धित दो लोग थे। नाटक की विषयवस्तु, संवाद और पटकथा विद्यार्थियों को इनके साथ मिलकर तैयार करने थे, जब-जब उनकी आपस में बातचीत हो पाए। इसलिए हम प्रतिदिन बाल अधिकारों के बारे में जागरूकता पर काम करते, विशेष रूप से, खेलने के अधिकार पर, और इसके लिए हम ऐसी स्थितियाँ बनाते जिनके इर्द-गिर्द वे एक पटकथा तैयार कर सकें।

दो दिन के बाद यह निर्णय लिया गया कि बज्जू स्कूल के विद्यार्थी उरमूल परिसर में पूर्वाभ्यास के लिए आ सकते हैं। प्रतिदिन नाटक का काम आगे बढ़ता गया तथा संवाद, पटकथा और अभिनेता अपने अन्तिम रूप में आते गए। आखिरी दिन दोनों स्कूल के विद्यार्थियों ने *'बाल अधिकार'* नाटक प्रस्तुत किया।

गुड़गाँव लौटने के बाद, हेरिटेज स्कूल के विद्यार्थियों ने अँग्रेज़ी में *'द पावर विदिन मी'* और हिन्दी में *'बाल अधिकारों की खोज'* विषयों पर नियत लिखित कार्य किए। इन्हें लिखने के कई दौर चले। एक चेकलिस्ट प्रदान की गई थी जिसके आधार पर स्वयं और साथियों द्वारा इनका आकलन किया गया। गुड़गाँव की सड़कों पर नाटक के प्रदर्शन के बाद, विद्यार्थियों को सीखने के लक्ष्यों के आधार पर स्व-आकलन करने के लिए कहा गया। इस पूरे अभियान के दौरान, एक चेकलिस्ट और निर्देशों/नियमों की एक सूची की मदद से बने सीखने के लक्ष्यों ने हमें शिक्षार्थियों को कार्य में लगाए रखने और सफलता के साथ *बी द चेंज* अभियान को पूरा करने में मदद की।

इस अभियान का एक अन्य आकर्षण लीला सेठ के साथ स्कूल में आयोजित एक मुलाकात थी। लीला सेठ (Leila

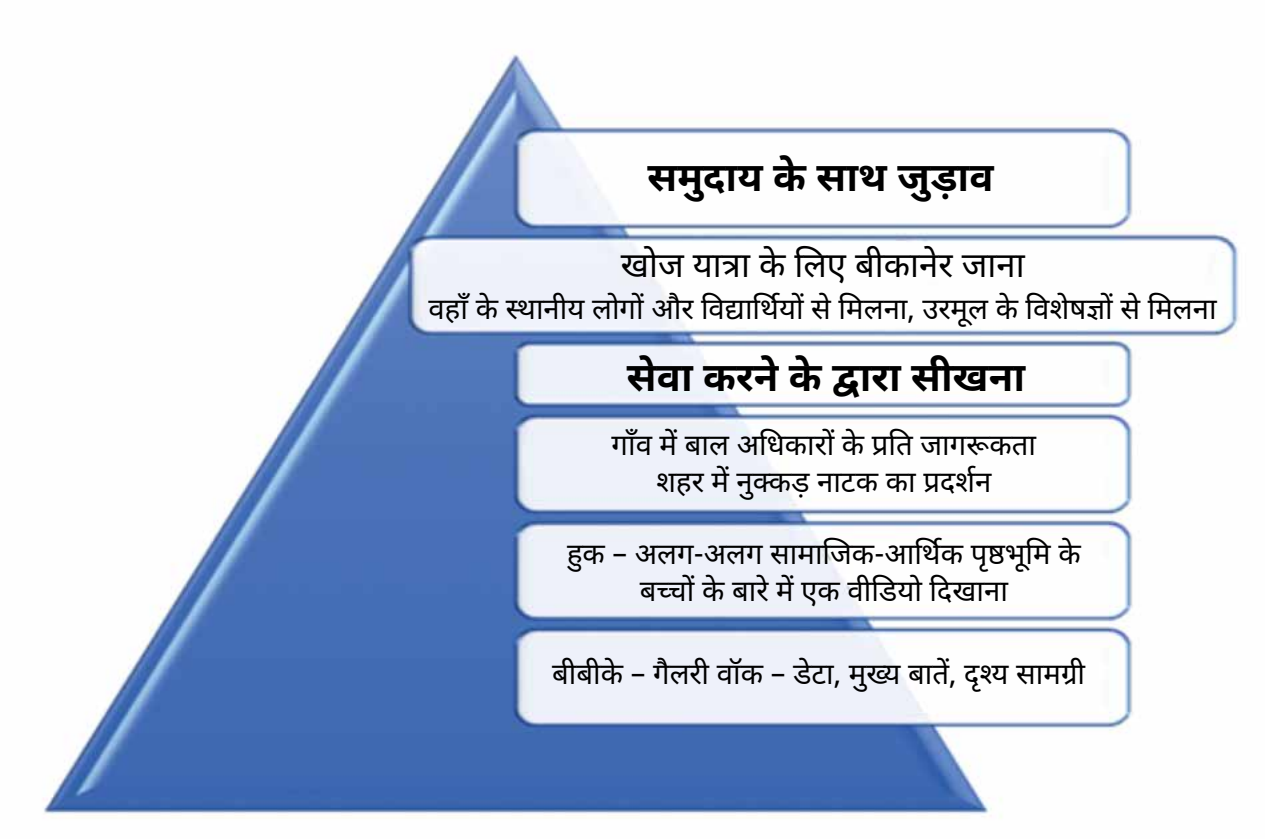

Seth, 1930-2017) दिल्ली उच्च न्यायालय की पहली महिला न्यायाधीश और किसी राज्य के उच्च न्यायालय की मुख्य न्यायाधीश बनने वाली पहली महिला थीं; उन्होंने *वी द चिल्ड्रन* नामक पुस्तक भी लिखी जो बच्चों को भारत के संविधान से परिचित कराती है।

निष्कर्ष

यह अभियान हम शिक्षकों के दिल के बहुत क़रीब है क्योंकि इस पूरे क्रम में हम यह देख पाए कि युवा दिमाग़ कैसे जानकारी प्राप्त कर रहे थे और परिवर्तन लाने के साझा लक्ष्य की दिशा में एक-दूसरे के साथ कैसे सहयोग कर रहे थे। वैसे तो यह माना जाता है कि बच्चों के लिए अधिकार, लोकतंत्र और समानता जैसी अवधारणाओं को समझाना मुश्किल होता है, लेकिन उनके गहरे चिन्तन ने हमारे इस विश्वास को मज़बूत किया कि भली-भाँति तैयार की गई शैक्षणिक कार्यनीतियों और गतिविधियों के द्वारा इन बातों को भी उन्हें स्पष्ट रूप से समझाया जा सकता है। पूरे अभियान के दौरान शिक्षकों के रूप में हमारी भूमिका यही थी कि हम उनकी सोच को आगे बढ़ाने और उन्हें सक्रिय व सुविज्ञ नागरिक बनने की क्रियाशीलता की ओर प्रेरित करें।

सीखने के लक्ष्य

सामाजिक विज्ञान	● मैं उदाहरणों का उपयोग करके विविधता, भेदभाव और असमानता के बीच अन्तर कर सकती/सकता हूँ। ● मैं इस बात का मूल्यांकन कर सकती/सकता हूँ कि पूर्वाग्रह, मेरे आसपास मौजूद असमानता में कैसे योगदान देता है। ● मैं लोकतंत्र के कामकाज को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्वों की पहचान कर सकती/सकता हूँ। ● मैं इस बात का औचित्य सिद्ध कर सकती/सकता हूँ कि एक शासनतंत्र के रूप में लोकतंत्र, समाज में समानता, गरिमा और न्याय सुनिश्चित करने के लिए किस तरह अनुकूल है। ● मैं संविधान के ऐसे विशिष्ट अंशों का उल्लेख कर सकती/सकता हूँ जो सभी के लिए समानता और न्याय सुनिश्चित करते हैं। ● मैं अपने आस-पास के वास्तविक जीवन में हो रहे भेदभाव के उदाहरणों का विश्लेषण करने के लिए संविधान के विशिष्ट अंशों को चुन सकती/सकता हूँ। ● मैं अपने समुदाय में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के क्रियान्वयन का मूल्यांकन कर सकती/सकता हूँ। ● मैं अपने आस-पास के समाज में मौजूद लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं की पड़ताल करने वाले, और उनके गहरे विश्लेषण में मदद करने वाले महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठा सकती/सकता हूँ।
पढ़ना	● मैं किसी पाठ्यसामग्री को समझने के लिए समझने-बूझने की युक्तियों का उपयोग कर सकती/सकता हूँ। ● मैं दिए गए पाठ से आवश्यक जानकारी निकालने के लिए ध्यानपूर्वक पढ़ने की कार्यनीतियों का उपयोग कर सकती/सकता हूँ।
लिखना	● मैं विश्लेषण, चिन्तन और शोध का समर्थन करने के लिए विभिन्न पाठ्यसामग्रियों से साक्ष्य प्राप्त कर सकती/सकता हूँ और उसे आवश्यक प्रारूप में प्रस्तुत कर सकती/सकता हूँ।
बोलना	● मैं निर्धारित प्रारूप का पालन करते हुए अपनी समझ को आत्मविश्वास के साथ, स्पष्ट और व्यवस्थित तरीके से प्रस्तुत कर सकती/सकता हूँ।
समीक्षात्मक रूप से सोचना	● मैं ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठा सकती/सकता हूँ जो समाज में मौजूद लोकतांत्रिक प्रक्रिया के गहरे विश्लेषण में सहायक होते हैं और उसे प्रमाणित करते हैं।
चरित्र और संस्कृति	● मैं अपने काम को बेहतर बनाने के लिए रचनात्मक फीडबैक माँग सकती/सकता हूँ और दूसरों के काम को बेहतर बनाने के लिए रचनात्मक फीडबैक दे सकती/सकता हूँ। ● मैं अपने समूह के सभी सदस्यों को भाग लेने के समान अवसर देकर समावेशी हो सकती/सकता हूँ। ● मैं अपनी बात कहने वाले व्यक्ति की बातें ध्यान से सुनकर सम्मान प्रदर्शित कर सकती/सकता हूँ।
दृश्य एवं रंग कलाएँ	● मैं अपने इलाके के लिए अभियान चलाने हेतु नुक्कड़ नाटक का उपयोग एक माध्यम के रूप में कर सकती/सकता हूँ।

शिल्पी हांडा बच्चों के सामाजिक-भावनात्मक विकास में गहरी रुचि रखने वाली एक उत्साही शिक्षिका हैं। वे 12 वर्षों से *हेरिटेज एक्सपीरिएंशियल लर्निंग स्कूल*, गुड़गाँव के साथ मिडिल प्रोग्राम पाठ्यचर्या के लिए एक अनुदेशक नेतृत्वकर्ता के रूप में जुड़ी हुई हैं। उन्होंने एक प्रशिक्षक के रूप में काम करते हुए शिक्षकों को प्रशिक्षण भी दिया है। उन्होंने रसायनविज्ञान में विशेषज्ञता के साथ दिल्ली विश्वविद्यालय से विज्ञान विषय में स्नातक की उपाधि प्राप्त की है। वर्तमान में वे स्वीडन के एक स्कूल में कार्यरत हैं। उनसे shilpi.nischal@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

रोनिता शर्मा अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी में संकाय सदस्य हैं। वे *स्कूल फॉर कंटीन्यूइंग एजुकेशन*, बेंगलूरु में *इंस्टिट्यूट ऑफ असेसमेंट एंड अक्रेडिटेशन* के साथ काम करती हैं। इससे पहले वे उच्च-प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में सामाजिक विज्ञान पढ़ा चुकी हैं। उनसे ronita.sharma@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

नाटक के माध्यम से लोकतंत्र की खोज

संयुक्ता साहा और देविका बेदी

एक वक्त ऐसा आया कि महान मुग़ल बादशाह अकबर इतना महान हो गया कि अपना ही अहितकारी बन बैठा और उसे लगने लगा कि दुनिया की हर चीज़ उसकी मिल्कियत है – घास का हर तिनका, हर पहाड़, ईंट, शहर, सब कुछ! एक दिन दोपहर के समय टहलते हुए ठोकर खाकर वह किसी बड़ी चीज़ पर गिर पड़ा। क्रोध में भरे हुए अकबर ने देखा कि वह अपने ही आँगन के बीच में लेटे हुए एक बूढ़े साधु से टकराया था। बेशक, वह बहुत गुस्से में था और उसने साधु को बाहर निकालने की कोशिश की। लेकिन साधु बिल्कुल भी नहीं घबराया जिससे शहंशाह की झुँझलाहट और बढ़ गई। बूढ़ा साधु उससे इस बारे में बात करने लगा कि दुनिया में कितने लोग रहे हैं, लेकिन कोई भी कभी भी अपने साथ अपने अगले जीवन में कुछ भी नहीं ले गया है – फिर चाहे वह सम्राट ही क्यों न हो। इस दुनिया में हर कोई सिर्फ़ एक मुसाफ़िर के रूप में रहता है और चला जाता है। बहुत सोच-विचार के बाद, जब अकबर को बात समझ में आने लगी तो साधु ने बड़ी चतुराई से अपनी साधु वाली वेशभूषा उतारी और अपनी असली पहचान प्रकट की – असल में वह साधु बहु-प्रशंसित दरबारी बीरबल थे। अब तो महान बादशाह अकबर को बड़ी शर्मिन्दगी महसूस हुई।

रंगकर्मी सफ़दर हाशमी ने बच्चों के लिए यह कहानी एक कविता के रूप में लिखी थी, जिसका शीर्षक था 'दुनिया सबकी'। इसे सफ़दर हाशमी मेमोरियल ट्रस्ट (सहमत) द्वारा इसी नाम से कविताओं के संग्रह में प्रकाशित किया गया था। यह पुस्तिका आगाज़ थिएटर ट्रस्ट की मार्गदर्शक और बुनियाद रही है, जो एक प्रक्रिया और प्रदर्शन के रूप में नाटक के माध्यम से बच्चों, किशोरों और वयस्कों के साथ जुड़ती है। हम नागरिकता को इस रूप में देखते हैं कि यह जो है उस पर सवाल करने की, जो हो सकता है उसकी पड़ताल करने की और अपनी कार्रवाई को नाटक के मंच से परे ले जाने की प्रक्रिया है।

दुनिया सबकी क्यों?

नागरिक वह होता है जो किसी देश में रहता है और उसके अधिकारों और विशेषाधिकारों का आनन्द लेता है, चाहे वह किसी भी वर्ग या सम्प्रदाय से सम्बन्धित हो। सभी नागरिकों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के मूल्यों को बनाए रखने के लिए सक्रिय रूप से राज्य को जवाबदेह ठहराएँ। विविध पहचानों, दृष्टिकोणों और सरोकारों से भरे समाज में संवाद के बिना सकारात्मक कार्रवाई सम्भव नहीं है। और प्रभावी संवाद के लिए ऐसे स्थान की आवश्यकता है जो व्यक्तियों और समूहों में कल्पना, जिज्ञासा और समीक्षात्मक सोच को पोषित करते हों। आगाज़ में, हमारा व्यापक उद्देश्य यही है कि रंगमंच की भाषा के माध्यम से ऐसे अवसर बनाए जाएँ।

आगाज़ की एक अलग इकाई के रूप में कल्पना करने से भी पहले, 'दुनिया सबकी' वह पहला नाटक था जिसे हमने 2010 में तैयार किया था। नाटक के प्रदर्शन के वर्षों के दौरान, हर बार एक नया नाटक प्रस्तुत किया जाता था क्योंकि अभिनेताओं की कहानियाँ बदलती रहती थीं। हर बार वे अपनी व्यक्तिगत कहानियाँ लेकर आते, जो उस समय उनके जीवन के लिए प्रासंगिक हुआ करती थीं। इस प्रकार नाटक अपनी आवाज़ को समझने और उसे दूसरों के साथ साझा करने का एक तरीक़ा बन गया। एक सक्रिय नागरिक के रूप में संवाद शुरू करने की दिशा में यह साहसिक कार्य एक महत्त्वपूर्ण क़दम है। पिछले कुछ वर्षों में हम इस नाटक को कई युवाओं के साथ विभिन्न सन्दर्भों में मिलकर रच रहे हैं। सात से दस दिन तक चलने वाली इन कार्यशालाओं में 'दुनिया सबकी' की कई नई प्रस्तुतियाँ सामने आई हैं और कई अलग-अलग बच्चों की अनेक अलग-अलग कहानियों को अभिव्यक्ति मिली है।

इस लेख में, हम अपने दो अनुभव साझा कर रहे हैं: पहला, दिल्ली पब्लिक स्कूल, श्रीनगर (2017) में कक्षा VII से IX के चालीस बच्चों के साथ काम करने का और दूसरा, 2018 में दिल्ली में सामुदायिक पुस्तकालय परियोजना के शेख़ सराय/खिरकी ग्राम अध्याय (मुख्य रूप से प्रवासी आबादी वाली घनी आबादी वाली शहरी बस्ती) के 9 से 12 आयु वर्ग के 18 सदस्यों के साथ काम करने का।

प्रक्रिया शुरू करना

श्रीनगर के समूह ने अपने स्कूल में कलाओं पर अत्यधिक ज़ोर दिया। यहाँ पर हमने एक-दूसरे के नामों को जानने से भी पहले साथ में खेल खेलकर सत्र की शुरुआत की। इससे हम सभी के बीच का आपसी संकोच दूर हुआ और साझा सम्भावनाओं का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। दूसरी ओर, शेख़

सराय में सामुदायिक पुस्तकालय परियोजना के सदस्य उन शैक्षणिक संस्थानों के साथ काम करते हैं जिनके पास कला सम्बन्धी बहुत कम सुविधाएँ हैं। यहाँ पर सबने मिलकर उस सँकरे तहख़ाने को साफ़ किया जहाँ पर हम खेलने वाले थे और इसकी वजह से सबके मन में आने वाली कार्यशाला के प्रति अपनेपन की भावना का विकास हुआ।

एक समूह के रूप में प्रस्तुत होने के लिए हमने एक गोला बनाकर प्रत्येक सत्र की शुरुआत की, जो एक क्रिया पद्धति के साथ-साथ समूह को साथ लाने का एक तरीक़ा भी बन गई। गोल घेरे में हर कोई बाक़ी लोगों को देख सकता है और बाक़ी भी उसे देख सकते हैं। इस प्रकार गोला एक ऐसा पात्र बन जाता है जिसमें हर किसी की उपस्थिति बस जाती है। गोल घेरा पारस्परिक रूप से थामी हुई संरचना का प्रतिबिम्ब है – इसमें कोई भी सामने, बीच में या अन्त में नहीं होता और सभी की इच्छा इसे आकार देती है।

सह-स्वामित्व की इस भावना की पुष्टि आगाज़ की नाटक मण्डली के सदस्यों ने भी की, जो अपनी किशोरावस्था से ही इन सत्रों का संयोजन करते रहे हैं। जब बच्चे/किशोर लगभग अपनी ही उम्र के लोगों के साथ किसी प्रक्रिया का संयोजन व समन्वय करते हैं तो इससे *शिक्षार्थियों* और *शिक्षकों* की धारणाएँ बदल जाती हैं। एक सामान्य आधार उभरता है, और इस प्रक्रिया में ग़लतियाँ करते हुए भी, विचारों को हँसी-खेल में स्वीकार करने और उनके आधार पर कुछ नया बनाने की सम्भावना बढ़ जाती है। जुड़ाव की गुणवत्ता और इस प्रकार खोजी गई कहानियों में भी बदलाव आता है।

कुछ नया खोजने के लिए प्रोत्साहन

एक प्रक्रिया के रूप में नाटक, सृजन की ओर बढ़ने के लिए विभिन्न उत्तेजनाओं का उपयोग करता है। श्रीनगर और शेख़ सराय, दोनों जगहों में हमने रचनात्मक प्रक्रिया पर बातचीत करने के लिए सवालों और लिखित सामग्री का इस्तेमाल किया। ये दोनों दूसरों के साथ हमारे अनुभवों के जुड़ाव पर मार्गदर्शित चिन्तन के लिए एक रूपरेखा तैयार कर सकते हैं। इससे पर्यावरण की समझ के प्रति जिज्ञासा/पूछताछ को बढ़ावा मिलता है और इससे परे जाकर सम्भावनाओं की कल्पना को आसान बना देता है। इस प्रकार की छानबीन से समूह को एक संवेदनाओं से भरा अनुभव होता है।

जो है, उस पर प्रतिक्रिया देने में सक्षम होने के लिए मौजूदा वास्तविकता को समझना और व्यक्तियों और समूहों के दैनिक जीवन पर पड़ने वाले इसके प्रभावों पर सवाल उठाना आवश्यक है। समझना और सवाल करना, अपने आप में, एक-दूसरे को मज़बूत करने के लिए बेहद ज़रूरी हैं। मुक्त सवाल भागीदारी को आसान बना देते हैं क्योंकि वे विविध दृष्टिकोणों और व्यक्तिगत अनुभवों के लिए अवसर पैदा करते हैं। निष्क्रिय रूप से कुछ ग्रहण करने की बजाय सक्रिय भागीदारी लोकतांत्रिक प्रथाओं की नींव रखती है। लोकतांत्रिक दायरे में बच्चों की भूमिकाएँ अलग नहीं हैं। उनके सवाल, विचार और कहानियाँ अक्सर अनसुनी रह जाती हैं – उनके दृष्टिकोणों को नकार दिया जाता है। उनके अनुभवों की गहराई को वयस्क लोग महत्त्व नहीं देते। इन कहानियों के प्रदर्शन से उनकी आवाज़ को विविध दर्शकों तक पहुँचाने के लिए एक मंच मिलता है।

हम कहानियों को उजागर करने की प्रक्रिया सवालों को तैयार करने के माध्यम से करते हैं। ये सवाल हमें अपनी ही कहानियों में अपना रास्ता खोजने में मदद करते हैं और ये ऐसे पुल हैं जो इन कहानियों को दूसरों की कहानियों से जोड़ते हैं – प्रतिध्वनियों, समानताओं, भिन्नताओं और असहमतियों के माध्यम से।

'दुनिया सबकी' पाठ्य एक प्रासंगिक सवाल उठाता है – *क्या दुनिया सभी की है?* प्रत्येक बच्चे का जवाब पूछताछ की एक और शृंखला की ओर ले जाता है – ''आप क्यों कहते हैं कि यह सबकी है/नहीं है? क्या आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ है जिसकी वजह से आप ऐसा महसूस करते हैं?''

कविता एक *प्रेरणा* बन जाती है, जिससे व्यक्तिगत कहानियों को उभरने का मौक़ा मिलता है। बच्चों के अनुभव विविध होते हैं और पाठ, अपने केन्द्रीय सवालों के साथ, सभी की पूछताछ की सम्भावना को जन्म देता है। उन्हीं सवालों से प्रेरित होकर, जब ये कहानियाँ साझा की जाती हैं तो समुदाय की भावना पैदा करती हैं। *समुदाय* की यह भावना क्यों उभरती है? इसके विपरीत दुनिया के प्रति अपनेपन की भावना महसूस न करने वाले अनुभवों में समानताएँ पैदा करने में मददगार बड़े तंत्र कौन-से हैं?

यह कविता इस कथन पर आधारित है – ''या तो दुनिया सबकी है, या नहीं किसी की, भाई''। यह या तो सभी के अधिकारों पर ज़ोर देने की कोशिश है (या तो दुनिया सबकी है), या यह कतई लोकतांत्रिक प्रक्रिया नहीं है (या नहीं किसी की भाई)।

सामूहिक स्थान और आवाज़

एक सामूहिक ढाँचा तभी बना रहता है, जब उसके सभी सदस्य सह-अस्तित्व के तरीक़ों के तत्वों को सुधारने, नकारने और बनाने के लिए अपनी आवाज़ें जोड़ सकते हों। अगर किसी व्यवस्था में किसी एक समूह की आवाज़ों और अभिव्यक्तियों को दूसरों की तुलना में ज़्यादा चुप कराया जाता है, तो इसका मतलब है कि वह व्यवस्था समूह की इस धारणा से भटक रही है। लोकतांत्रिक आदर्श कोई मंज़िल नहीं है, बल्कि राज्य और उसके नागरिकों के बीच खींचा-तानी की एक सतत यात्रा

है। व्यवस्थागत मुद्दों और सामूहिकताओं के बीच यह खींचा-तानी प्रत्येक व्यक्ति के भीतर की जाँच-पड़ताल से उभरती है। यह पड़ताल वर्तमान वास्तविकता, भविष्य की सम्भावनाओं की कल्पना और इन भविष्यों की ओर यात्रा की परीक्षा है। इन अनेक सम्भावनाओं की अभिव्यक्ति संवाद करने, समानताएँ खोजने, आवाज़ उठाने और संघर्षों से गुज़रकर आगे बढ़ने की ओर ले जाती है। यह लोकतांत्रिक राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया भी है।

नाटक-आधारित पद्धतियाँ अपनी सीमाओं से आगे बढ़ने की लालसा पर टिकी होती हैं। कार्यशाला में साधारण-से-साधारण सांसारिक क्रियाओं को भी रचने में एक अनोखापन है। किसी काल्पनिक वॉश बेसिन के सामने, अपने हाथ में एक काल्पनिक ब्रश लिए हुए, एक नामौजूद नल से निकल रही पानी की काल्पनिक धार के साथ अपने दाँत माँजना इस सामूहिक स्थान में की जाने वाली सामान्य क्रिया नहीं है। किसी कार्य को पूरा करने की विधि की शब्दावली अपने साथ एक चुनौती लाती है। चुनौती केवल व्यक्तिगत सीमाओं को बढ़ाने की नहीं है, बल्कि सामूहिक रूप से ऐसा करने की इच्छा में भी है। अपने प्रयत्नों को बढ़ाने की चुनौती न केवल समूह के लिए है बल्कि सुगमकर्ता के लिए भी है। उन्हें इस पूरे प्रवाह में ख़ुद को मिली अधिकार की स्थिति को सही तरह पहचानने और एक ऐसा स्थान बनाने की ज़रूरत है जहाँ समूह व्यक्तिगत और सामूहिक, दोनों तरह से पनप सके। सुगमकर्ता को चाहिए कि वे कोमल आवाज़ों को अभिव्यक्ति के लिए प्रोत्साहित करें। यह सत्ता के पदों पर बैठे लोगों से इस अपेक्षा की सम्भावना को पुष्ट करता है कि वे सामूहिक विकास के ऐसे अवसर पैदा करें जहाँ सभी की आवाज़ सुनी जाती है। इस प्रकार, पाठ में अकबर की आवाज़ सुगमकर्ता के लिए एक हिदायत के रूप में सामने आती है।

मंच पर और मंच से परे

अकबर और बीरबल के बीच का संवाद दो बिल्कुल अलग भौगोलिक क्षेत्रों में कई व्यक्तियों, समूहों और समाजों के बीच एक बहुत बड़ा आदान-प्रदान बन जाता है, जिससे परिवर्तन की कई अलग-अलग सम्भावनाएँ पैदा होती हैं। श्रीनगर और शेख़ सराय, दोनों स्थानों में नाटकों की अन्तिम प्रस्तुति के लिए प्रतिभागियों के माता-पिता और साथी बड़ी संख्या में आए। दर्शकों और कलाकारों, दोनों के लिए यह मूल्यांकन का क्षण है। कलाकार अपनी अभी तक अनकही कहानियों को अभिव्यक्त करने में, और दर्शक अपने परिचितों को उनकी अनसुनी आवाज़ों को साझा करते हुए देखने में विश्वास की एक छलाँग लगाते हैं। दर्शक और कलाकार, दोनों मंच पर सामने आने वाली कहानियों पर विश्वास करने के एक अनकहे समझौते में प्रवेश करते हैं। वे दोनों अविश्वास के इस निलम्बित क्षण में नई वास्तविकताओं की सम्भावनाओं की खोज करते हैं। इस आदान-प्रदान में दोनों सूक्ष्म, कभी-कभी अगोचर, रूप से बदल जाते हैं। यह एक लोकतांत्रिक वार्ता है जो प्रगति पर है।

सामुदायिक पुस्तकालय परियोजना में एक माँ ने अपनी बेटी को पहली बार मंच पर देखा था। जब माँ ने अपनी बेटी को वे लैंगिक भूमिकाएँ निभाते हुए देखा जिसकी अपेक्षा उससे (बेटी से) की जाती है तो वे आत्मनिरीक्षण करते हुए वापस गईं। दिल्ली पब्लिक स्कूल में, कई विद्यार्थियों ने दादागिरी की कहानी के साथ भावनात्मक जुड़ाव की बात कही, जो बहिष्कार का एक और रूप है और सत्ता व ताक़त में असमानताओं का प्रदर्शन है। दोनों कार्यशालाओं में बच्चों ने अपनी कहानियों के साथ जुड़ने की यात्रा की और यह अनुभव किया कि वे उनसे कैसे प्रभावित हुए। इन कहानियों को साथ में कहने के लिए उन्होंने नाटक के प्रदर्शन की भाषा खोज ली थी। उन्होंने मंच पर अलग-अलग कहानियों को, अलग-अलग वास्तविकताओं को जीने की इच्छा व्यक्त की थी।

निष्कर्ष

नागरिक होने का कार्य मतदान के अधिकार से शुरू नहीं होता है। इसकी शुरुआत प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक जीवन और इन अनुभवों के साथ उनके जुड़ाव से होती है। अपनी पहचान की सचेत जाँच और उनकी बदौलत बनने वाली एकल कहानियाँ सक्रिय नागरिकता की शुरुआत है। बातचीत और शब्द अक्सर इस प्रक्रिया को शुरू करने के लिए पर्याप्त नहीं होते हैं। बच्चे, जो अपनी पहचान बना रहे होते हैं, नाटक के माध्यम से पहले ही इस खोज में शामिल हो चुके हैं। वे नाटक के प्रदर्शन के माध्यम से जटिल वास्तविकताओं का अर्थ समझ पाते हैं। बच्चे की दुनिया में, कहानियाँ गतिशील होती हैं, और उन्हें बदलते रहना सम्भव होता है। नाटक-आधारित पद्धतियाँ खेल और मार्गदर्शित खोज का उपयोग ऐसे उपकरणों के रूप में करती हैं जिनसे बच्चों को एकल कहानियों के मुखौटे के परे देखने में मदद मिल सके। कहानियाँ रचने की प्रक्रिया अनेक दृष्टिकोणों को प्रकट करती है। प्रदर्शन के माध्यम से विचारों को मंच पर सक्रिय किया जाता है, जिससे कलाकारों को रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में सुविचारित कार्रवाई की सम्भावनाओं की कल्पना करने में मदद मिलती है। यह क्रिया वांछित वास्तविकता को आकार देने की दिशा में पहला क़दम है।

संयुक्ता साहा एप्लाइड थिएटर की कलाकार और आगाज़ थिएटर ट्रस्ट की संस्थापक हैं। वे रंगमंच, सक्रियतावाद व मानसिक स्वास्थ्य और ख़ुशहाली के बीच के सम्बन्ध को समझने की जिज्ञासा रखती हैं। उनसे sanyukta@aagaaz-theatre.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

देविका बेदी दिल्ली में रहने वाली कला शिक्षिका और सुगमकर्ता हैं। वे सामुदायिक और शैक्षिक परिवेशों में बच्चों और युवाओं के साथ काम करती हैं। वर्तमान में वे यह समझने की कोशिश में है कि स्वयं के बारे में और बेहतर ढंग से जागरूक होने के लिए विविध क्षेत्रों में कला का उपयोग कैसे किया जा सकता है, जिससे कि और अधिक सुविचारित और जागरूक काम किए जा सकें। उनसे devika@aagaaztheatre.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

स्कूल में सक्रिय नागरिकता

सुमन जोशी

पिछला साल पूरे विश्व के लिए अभूतपूर्व रहा। *कोविड-19* महामारी के कारण न केवल लाखों जानें गईं बल्कि इसने सामान्य जीवन पर भी कहर बरपाया है। जैसा कि इस रिपोर्ट[1] से पता चलता है, इस व्यवधान ने गरीब वर्गों को बड़ी बुरी तरह से प्रभावित किया। अमीरों और वंचितों के बीच पहले से ही मौजूद चौड़ी खाई को और भी गहरा कर दिया। जिस अन्य क्षेत्र में इस आपदा का तीव्र प्रभाव महसूस किया गया है, वह शिक्षा का क्षेत्र है, जहाँ बहुत थोड़े-से लोग ऐसे हैं जिनके पास इंटरनेट और ऑनलाइन कक्षाओं की सुविधा है लेकिन बड़ी तादाद ऐसे लोगों की है जिनका पूरा साल ही नष्ट हो गया है।[2]

माना कि यह एक अभूतपूर्व स्थिति थी, लेकिन इस आपदा से भला हमें कौन-सी चीज़ बचा सकती थी? हम क्या बेहतर करें कि अगर फिर से ऐसी स्थिति का सामना करना पड़े तो वही अन्याय दुबारा न हो?

इन सवालों के स्पष्ट जवाब तो यही हैं कि राज्य की क्षमता तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में किए जाने वाले निवेश में सुधार होना चाहिए। लेकिन अगर स्थिति को बदलने वाले एक समाधान की बात करना हो तो वह है, सक्रिय नागरिकता की अवधारणा। सक्रिय नागरिकता क्या है और इसके लिए कौन-सी बातें आवश्यक हैं?

लोकतंत्र के व्यापक और गहन होने के साथ, दुनिया भर से मिलने वाला आम सबक़ यही है कि खुद नागरिक, और नागरिक मामलों में उनकी भागीदारी के स्तर इस बात को सीधे तौर पर प्रभावित करेंगे कि हमारा लोकतंत्र कैसा होगा। अर्थात, लोकतंत्र की सफलता के लिए हमें जागरूक और सक्रिय नागरिकों की आवश्यकता है।[3] सक्रिय नागरिकता इस बात पर आधारित होती है कि नागरिकों को राज्य पर दावे करने के लिए अपने माध्यम व साधनों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। अत्यन्त बुनियादी स्तर पर देखा जाए तो इसमें एक गणतंत्र के रूप में लोकतंत्र की समझ, संविधान की प्रधानता और हमारे संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकार और नीति-निर्देशक सिद्धान्त शामिल हैं। आप कह सकते हैं कि ये तो प्राथमिक अवधारणाएँ हैं, लेकिन आप बस कुछ लोगों से पूछकर देखिए कि स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस में क्या अन्तर है और आपको जो जवाब मिलेंगे, वे आपको हैरान कर देंगे!

यहाँ उन बुनियादों को समझना मददगार होगा जिन पर आधुनिक लोकतंत्र खड़े होते हैं, अर्थात चुनावी भागीदारी, नागरिक विरोध और राज्य पर दावे करना। सामान्य रूप से हम इन्हीं तरीकों से नागरिकों के रूप में अपनी भागीदारी दर्ज करते हैं। चुनावों के शोर को देखते हुए चुनावी भागीदारी अपने आप आ जाती है और विरोध प्रदर्शन भी काफ़ी आम हैं। लेकिन उन बुनियादी सुविधाओं के लिए दावे करना जो एक राज्य/सरकार प्रदान करने के लिए बाध्य है, ऐसी चीज़ है जिस पर नागरिकों का नियंत्रण नहीं रह गया है। इसमें सक्रिय नागरिकता का चौथा तत्व जोड़ने से हमें राज्य पर दावा करने की बुनियादी बात पर फिर नियंत्रण हासिल करने में मदद मिल सकती है, जिसे आसान शब्दों में यूँ कहा जा सकता है कि सरकार से उन चीज़ों को देने की माँग करना जो नागरिक और राज्य के सम्बन्धों की मूल प्रकृति के तहत, उसके लिए अनिवार्य हैं।

संक्षेप में कहें तो एक सक्रिय नागरिक कानून का पालन करने वाले के रूप में सभी ज़रूरतों को पूरा करने के अलावा, एक जागरूक, भागीदार नागरिक भी है, जो शासन के प्रबन्धन में साथी नागरिकों, सांसदों-विधायकों और स्थानीय सरकारों के साथ काम कर रहा है। उदाहरण के लिए, वॉर्ड अधिकारियों और स्थानीय निगमों के साथ काम करने वाले नागरिकों के प्रयासों की बदौलत बेंगलूरु की झीलें गन्दे इलाक़ों से तब्दील होकर शान्तिपूर्ण अभयारण्य हो गई हैं।

अपने लोकतंत्र को समझना

अधिकारों और दावों की लड़ाई में, नागरिक अक्सर खुद को हारा हुआ महसूस करते हैं क्योंकि वे यह नहीं समझ पाते कि राज्य की मशीनरी कैसे काम करती है। परिणामस्वरूप, अत्यावश्यक सेवाओं को समझना और उनके लिए लड़ना एक दूर का सपना बनकर रह जाता है। इसलिए, अपने लोकतंत्र के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को आत्मसात करने में हमारी मदद करने के लिए शिक्षा की यह प्रक्रिया बुनियादी स्तर पर शुरू होनी चाहिए। इन्हें बुनियादी स्तर पर सामने लाने का क्या महत्त्व है? इससे किन समस्याओं का समाधान होगा?

अधिकारों के प्रति जागरूकता

बुनियादी स्तर पर देखा जाए तो यह अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाने में नागरिकों की मदद करेगा। जागरूकता बदलाव की पहली सीढ़ी है। जब विद्यार्थी जागरूक होते हैं, तभी वे उन स्थितियों की पहचान कर सकते हैं जो आदर्श नहीं हैं। उदाहरण के लिए, जब विद्यार्थियों को पता चलता है कि राज्य कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए बाध्य है, तभी वे इस बात पर ध्यान देना शुरू करेंगे कि स्थानीय पुलिस उनके समुदायों में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए कर्तव्यबद्ध है। बच्चे होने के नाते उनके लिए यह तो सम्भव नहीं कि वे पुलिस स्टेशन में जाकर कानून और व्यवस्था लागू करने की माँग करें, लेकिन वे अपने साथियों को प्रभावित करने और उनमें जागरूकता फैलाने में अवश्य सक्षम होंगे।

सामाजिक मुद्दों के बारे में जागरूकता

राज्य, बाज़ार और समाज आधुनिक लोकतंत्र के तीन स्तम्भ हैं। रघुराम राजन अपनी पुस्तक, *द थर्ड पिलर* में, तीसरे स्तम्भ, अर्थात समाज को मज़बूत करने की वकालत करते हैं। राज्य की विफलता के कारण पिछले कुछ दशकों से समाज कमज़ोर होता जा रहा है; इसके अलावा कुछ कारण और भी हैं जैसे आर्थिक रूप से सम्पन्न होने पर नागरिक राज्य से माँग करना छोड़ देते हैं और वे सामान्य रूप से भी इन बातों के प्रति उदासीन हैं। सक्रिय नागरिकता इस तीसरे स्तम्भ को मज़बूत करने और समतावादी समाज की दिशा में वृद्धिशील परिवर्तन करने में भी मदद कर सकती है। उदाहरण के लिए, भले ही राज्य के पास जाति के आधार पर भेदभाव से निपटने के लिए एक नियामक ढाँचा हो, लेकिन यह भी उतना ही ज़रूरी है कि समाज भी इन मामलों में सक्रिय रूप से भूमिका निभाए। सामाजिक मुद्दों पर सम्वाद और जागरूकता अभियानों के माध्यम से सक्रिय नागरिकता सर्वाधिक प्रभावी और सर्वश्रेष्ठ तरीका है जिसकी सहायता से बच्चों को जागरूक और सक्रिय नागरिकों के रूप में बढ़ना सिखाया जा सकता है।

समाधान खोजना

शासन संरचनाओं, स्थानीय सरकारों और ढाँचों को समझने से विद्यार्थियों में समाधान ढूँढ़ने की मानसिकता पैदा होगी। उदाहरण के लिए, वॉर्ड-स्तरीय समितियों और उनके कार्य करने के तरीकों के बारे में जागरूक होने से विद्यार्थियों को यह समझने में मदद मिलेगी कि सरकारों तक पहुँचा जा सकता है और वे जवाबदेह भी हैं। वे नए-नए समाधान सुझा सकते हैं जिनसे विशिष्ट स्थानीय समस्याओं का समाधान हो सकेगा और अपने देश की विविधता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि हमें वाकई एकदम स्थानीय समाधानों की ही आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन एक ऐसा क्षेत्र है जो बेहद स्थानीय है और विद्यार्थी अपने आस-पड़ोस के सन्दर्भ में इससे निपटने के तरीक़े सुझा सकते हैं।

स्कूल में नागरिकता पढ़ाना

क्या और *क्यों* को सम्बोधित करने के बाद, हमें *कैसे* के बारे में बात करनी चाहिए : आख़िर लोकतंत्र सहभागी नागरिकों पर ही तो निर्भर करता है। गणित और भौतिकविज्ञान के मूल सिद्धान्तों को सीखने पर तो काफी ध्यान दिया जाता है, लेकिन क्या हम इस बात पर पर्याप्त ध्यान देते हैं कि बच्चों को नागरिकता कैसे सिखाई जाए? कक्षा में रुचि और भागीदारी कैसे पैदा की जाए? चूँकि कक्षा बड़े समाज का एक सूक्ष्म रूप है, इसलिए वहाँ उपयोग किए जाने वाले साधनों और विधियों पर सोच-विचार करना उपयोगी होगा। यहाँ कुछ ऐसे तरीक़े दिए गए हैं, जिनसे हम कक्षाओं में सक्रिय नागरिकता की भावना पैदा कर सकते हैं।

दैनिक समाचार और वाद-विवाद

वैसे तो कक्षा शिक्षण का उपयोग नागरिकता, स्थानीय सरकारों और कानून बनाने की अवधारणाओं पर चर्चा करने के लिए किया जा सकता है, लेकिन क्या हम स्कूल की प्रातःकालीन सभा में प्रतिदिन समाचारों की सुर्खियाँ पढ़ने और समाचारों पर दस मिनट चर्चा करने की गतिविधि को शामिल कर सकते हैं? यदि हर सप्ताह समाचारों पर गहरी चर्चा करके, उन्हें कक्षा में सीखी जा रही अवधारणाओं से जोड़ा जाए तो विद्यार्थियों को इन्हें बेहतर ढंग से समझने में मदद मिल सकती है। यह साप्ताहिक अभ्यास विद्यार्थियों के बीच वाद-विवाद के रूप में हो सकता है, जिसमें वे महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर अपना-अपना पक्ष रखें। उदाहरण के लिए, कृषि कानून और इसमें शामिल मुद्दों पर बहस करना।

संसदीय प्रक्रियाओं को समझना

स्कूल स्तर के चुनाव के बाद बहस और असहमति की संस्कृति से परिचित कराने के लिए एक युवा संसद का आयोजन करने से बच्चों को संसदीय प्रणाली को समझाने में मदद मिलेगी। जिस संस्कृति में प्रश्न पूछने को आसानी-से प्रोत्साहित नहीं किया जाता, वहाँ रचनात्मक बहस और चर्चा को प्रोत्साहित करना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे बच्चों को सौदेबाज़ी, समानुभूति और समझौते के मूल्यों के बारे में महत्त्वपूर्ण सबक़ मिलेगा जो नीति-निर्माण और सार्वजनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण कौशल हैं। यह तो हुई लोकतंत्र को अमल में लाने की बात, लेकिन जिस बात को हमें सुदृढ़ करना और दोहराना चाहिए, वह यह है कि यह सब एक संविधान के ढाँचे के भीतर होता है। अगर स्कूल एक बड़ा चार्टर तैयार करें जो एक संविधान की तरह काम करे तो इससे काफ़ी मदद मिलेगी। इससे इस तथ्य को भी बल

मिलेगा कि एक संवैधानिक गणतंत्र ही आधुनिक लोकतंत्रों को राजशाही से अलग करता है।

लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और अवधारणाओं को समझना

स्कूल, प्रत्येक बड़े चुनाव से पहले, वयस्क मताधिकार से सम्बन्धित पहलुओं को दोहरा सकते हैं और उनकी समीक्षा कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, वयस्क मताधिकार का इतिहास केवल '18 वर्ष से ऊपर के सभी नागरिकों...' के रूप में नहीं पढ़ाया जाना चाहिए, बल्कि दुनिया भर के स्वतंत्रता संग्रामों या मताधिकार आन्दोलनों के ऐतिहासिक सन्दर्भ के साथ पढ़ाया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम पूरा करने की व्यावहारिकताएँ और दबाव इसे कठिन बना सकते हैं। सभी विषयों के साझा सूत्रों को जोड़ने के लिए हम हर सप्ताह एक समय निर्धारित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, मताधिकार आन्दोलनों के अध्ययन को लोकतंत्र और लैंगिक अधिकारों की जागरूकता वाले पाठों के साथ जोड़ा जा सकता है। इसी तरह, भूगोल में भोजन की पद्धतियों वाले पाठों को विविधता में एकता के विषयों के साथ जोड़ा जा सकता है।

लोकतंत्र को वास्तव में गहरा करने के लिए और अन्तिम व्यक्ति तक इसका लाभ पहुँचाने के लिए, यह अनिवार्य है कि हम 'बच्चों को शुरू से ही ये बातें सिखाने और उन्हें विकसित होता हुआ देखने' वाले दृष्टिकोण का पालन करें और अपने बच्चों के लिए नागरिकता के पाठों में निवेश करें। ऐसे समय में जब दुनिया ने शासन के बढ़ते केन्द्रीकरण को देखा है, नागरिकों के रूप में हमें इस पहल को अपने हाथ में लेने की ज़रूरत है। यह हम पर निर्भर है कि हम एक नया पन्ना पलटें ताकि हम उस सपने को साकार कर सकें जो हमने 70 साल पहले अपने लिए देखा था।

1 https://www.livemint.com/news/india/what-2020-did-to-india-s-inequality-11610982667419.html

2 (https://indianexpress.com/article/india/delhi-survey-school-education-govt-facilities-computers-7146867/)

3 (https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/a-leaf-from-stacey-abrams-book/article33156100.ecex)

सुमन जोशी वर्तमान में तक्षशिला इंस्टीट्यूशन, बेंगलूरु में प्रोग्राम मैनेजर हैं। उन्होंने अपने कैरियर में विभिन्न क्षेत्रों में काम किया है – मानव संसाधन से लेकर प्रक्रिया और गुणवत्ता तक। आजकल वे सार्वजनिक नीति को लेकर बहुत उत्साहित रहती हैं। वे एक उत्साही धावक और पाठक हैं तथा एक अच्छी लेखिका बनने की यात्रा पर हैं। सुमन से sujo2906@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

पाठ्यक्रम निर्माताओं और शिक्षकों को चाहिए कि वे बच्चों को भविष्य के नागरिक के रूप में देखने की बजाय वर्तमान के नागरिक के रूप में देखें (हाओ और कोवेल, 2009)। अनुभवों को इस तरह से डिज़ाइन किया जाना चाहिए कि बच्चों को यह देखने में मदद मिल सके कि वे अपने और अपने समुदायों के जीवन में बदलाव लाने के लिए अभी क्या कर सकते हैं।

- ऋचा पाण्डे, कहानियों के माध्यम से सक्रिय नागरिकता का विकास करना, पेज 92

रचनात्मक कार्यशालाओं के माध्यम से नागरिकता

उमाशंकर पेरिओडी

सुरपुर ज़िले में तीन दिवसीय रचनात्मकता कार्यशाला की योजना बनाई गई, जहाँ बच्चे मौज़-मस्ती के साथ-साथ कुछ सीखें और रचनात्मक कार्य करें। इसका आयोजन करना हमारे लिए काफ़ी बड़ी चुनौती थी। हमने योजना बनाई कि हम कार्यशाला में बच्चों के साथ तीन प्रमुख कार्य करेंगे। पहला, उन्हें और अधिक ज़िम्मेदार बनाना; दूसरा, समुदाय/सार्वजनिक सम्पत्ति का उपयोग संवेदनशीलता के साथ करना और तीसरा, सम्प्रेषण और समस्या-समाधान के लिए मुख्य रूप से संवाद का उपयोग करना। लेकिन ऐसा करने के पहले यह ज़रूरी था कि हम उन्हें यह महसूस कराएँ कि हम सभी *समान* हैं।

समान महसूस करना

हमने महसूस किया कि बच्चों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे ख़ुद को सबके समान महसूस करें, यह महसूस करें कि उनकी बात सुनी जाती है, उस पर ध्यान दिया जाता है और उनके बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाता है। इसकी शुरुआत करने के लिए, हमने उन्हें फ़र्श पर गोल घेरे में बैठाना शुरू किया ताकि सभी बच्चे नज़र आएँ और इससे बच्चों को यह लगता है कि सभी समान हैं। सुगमकर्ता भी उनके साथ घेरे में बैठते हैं। कोई पीछे नहीं बैठता यानी बैकबेंचर नहीं होता। कोई अगुआ नहीं होता। सभी सामने बैठे होते हैं। जो बोलता है वह नेतृत्व करता है और सभी को बोलने का मौक़ा मिलता है।

इसके अलावा कुछ अन्य नियम भी बनाए गए : जब कोई बोल रहा हो तो बाक़ी लोगों को सुनना होगा और उन्हें तभी बोलने को मिलेगा जब वह व्यक्ति अपनी बात कह चुके। जब कोई बोल रहा हो तो दूसरों को उस व्यक्ति की ओर देखना होगा। यदि बहुत-से लोग बोलना चाहते हों तो उन्हें हाथ उठाना चाहिए और सुगमकर्ता प्रत्येक को बारी-बारी से बोलने का अवसर देंगे।

बैठने की इस प्रकार की व्यवस्था का मुख्य लाभ था *दूसरों की बात सुनना* । जब किसी को कुछ कहना होता या कोई घोषणा करनी होती तो ऐसा गोल घेरे में ही किया जाता। धीरे-धीरे, रुकावटें कम से कमतर होती गईं। जो बात बार-बार दोहराई जाती थी वह यह थी कि – *जो व्यक्ति बोल रहा है, उसे अपनी बात पूरी करने दो* । जब समूह को लगता कि किसी व्यक्ति ने अपनी बात नहीं कही है तो बाकी सदस्य उस व्यक्ति से अपने विचार रखने को कहते। इस तरह सभी को बोलने का मौक़ा मिलता और उनके मन में जो सबसे महत्त्वपूर्ण भावना आती वह यह थी कि दूसरे लोग उन्हें ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

ज़िम्मेदार होना

शुरुआत में तो कार्यशाला में काफ़ी अव्यवस्था देखने में आई। बच्चे चीज़ों का इस्तेमाल करते और उन्हें इधर-उधर छोड़कर चले जाते। वे अपना बैग कहीं भी फेंक देते थे। हम उन्हें डाँट नहीं सकते थे और उन्हें प्यार से समझाने का कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

फिर हमने सर्कल टाइम (गोल घेरे में बैठने के दौरान) में इस मुद्दे पर बात की। चर्चा इस बात पर की गई कि अगर वे चीज़ों को इधर-उधर फेंक देते हैं तो क्या होता है, किसी जगह को व्यवस्थित और साफ़-सुथरा क्यों रखना चाहिए, ऐसा न करने से दूसरों को किस प्रकार की असुविधा हो सकती है और हमें कैसे ज़िम्मेदार बनना चाहिए। हमें हर काम को ख़ुद महसूस करके करना चाहिए, इसलिए नहीं कि किसी और ने हमसे ऐसा करने के लिए कहा है।

बच्चे इस बात को समझ गए और उन वस्तुओं के प्रति सचेत रहने लगे जिनका उपयोग वे करते थे। वे कक्षा के बाहर अपनी चप्पलें एक लाइन में रखने लगे, पेंट ब्रशों का इस्तेमाल करने के बाद उन्हें साफ़ करके रखने लगे, ब्लैकबोर्ड साफ़ करने लगे, समय पर आने लगे और अपना काम समय पर ख़त्म करने लगे। धीरे-धीरे, एक के बाद एक, कामों के प्रति उनका नज़रिया बदलने लगा।

शुरुआत में उन्हें एक-दूसरे को लेकर काफ़ी शिकायतें थीं। लेकिन जैसे-जैसे बच्चे ज़िम्मेदार होने लगे, शिकायतें कम होती गईं। वे एक-दूसरे के साथ बेहतर व्यवहार करने लगे।

सामुदायिक संसाधनों की रक्षा करना

हमने देखा कि सामान्यतः बच्चे सार्वजनिक संसाधनों के प्रति लापरवाही दिखाते थे। वे पानी पीकर गिलास को अपनी जगह पर नहीं रखते थे, खेल सामग्री का उपयोग करके उन्हें वापस नहीं रखते थे और शौचालय भी साफ़ नहीं रखते थे। हमने इस पर लम्बी चर्चा की कि कैसे हमें सार्वजनिक सम्पत्ति की

देखभाल करनी ही चाहिए। ऐसा लगा कि बच्चों को यह बात समझ में आने लगी थी कि किसी जगह का उपयोग करने के बाद उसे दूसरों के इस्तेमाल के लिए साफ़-सुथरा रखना चाहिए। हम बार-बार यही सवाल पूछते : क्या हमने उस जगह को ऐसा छोड़ा है कि दूसरे लोग उसका इस्तेमाल कर सकें? इस काम में हमें काफ़ी मेहनत करनी पड़ी। बच्चे या तो समझते नहीं थे या उन्हें याद ही नहीं रहता था। लेकिन धीरे-धीरे वे ऐसा करने लगे। इस सम्बन्ध में सबसे बड़ा सुधार तब देखने में आया, जब बच्चों ने एक-दूसरे को यह बताना शुरू किया कि उन्हें क्या करना चाहिए। बच्चों ने सार्वजनिक स्थानों और सामुदायिक सुविधाओं की देखभाल करना सीखा।

बातचीत से मसले सुलझाना

बच्चों के बीच लड़ाई-झगड़ा एक आम बात थी। वे छोटी-छोटी बातों पर झगड़ते थे। कभी-कभी छोटी-छोटी बातों पर बड़े-बड़े झगड़े हो जाते थे। कभी-कभी तो बच्चे शिक्षकों से भी झगड़ते थे। हम इस बारे में कुछ करना चाहते थे क्योंकि जब हम उनसे न लड़ने का अनुरोध करते तो वे मान तो जाते थे लेकिन उसके तुरन्त बाद अगर उकसाने वाली कोई बात हो जाती तो वे फिर लड़ पड़ते थे।

फिर हमने गोल घेरे में हर मसले के बारे में बात करने की प्रक्रिया शुरू की। बच्चे ये बातें सुनते और गोल घेरे में लिए गए फ़ैसले का सख़्ती से पालन किया जाता। सबकी राय सुनी जाती और फिर सबकी सहमति से फ़ैसला लिया जाता। इसका पालन सभी को करना होता था। गोल घेरे में जो भी समस्या, झगड़ा या मुद्दा लाया जाता; उस पर चर्चा करके समाधान ढूँढ़ा जाता। वहाँ ज़ोर *संवाद* पर दिया जाता था।

इसका पालन करना बच्चों के लिए सबसे कठिन काम था। जब कोई विवाद होता तो वे तुरन्त लड़-झगड़कर उसका समाधान कर लेते। लेकिन जब हमने लगातार संवाद पर ज़ोर दिया तो बच्चों ने झगड़ने की बजाय अनिच्छा से एक-दूसरे के साथ बात करना शुरू किया। लेकिन कुछ समय बाद धीरे-धीरे बच्चे संवाद का प्रयोग समस्या-समाधान की एक विधि के रूप में करने लगे। बाद में ऐसा हुआ कि जब भी दो बच्चे बात करना भूलकर आपस में झगड़ने लगते तो दूसरे बच्चे बीच-बचाव करके उन्हें अपनी समस्या का हल बातचीत के माध्यम से करने के लिए राज़ी करते। हम पूरी तरह से तो नहीं लेकिन कुछ हद तक बच्चों को बातचीत के लिए राज़ी करने में सफल रहे।

हमने इन रचनात्मकता कार्यशालाओं को कई वर्षों तक चलाया। हम यह तो नहीं कह सकते कि हम सभी स्कूलों में पूरी तरह से सफल रहे। जिन स्कूलों में हमने थोड़े समय के लिए रचनात्मकता कार्यशालाएँ कीं, वहाँ यह तरीक़ा काम नहीं आया, लेकिन जिन स्कूलों में हम वापस गए और लगातार ऐसे सत्र आयोजित किए, वहाँ यह प्रक्रिया सफल रही, हालाँकि वहाँ भी पूरी तरह से ऐसा नहीं हुआ।

परिणाम

जिन स्कूलों में ये प्रक्रियाएँ कारगर रहीं, वहाँ हमने देखा कि बच्चों ने कुछ मानदण्डों का पालन किया जो उन्हें *ज़िम्मेदार नागरिक* बनाते हैं। सबके समान महसूस करना इनमें सबसे सरल था और एक बार क़ायल होने के बाद बच्चे इसका बहुत अच्छी तरह से पालन करते थे। गोल घेरे की अवधारणा कारगर रही क्योंकि बच्चों को इस तरह बैठना पसन्द था और गोले में बैठने वाले सभी बच्चों ने बोलना शुरू कर दिया। इस प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी दूसरों की राय सुनना। हमें लगता है कि बच्चों में इस आदत का विकास करने में हमें सबसे ज़्यादा सफलता मिली।

ज़िम्मेदार होना और सामुदायिक संसाधनों की रक्षा करना कुछ ऐसी बातें थीं जिन्हें बच्चे धीरे-धीरे ही समझ पाए और इनका पालन करने में कुछ हद तक सक्षम हुए। यहाँ मुख्य प्रेरक शक्ति अन्य बच्चे थे जो किसी के भूल जाने पर उन्हें आगाह कर देते थे। जिन्हें याद दिलाया जाता था, वे बिना किसी नाराज़गी के वह काम कर दिया करते थे। कार्यशालाओं में जो बात सबसे कठिन लगी वह थी बच्चों को संवाद की प्रक्रिया में शामिल करना। बच्चे इस प्रक्रिया का महत्त्व समझ ही नहीं पाए। हमने भी इस प्रक्रिया को लेकर काफ़ी संघर्ष किया। इस प्रकार हमारी कोशिश का सबसे कम प्रभावी पक्ष संवाद का रहा। हमें अभी इस पर पकड़ बनानी है।

रचनात्मकता कार्यशालाओं और नागरिकता शिक्षा का यह अनुभव हमारे लिए सीखने का एक बड़ा स्रोत था। नागरिकता की शिक्षा कम समय में नहीं दी जा सकती। इसे समय के साथ लगातार और बार-बार करना पड़ता है। अलग-अलग समूहों में अलग-अलग विचार/अवधारणाएँ कारगर होती हैं। कौन-सा तरीक़ा सफल होगा, कौन-सा नहीं, इसका कोई पैटर्न नहीं है। सुगमकर्ता प्रेरणा के मुख्य स्रोत होते हैं। यदि सुगमकर्ता किसी ऐसी चीज़ का पालन नहीं करते जिसकी वे वकालत कर रहे हैं तो वह काम नहीं करेगी। इसलिए, लगातार और अधिक समय तक बच्चों के साथ रहना, लोकतांत्रिक जीवन की इन धारणाओं का पालन करना, बच्चों को इनकी याद दिलाते रहना और अपने व्यवहार में इन्हें दिखाना – यही वह तरीक़ा है जिससे बच्चे भी इन बातों को आत्मसात करेंगे।

उमाशंकर पेरिओडी अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में कर्नाटक राज्य के प्रमुख के रूप में कार्यरत हैं। उन्हें विकास के क्षेत्र में तीस वर्षों से अधिक का अनुभव है। उन्होंने राष्ट्रीय साक्षरता अभियान के साथ-साथ बीआर हिल्स, कर्नाटक में जनजातीय शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक योगदान दिया है। वे ज़मीनी स्तर के कार्यकर्ताओं और प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों को प्रशिक्षण देते रहे हैं, जिसे वे 'नंगे पाँव शोध' की संज्ञा देते हैं। वे कर्नाटक राज्य प्रशिक्षक संस्था के संस्थापक सदस्य भी हैं। उनसे periodi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

FORM IV

Statement about ownership and other particulars about newspaper (Learning Curve) to be published in the first issue every year after the last day of February.

1. **Place of publication**: Azim Premji University, Survey No. 66, Burugunte Village, Bikkanahalli Main Road, Sarjapura, Bengaluru – 562125
2. **Periodicity of its publication**: Triannual
3. **Printer's name**: Manoj P
   Nationality: Indian
   Address: Azim Premji University, Survey No. 66, Burugunte Village, Bikkanahalli Main Road, Sarjapura, Bengaluru – 562125
4. **Publisher's name**: Manoj P
   Nationality: Indian
   Address: Azim Premji University, Survey No. 66, Burugunte Village, Bikkanahalli Main Road, Sarjapura, Bengaluru – 562125
5. **Editor's name**: Prema Raghunath
   Nationality: Indian
   Address: 2nd Floor, Geetalaya, # 71, 3rd Main Road, Gandhinagar, Adyar, Chennai 600020
6. **Name of the owner**: Azim Premji Foundation for Development
   Address: #134, Doddakannelli, Next to Wipro Corporate Office, Sarjapur Road, Bengaluru - 560035

I, Manoj P, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Date: 23rd April, 2021

Signature of Publisher

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व के पुराने अंक **http://azimpremjiuniversity.edu.in/Site Pages/resources-learing-curve.aspx** से डाउनलोड किए जा सकते हैं।

यह पत्रिका अँग्रेज़ी और कन्नड़ा में भी छपती एवं प्रकाशित होती है।

अपने सुझाव,टिप्पणियाँ, मत और अनुभव हमें इस ईमेल पते पर भेज सकते हैं :
learningcurve@apu.edu.in

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए
आदर्श प्रा.लि.,4 शिखरवार्ता, प्रेस काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल पिन 462 011 से मुद्रित

एवं अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125 से प्रकाशित
मुख्य सम्पादक : प्रेमा रघुनाथ

Work with us!

Azim Premji University

Faculty for Teacher Education

We invite candidates who resonate with the purpose of the University and are keen to contribute to the design and teaching of courses at our Undergraduate Teacher Education programme (B.Sc.B.Ed) to apply.

Qualifications Required:

- **M.Sc.**
  (Mathematics, Physics, Chemistry, Biology)
  or
  M.A.
  (English)
- **M.Ed**
- **NET qualification preferred**

write to *facultypositions @apu.edu.in*

azimpremjiuniversity.edu.in/SitePages/work-with-us-teacher-education.aspx

अगला अंक

खेल में सीखना-सिखाना

Azim Premji University
Survey No. 66, Burugunte Village,
Bikkanahalli Main Road, Sarjapura
Bengaluru, Karnataka – 562 125

080-6614 4900
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Facebook: /azimpremjiuniversity

Instagram: @azimpremjiuniv

Twitter: @azimpremjiuniv